प्रकाशकों का निवेदन।

श्रीयुत गोविन्द सखाराम सरदेसाई, बी. ए. का इतिहासविषयक अध्ययन सब लोगों पर प्रगट है। प्रथम उन्होंने मराठी में 'शालोपयोगी भारतवर्ष' नाम की एक पुस्तक लिखी, और उसके प्रत्येक संस्करण में कुछ सुधार किये। बम्बई के शिक्षा-विभाग द्वारा समय समय पर नियत की हुई कमेटी ने उस पुस्तक का भली भांति निरीक्षण करके जो सूचनाएं कीं उनका समावेश उसमें किया गया है। इसी तरह अनेक विद्वानों, अनुभवप्राप्त शिक्षकों, और अधिकारियों ने जो नई नई सूचनाएं कीं उनका भी स्वीकार किया गया है। इंग्लैण्ड के सुप्रसिद्ध विद्वान् ग्रन्थकार विन्सेन्ट स्मिथ ने सन् १९१० ई० में हिंदुस्थान के विद्यार्थियों के लिये "आक्सफोर्ड स्टूडेन्ट्स हिस्टरी ऑफ इंडिया" नामक एक बहुत उपयोगी पुस्तक प्रकाशित की। उसके तथा मास्डेन आदि के ग्रंथों के नूतन संस्करणों के आधार पर हमने दो विख्यात विद्वानों द्वारा अपने मराठी ग्रन्थ का संशोधन कराके उसमें अनेक उपयुक्त सुधार करवाए हैं। महाराष्ट्र में इस पुस्तक की उपयोगिता और प्रियता इसी एक बात से सिद्ध होती है कि, थोडे ही समय में, इसके दस संस्करण निकल चुके।

हिंदी जैसी राष्ट्र भाषा में ऐसी उत्तम, शिक्षादायक और लोकोपयोगी पुस्तक का अभाव बहुत दिनों से हमारे जी में खटक रहा था। इस लिये मराठी ग्रंथकार श्रीयुत सरदेसाई के अनुरोध से, उपर्युक्त अभाव को मिटाने के लिये, हमने अपनी मराठी पुस्तक का हिंदी अनुवाद प्रकाशित किया है। इस अनुवाद के सम्बन्ध में सिर्फ इतना ही कहना बस होगा कि, यह कार्य हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक पंडित माधवराव सप्रे, बी. ए. और पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी ने सम्पादित किया है। हमें आशा और विश्वास है कि, जिस तरह यह पुस्तक मराठी में लोकप्रिय हुई है, उसी तरह हिन्दी भाषा जानने वाले हमारे देशभाई भी इस हिन्दी ग्रन्थ की कदर करेंगे।

दामोदर सांवळाराम ऐण्ड कम्पनी।

हिंदी और बालबोध अक्षरों की सूची।

दुसरी बात यहांपर विदीत करना जरूर है के, बालबोध अक्षर का प्रसार हिंदीमें सुलभतासे होना, और राष्ट्रभाषा कर के हिंदी भाषाका अनुवाद महाराष्ट्रीयोंमें होना, इस लिये यह पुस्तकमें सब बालबोध अक्षरों का उपयोग किया है, और सर्व सामान्य हिंदी और मरेठी वाचकोंको लिये हिंदी और मरेठी अक्षरों में जहांपर थोडा फरक है उन अक्षरों की सूची नीचे दिई है। जिससे वांचकोंकों हिंदी और बालबोध अक्षरों की साम्यता का ज्ञान होवे.

हिंदी अक्षरों	बालबोध अक्षरों.
अ	अ
ख	ख
ग	ग
छ	छ
ज	ज
झ	झ
ड़	ड
ढ़	ढ
ण	ण
ल	ल
श	श
क्ष	क्ष

अनुक्रमणिका ।

प्रास्ताविक पाठ ।



१. भूगोलिक सिद्धान्त—हर देश की भूगोलिक स्थिति का परिणाम वहां के इतिहास पर हुआ करता है। इस लिये जब तक हिन्दुस्थान का भूगोल भली भांति समझ में न आ जायगा तब तक ऐतिहासिक घटनाओं का यथार्थ ज्ञान न होगा। यह भूगोल सम्बन्धी ज्ञान पुस्तक आदि से प्राप्त करना चाहिये। हिन्दुस्थान का इतिहास जानने के लिये कुछ मुख्य मुख्य भूगोलिक सिद्धान्तों का उल्लेख संक्षेप यहां किया जाता है:—

(१) यह देश एशिया के अन्य भूभागों से, पर्वत और समुद्र के कारण, बिलकूल अलग है। भीतर आने के लिये वायव्य दिशा की ओर सिर्फ एक या दो बडे कठिन मार्ग हैं।

(२) पहले समुद्र की यात्रा सुसाध्य न थी। इधर दो चार सौ वर्षों में हिन्दुस्थान के जलमार्ग खुल गए हैं।

(३) समुद्र के किनारे पर जो बंदर-स्थान हैं; वही इस देश में आने के द्वार हैं। पश्चिम-किनारे पर ऐसे द्वार बहुत से हैं। पूर्व-किनारे पर कोई अच्छे बन्दर-स्थान नहीं हैं।

(४) उपर्युक्त बातों के कारण आजकल दिल्ली से गजनी को जाने के लिये जितना समय लगता है उतने समय में बम्बई से लंदन को सहज जा सकते हैं।

(५) आवागमन के सुभीते के लिये प्राचीन समय के शहर बडी बडी नदियों के किनारे बसाए जाते थे। वर्तमान समय में रेलगाडी और जहाजों के कारण भिन्न भिन्न नये शहर और बन्दरस्थान प्रसिद्ध हो रहे हैं।

(६) खंभात की खाडी से महानदी के मुख तक, पूर्व-पश्चिम, बडे बडे पर्वत और वन हैं। इनके कारण इस देश के दो स्पष्ट और पृथक् भाग—उत्तर और दक्षिण—होगये हैं। प्राचीन समय में यह अरण्यप्रदेश बहुत दुर्गम था।

(७) उत्तर भाग में विस्तीर्ण मैदान है। वह सिन्धु और गंगा दो बडी नदियों तथा उनकी अनेक शाखाओं से व्याप्त है। पहले इसी भाग को "आर्या-

वर्त" कहते थे। इन नदियों के कारण पिशावर से कलकत्ते तक का सब प्रदेश बहुत मनोहर और उपजाऊ होगया है। इससे वहां की जन-स्थिति पर जो परिणाम हुआ है, वह अवश्य जानने योग्य है।

(८) उत्तर में हिमालय पर्वत और दक्षिण में हिन्दुमहासागर होने के कारण जलवृष्टि निश्चित होगई है। इससे कृषि ही यहां के लोगों का प्राचीन समय से मुख्य व्यवसाय होगया है। अन्य सब व्यवसाय इसी कृषि ही पर अवलम्बित हैं।

(९) अच्छी हवा, उपजाऊ भूमि और उद्योगी तथा बुद्धिमान् लोगों की बड़ी बड़ी बस्तियां होने के कारण प्राचीन समय में यहां अपार सम्पत्ति का संचय हुआ था; इसलिये बाहर के अनेक देशों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ। अनेक शास्त्रों और कलाओं का उदय भी पहले पहल यहीं हुआ।

(१०) पृथ्वी के भिन्न भिन्न प्रदेशों की आब हवा, फल, फूल, वनस्पति, पशु, पक्षी, खनिजसम्पत्ति आदि सब कुछ इस एकही देश में पाई जाती हैं।

२. स्थलनिर्देशः—मानवी व्यवहार को इतिहास कहते हैं। प्रत्येक व्यवहार में 'स्थल' (अर्थात् स्थान) और 'काल' (अर्थात् समय) ये बातें अवश्य होतीं हैं। इन दोनों बातों का जानना इतिहास पढनेवाले विद्यार्थियों को अत्यन्त आवश्यक है। इन बातों का यथार्थ ज्ञान न होने ही के कारण बहुतरों को इतिहास बिलकुल नीरस मालूम होता है। स्थल-निर्देश के लिये इस पुस्तक के साथ दो नकशे जोड दिये गये हैं। भारतीय काल से मुसलमानों के आगमन तक जो देश, राज्य आदि प्रसिद्ध हुए, उन सब का निर्देश प्राचीन नकशे में किया गया है। यह पुस्तक पढते समय जब किसी स्थान का नाम आवे तब उसे नकशे में देख लेना चाहिये। लडाई और युद्धों के विषय में नदी, पर्वत, किले आदि का विशेष परिणाम होता है। इस लिये नकशा देख कर इन बातों को भान्ति समझे बिना आगे न बढना चाहिये। इससे यह विषय अच्छी तरह समज में आ जायगा।

३. कालविज्ञानः—इसाई सन् का आरम्भ ईसा (क्राइस्ट) के जन्म से, अर्थात् सन् १ ई० से होता है। इसाई शतक सन् १०० में पूरा होता है।

इस प्रकार सन् १००० ई० में दसवा शतक और १९०० ई० में उन्नीसव शतक पूरा हुआ। सन् १००१ ई० से ग्यारहवाँ और १९०१ से बीसवां शतक आरम्भ हुआ। ये शतक ध्यान में रखते समय बहुत से विद्यार्थी भूल करते हैं; इस लिये इन बातों को ठीक ठीक जान लेना चाहिये।

विद्यार्थियों को उचित है कि, अपने देश का इतिहास पढते समय मुख्य घटनाओं का ठीक समय सदा ध्यान में रखें। यदि यह न हो सके तो स्थूल मान से उन घटनाओं के सिर्फ शतक ही ध्यान में रख लेना चाहिये; जैसे; पाणिनि–ईसाई सन् के पहले अठवां शतक, गोतम बुद्ध—ई० स० के पहले छठां शतक, सिकन्दर बादशाह की सवारी –ई० स० के पहले चौथा शतक, अशोक–ई० स० के पहले तीसरा शतक, कनिष्क--ईसा का पहला शतक, समुद्रगुप्त--ईसा का चौथा शतक, महम्मद पैगम्बर--ईसा का सातवां शतक, शंकराचार्य–ईसा का नववां शतक। इसी तरह—

स. १००० इ०–महमूद गजनवी; स, १२०० इ०–महम्मद गोरी;
,, १३०० इ०–अलाउद्दीन खिलजी; स. १४०० इ०–तैमूरलंग;
,, १५०० इ०–बाबर, अल्बुकर्क; स. १६०० इ० अकबर, एलिजाबेथ;
,, १७०० इ०–औरंगजेब, शिवाजी; स. १८०० इ०–बाजीराव, वेलस्ली;

इत्यादि प्रसिद्ध पुरुषों के नाम पर से कालमान ध्यान में रखना चाहिए। जैसे थर्मामीटर को देख कर उष्णता का अंश जाना जाता है; वैसे ही कालमापन यंत्र में शून्य अंश पर ईसा का जन्म मान कर, उसके पहले और उसके बाद बडी बडी घटनाओं और प्रसिद्ध पुरुषों के नाम ज्ञानचक्षु से देखने और तुरंत बताने का अभ्यास करना चाहिये। ऐसा करने से इतिहास मनोरंजक और सहज प्रतीत होगा; नहीं तो सिर्फ सन् रट लेने से वह अत्यन्त नीरस और निरुपयोगी हो जायगा।

४. लोक-संख्या और क्षेत्रफलः—

देशों के विभाग.	क्षेत्रफल-चो. मी.	लोकसंख्या.
ग्रेटब्रिटन-आयर्लंड	१ लाख २१ हजार	४ करोड १६ ला.
अन्य ब्रिटिश प्रदेश	१ करोड ११ लाख	३५ करोड २६ ला.
कुल ब्रिटिश साम्राज्य*	१ करोड १२ लाख	३९ करोड ४२ ला.
ब्रिटिश हिंदुस्थान	१० लाख ८७ ह.	२३ करोड १८ ला.
देशी रियासतें.	६ लाख ७९ हजार	६ करोड २४ ला.
कुल हिंदुस्थान+	१७ लाख ६६ हजार	२९ करोड ४३ ला.

* सम्पूर्ण पृथ्वी उपर के स्थल का छठा भाग और लोकसंख्या का चौथा भाग ब्रिटिश सत्ता के अधीन है।

\+ हिन्दुस्थान की लोकसंख्या में १४ करोड ९९ लाख पुरुष और १४ करोड ४४ लाख स्त्रियां हैं। शहरों में रहनेवालों की संख्या २ करोड ९२ लाख, और खेडुतों में रहनेवालों की संख्या २६ करोड ५१ लाख है। इस देश में कुल २१४८ शहर और ७२८६०५ गांव हैं। कुल लोकसंख्या में से अंग्रेजी जाननेवालों की संख्या ११ लाख २५ हजार; लिखना पढना जाननेवालों की संख्या १ करोड ५९६ लाख; और लिखना पढना न जाननेवालों की संख्या २७ करोड ७७ लाख है। हिन्दुस्थान के कुल ब्राह्मणों की संख्या १ करोड ४८ लाख; और अस्पृश्य जाती के लोगों की संख्या ५ करोड ३२ लाख है। ब्रिटिश हिन्दुस्थान की आय १ अर्ब १० करोड रुपये हैं। रेलवे करीब ३५ हजार मील है।

हिंदुस्थान की मनुष्यसंख्या धर्म के अनुसार.

धर्म.	ब्रि. हिंदुस्थान.	रियासतें.	जोड.
हिन्दु	१५ क.८६ला.	४ क. ८५ ला.	२०क. ७१ला
मुसलमान	५ क. ३८ ला.	८६ला. ५३ ह.	६ क. २४ ला.
बौद्ध	९४ला. ११ ह.	६५ हजार	९४ ला.७६ ह.
जंगली	५८ला. ९९ ह.	२६ला. ८४ ह.	८५ ला ८४ ह
क्रिस्ती	१९ ला. ४ ह.	१०ला. १८ ह.	२९ ला.२३ ह.
सिक्ख	१५ ला. ७४ ह.	६ ला. २० ह	२४ ला.९५ ह
जैन	४ ला. ७८ ह.	८ ला. ५५ ह.	१३ ला.३४ ह
पारसी	८० हजार	१४ हजार	९४ हजार
यहुदी	१५ हजार	२ हजार	१८ हजार
अन्य	१ ला. २९ ह.	१७४	१ ला २९ ह
जोड.	२३क. १८ला.	६ क. २४ ला.	२९क.४३ ला

भाषा के अनुसार.

भाषा.	संख्या.
हिन्दी	८ क. ६० ला.
बंगाली	४ क. २० ला.
तेलगू	२ करोड.
मराठी	१ क. ९० ला.
पंजाबी	१ क. ८० ला
तामील	१ क. ६० ला.
गुजराती	१ क. १० ला
कानडी	१ करोड.
उरिया	९० लाख.
मलायन	५५ लाख.
सिंधी	२५ लाख.
आसामी	१५ लाख.
गोंड	१५ लाख.
अन्य	५ करोड.

प्रान्तों और शहरों के अनुसार.

बंगाल इलाखा ...	७ क. ४७ लाख
संयुक्तप्रांत ...	४ क. ७६ लाख
मद्रास इलाखा ...	३ क. ८२ लाख
बरारप्रांत ...	२ क. ७५ लाख
पंजाब इलाखा ...	२ क. ३ लाख
बंबई इलाखा ...	१ क. ८५ लाख
कलकत्ता शहर ...	११ लाख
बंबई शहर ...	८ लाख
मद्रास शहर ...	५ लाख
दक्षिण हैदराबाद	४॥ ला.
लखनो शहर ...	३ लाख
रंगून शहर ...	२ लाख ३४ हजार

बनारस, दिल्ली, लाहोर, हर एक २ लाख से ज्यादा.

१ लाखसे २ लाख वस्तीकी शहर १९.

५ ह.से १ लाख वस्तीकी शहर १५७४

पृथ्वी की लोकसंख्या ।						पृथ्वी का क्षेत्रफल ।	
वर्ण	संख्या	खंड	संख्या	धर्म	संख्या	खंड का नाम	चो. मील.
१ गोर वर्ण (काकेशन)	७७ करोड	यूरप ...	३८ करोड	खिस्ती ...	४७ करोड	यूरप ...	३७ लाख
२ पीत वर्ण (मंगोलियन)	५४ करोड	एशिया ...	८० करोड	बौद्ध ...	४२॥ करोड	एशिया ...	१६८ लाख
३ कृष्ण वर्ण (इथियोपियन)	१७॥ करोड	आफ्रिका ..	२० करोड	हिन्दु ...	२१ करोड	आफ्रिका ...	१२० लाख
४ ताम्र वर्ण (अमेरिकन)	२ क. २० ला.	अमेरिका ..	१२ करोड	मुसलमान..	२० करो.*	अमेरिका ...	१६५ लाख
				ज्यू ...	८० लाख	अस्ट्रेलिया व.	३० लाख
				अन्य ...	१० करोड		
कुल पृथ्वी की लोकसंख्या	१५०क ७०ला	कुल ...	१५० क.	कुल ...	१५० करो.	कुल ...	५२० लाख

* इसमें से एशिया खंड में १६ करोड ।

हिंदी-शालोपयोगी भारतवर्ष।

भाग पहला।

प्राचीन काल।

वेदकाल से सन् १००० ईसवी तक।

पाठ पहला।

प्राचीन आर्य्य।

१. ऐतिहासिक विभाग। २. हिन्दुस्थान में आर्यों की बस्ती।
३. ग्रन्थरचना। ४. वेदकालिन आर्यों की सभ्यता।

१. ऐतिहासिक विभागः—पृथ्वी के सब देशों में हमारा यह हिंदुस्थान अत्यंत प्राचीन है। इसको पहले भारतवर्ष कहते थे। पहले इसीके समान कितनेही प्राचीन देश थे। अब वे जीवित नहीं है। इस समय अनेक लेख और निशानों के पाये जाने से जान पडता है। कि मिसर या ईजिप्ट, बाबिलोनिया और आसीरिया ये तीन बहुत पुराने देश थे; परन्तु ये देश लगभग ढाई हजार वर्ष पहले नष्ट हो गये। चीन भी बहुत पुराना देश है, और अब तक जीवित है।

हमारा यह देश बहुत प्राचीन समय से आज तक बना हुआ है। इसके भाग्योदय के समय जितने बडे बडे विद्वान्, पंडित, आचार्य, शास्त्रकार, साधु, देशभक्त, योद्धा, राजा, आदि कर्ता पुरुष यहां हुए, उतने उस समय किसी देश में न हुए होंगे। इस देश का धर्म—जिसे हिंदुधर्म या आर्यधर्म कहते हैं—पृथ्वी के सब धर्मों से प्राचीन है। बौद्ध धर्म की उत्पत्ति इसीसे हुई है, और दूसरे धर्मों ने भी उसीके बहुत से तत्व ग्रहण कर लिये हैं। इन्हीं कारणों से

इस देश की, और इतिहास-संशोधक विद्वानों का ध्यान विशेष रूप से लगा हुआ है।

प्राचीन होने के कारण इस देश का पूर्व समय का विश्वसनीय ऐतिहासिक ज्ञान आज हमको बहुत सा नहीं मिलता । अनेक भाषाओं, अनेक धर्मो, नाना प्रकार के आचार-विचारों और भिन्न भिन्न राज्यपद्धतीयों के परिवर्तन, इस देश में बराबर हजारों वर्षों से हो रहे है; इस लिए इसका प्राचीन काल का क्रमवार और यथायोग्य इतिहास नहीं मिलता । आज कल विद्वान् लोग, उसे अनेक ग्रंथों में लिखी हुई और अनेक प्रदेशों में ज्ञात हुई बातों के आधार से, खोज निकालने में लगे हुए है।

जान पडता है कि हमारे पूर्वज 'आर्य' हजारों वर्षों के पहले मध्य एशिया से, वायव्य की ओर से इस देश में आये । 'आर्य' शब्द का अर्थ 'श्रेष्ठ' है। उस समय के और लोगों की अपेक्षा, विद्या और आचार-विचारों में वे श्रेष्ठ थे। वे धीरे धीरे सारे देश में फैल गये । यहां अपना राज्य स्थापित करके उन्होंने आपना धर्म चलाया । तब से बराबर उनकी बढती ही होती गई। अन्त में उसका न्हास शुरू हुआ । ऐसी दशा में सन १००० ई. के अगले दो सौ वर्षों में मुसल्मान लोग वायव्य दिशा से आये, और यहां के लोगों को दबाकर, सब देश ले लिया । तब से करीब पांच सौ वर्ष तक इस देश में मुसलमानों की प्रबलता थी । उसके बाद 'मराठा' नामक आर्यों की एक शाखा दक्षिण प्रदेश में प्रबल हुई । मराठों ने मुसलमानों को पराजित करके इस देश के प्रायः सब भागोंपर अपना अंमल जारी किया । परन्तु उनका राज्य लगभग सौ वर्षो से अधिक, नहीं टिका । आर्यों की एक दूसरी शाखा के वंशजो ने, समुद्र-मार्गद्वारा यूरप से यहां आकर, इस देश को अपने अधिकार में कर लिया। यही ब्रिटिश लोग आज हमारे ऊपर राज्य करते हैं।

यह सब हाल जानने के लिए हिन्दुस्थान के इतिहास के भाग करने चाहिए । प्राचीन आर्य्य लोगों का पहला निशान उनका वेदग्रन्थ है । ये वेद बहुत पुराने है। उनका काल अभी तक निश्चित नहीं हुआ। तो भी, केवल इतना निश्चित किया जा सकता है, कि वे चार हजार वर्षों से कम के नहीं है । इस लिए वेदकाल से लेकर मुसलमानों के आने तक जो बहुत सा समय व्यतीत हुआ

यह हमारे इतिहास का पहला भाग है। उसे 'प्राचीन काल' या 'आर्यों का काल' कह सकते हैं। यह भाग और इसके आगे के भाग, स्थूल दृष्टि से नीचे लिखे–अनुसार, ध्यान में रख लेने चाहिए।

पहला भाग–प्राचीन इतिहास, आर्यों का कालः—इसा के ४००० वर्ष पहले से १००० तक।

दूसरा भाग–मुसलमानी रियासत*:—इसा के १००० से १७००

तीसरा भाग–मराठी रियासतः—इसा के १७०० से १८०० तक।

चौथा भाग–अँगरेजी साम्राज्यः—इसा के १८०० से चल रहा है।

समय की दृष्टि से देखा जाय तो पहला भाग बहुत बडा है। हमारे देश का सच्चा वैभव, और हमारे पूर्व जों की सची कर्तृत्व–शक्ति इसी भाग में देख पडती है। परन्तु उसका पूर्ण ज्ञान न होने के कारण, वह संक्षिप्त रीति से ही दिया जा सकता है। अपने गिरते समय में हम मुसलमान आदि विदेशियों के हाथ में जिस प्रकार चले गये वह सब हाल हमारे समय के समीप का है; इस लिए वह विस्तार से बतलाया जा सकता है।

२. हिन्दुस्थान में आर्यों की वस्तीः—इस विषय में अब भी मतभेद है, कि हमारे पूर्वज आर्यों का मूलस्थान कहा था। कुछ लोग मानते हैं कि वे पहले ध्रुव प्रदेश में थे, और कोई कोई कहते हैं कि वे मध्य एशिया के पश्चिम भाग में थे। कुछ भी हो; मूलस्थान से आर्यों की शाखाएं पश्चिम, दक्षिण और आग्नेय को फैली। पश्चिम को गये हुए लोगों ने यूरप में, दक्षिण को गये हुए लोगों ने ईरान में, और आग्नेय की ओर आये हुए लोगों ने पञ्जाब में पहले पहले वस्ती की। इससे जान पडता है, कि आज कल के यूरप और हिन्दुस्थान के लोगों के पूर्वज एकही थे। आर्य लोग जब हिन्दुस्थान में आये तब यहां के मूल अशिक्षित निवासियों से उनका झगडा शुरू हुआ। अन्त में आर्यों ने उन लोगों को जीत लिया। अब भी उन लोगों के वंशज कितनेही पहाडी प्रदेशों में पाये जाते हैं। उत्तर हिन्दुस्थान में आर्यों की वस्ती होजाने पर उन्हों ने इस देश का नाम 'आर्यावर्त' रखा। कुछ काल के बाद उन में भरत नाम का एक

---

* रियासत=राज्य; रियस्, रीगस्, रजस्–(राजा) की उत्पत्ति से।

पराक्रमी राजा हुआ। उसके नाम से इस देश का 'भरतखंड' अथवा 'भारतवर्ष' नाम पँडा। इसके बाद, कुछ दिनों में, इस देश को हिन्दुस्थान कहने लगे। इस विषय में मतभेद है, कि इसका यह नाम क्यों पडा। पारसी लोक सिंधु नदी को हिन्दु कहते हैं। इसी से इस देशका नाम हिन्दुस्थान पड गया होगा। यूरोपियन लोग सिंधु नद को इंडस् और इस देश को 'इंडिया' कहते हैं।

३. ग्रन्थरचनाः—ये आर्य लोक बहुत सभ्य थे। पहले उन्हों ने पंजाब में बस्ती की। फिर वहां से वे, यहां के मूलनिवासी काले रंग के लोगों को जीतते हुए, गंगा-यमुना के किनारे के प्रदेश में आये। उन्हों ने जगह जगह बडे बडे शहर बसाये और उत्तम राज्यव्यवस्था शुरू की। उस सारे उपजाऊ प्रदेश में उन्हों ने बोनी शुरू की। वे अपने यज्ञ-यागादि कर्म और देवों की पूजा अर्चा करते समय जो मंत्र या गीत पडते थे वे 'वेद' के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये वेद प्राचीन संस्कृत भाषा में हैं, और उनमें प्राचीन आर्यों के विचार और आचार भरे हुए हैं।

विद्वान् और तपस्या करनेवाले आर्यों को ऋषि कहते थे। यज्ञयागों के समय ये ऋषि इन वेदों के मंत्रों को पढकर अपनी प्रेमपूर्ण और रसाल वाणी से ईश्वर की स्तुति करते थे। उन मंत्रों को 'सूक्त' कहते हैं। प्रारम्भ में ये सूक्त लिखे हुए न थे। उन्हें गुरु के मुख से सुनकर मुखाग्र कर लेने की चाल थी। प्रथम अलग ऋषियों के आश्रमों में भिन्न भिन्न सूक्तों के समूह को 'संहिता' अर्थात् 'एकीकरण' नाम दिया गया।

पहले पहल सब सूक्तों का एकही ग्रन्थ था। उसे ऋग्वेदसंहिता कहते थे। उसमें १०५८० ऋचाएं हैं। फिर कुछ काल के बाद यज्ञ-यागादि में उनका उपयोग करते हुए, केवल यज्ञ-कृत्यों से सम्बन्ध रखनेवाला भाग अलग कर लिया गया; उसे यजुर्वेद कहते हैं। इस यजुर्वेद में बहुत से भाग ऋग्वेद के हैं। इसके सिवाय, यज्ञके समय विद्वान् लोगों में जो विवेचन और निर्णय हुआ करता था उनका भी गद्यरूप से यजुर्वेद में समावेश हुआ है। इसी प्रकार ऋग्वेद के बहुत से भाग, जो यज्ञ के समय कहने के लिए गाने के सुरों में बैठाए हुए है, उन्हें सामवेद कहते हैं। ये वेद के कुल मुख्य तीन भाग हैं। इन्हीं को 'त्रयी विद्या' कहते हैं। इनके सिवा, फिर दूसरे अनेक विषय उपस्थित हुए, उन सबों का समावेश 'अथर्व' नाम के वेद में किया गया है। इन चार भागों की उत्पत्ति भी उपर्युक्त क्रमसे हुई है।

इन चार भागों पर ही ग्रन्थ-रचना समाप्त नहीं हुई। बडे बडे यज्ञों के समय जब विद्वान् लोग एकत्र होते, तब अनेक गहन विषयोंपर चर्चा होती रहती थी। यज्ञ के भिन्न भिन्न कृत्योंपर, स्वयंरीती से, अलग अलग अध्यक्ष नियत किये जाते थे। उनमें 'ब्रह्मा' नामक एक उपाध्याय रहता था। यज्ञ-कृत्यों के विषय में जब कोई वाद उपस्थित होता, तब उसका फैसिला करने का काम ब्रह्मा को दिया जाता था। इस प्रकार के वाद और फैसिले बहुत होने के कारण फिर उनका समावेश निरालेही ग्रंथो में किया गया। इन ग्रंथो को 'ब्रह्मा' शब्द के कारण 'ब्राह्मण' संज्ञा मिली। फिर बहुत से विषयों की चर्चा, अरण्य आदि एकान्त स्थलों में जाकर करना उचित जान पडा, इस लिए 'ब्राह्मणों' के कुछ भागों का 'आरण्यक' नाम पडा। परन्तु ऐसे विषयो में कितनेही विषय बहुत ही विकट रहते थे। विद्वान् लोगों के समुदाय को, अरण्य में एकत्र बैठ कर, इस प्रकारके गहन विषयों की चर्चा करनी आवश्यक जान पडी कि, परमेश्वर का स्वरूप कैसा है, सृष्टि की उत्पत्ति और उसका परिवर्तन किन नियमों से हो रहा है, और उनका हेतु क्या है। इस लिए अरण्यकों के ऐसे बहुत से प्रकरणों का 'उपनिषद्' नाम पडा। ये उपनिषद् ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनमें सब वेदान्त का सार भरा है। आदि की चार संहिताएं और उनमें से प्रत्येक के ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्-इन सब को 'श्रुति' अथवा 'वेद' कहते हैं।

आर्य लोग इस देश में जैसे जैसे फैलते गये वैसेही वैसे अनेक विषयों में उनका मतभेद होता गया। और उनकी अलग अलग शाखाएं बन गई। ग्रन्थोंका विस्तार बहुत बढ जाने के कारण विस्तृत विवेचन ध्यान में रखना कठिन मालूम होने लगा। इस लिए सब विस्तार कम करके, ध्यान में रखने के लिए, ऐसे सुलभ वाक्य रचने की चाल पडी। जो थोडेही में बहुत अर्थ का बोध कर सकें। इन वाक्यों को सूत्र कहते है। सूत्रों के मुख्य तीन भाग हैं—(१) श्रौतसूत्र अर्थात् यज्ञयागो के नियम। (२) गृह्यसूत्र अर्थात् प्रत्येक पुरुष के लिए घरमें विधि-विधान करने के लिए नियम; और (३) धर्मसूत्र अर्थात् समाज का नियमन करनेवाले कायदे। इनके शिवाय फिर व्याकरण, न्याय, वेदांत आदि दूसरे विषयों पर भी सूत्रग्रंथ निर्माण हुए। ऊपर जिन धर्मसूत्रों का उल्लेख हो चुका है, उनमें आर्यों के कायदोंका समा-

वेश होता है। इन्हीं कायदों पर फिर 'स्मृति' नाम के विस्तृत ग्रन्थ लिखे गये। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति और पराशरस्मृति आदि ग्रन्थ बहुमान्य हैं।

श्रुति और स्मृति के सिवा आर्यों के मुख्य ग्रन्थ इतिहास और पुराण हैं। इतिहास में रामायण और महाभारत नाम के दो ग्रन्थों का समावेश होता है। पुराण अठारह हैं। इतिहास और पुराणों में आर्यों के राजवंशों का इतिहास दिया हुआ है, इसके सिवा उनमें सर्वसाधारण लोगों के लिए उपयोगी नीति भी भरी हुई है।

श्रुति, स्मृति और पुराणों पर हिन्दूसमाज की सारी नींव रची हुई । स्मृतिओंको श्रुति का आधार है और पुराणों को श्रुति, स्मृति दोनों का आधार है। पुराणों की अपेक्षा से स्मृतियों का अधिकार अधिक है और श्रुतियों का अधिकार सब से श्रेष्ठ है।

यह बात आज निश्चयपूर्वक नहीं ठहराई जा सकती कि यह सब ग्रन्थ-रचना किस समय और किस क्रम से हुई । तथापि विषय समझने के लिए उसके अलग अलग काल-भाग नियत कर लेना चाहिए । जिस समय श्रुति-ग्रन्थ निर्माण हुए, उस काल को 'वैदिक काल' कह सकते हैं। यही प्राचीन इतिहास का पहला बड़ा भाग है।

४. वेदकालीन आर्यों की सभ्यता:—जान पड़ता है कि वेदग्रन्थ आज जैसे उपलब्ध हैं, वैसेही वे प्रारम्भ में नहीं रचे गये। और उनकी वर्तमान संगति भी कालक्रम के अनुसार नहीं है। विद्वानों का ऐसा तर्क है कि मध्य के अनेक भाग गुप्त हो गये होंगे । इस लिये वेदों की उत्पत्ति ही आर्यों की सभ्यता का आरम्भ नहीं है। जान पड़ता है कि, वेद की उत्पत्ति के पहले ही, आर्य लोगों की सभ्यता एक प्रकार से परिपूर्ण थी, उस प्राचीन सभ्यता के अनेक चिन्ह वेदों में पाये जाते हैं।

आर्य लोग यहां के मूलनिवासी, काले रंग के लोगों को जीतते हुए, ज्यों ज्यों पंजाब से पूर्व और दक्षिण को फैलते गये त्यों त्यों उन्होंने अपनी रीती-भाति और यज्ञ-यागादि कर्म वहां शुरू किये । वेदों के सूक्तों में लड़ाइयों के और सृष्टिसौंदर्य के संक्षिप्त वर्णन पाये जाते हैं। उनसे आर्यों का उत्साह और उनके परिपक्व विचार व्यक्त होते हैं। खेती की ओर उनका विशेष ध्यान था। उन्होंने जंगल आदि साफ करके गाव-खेड़े और शहर बसाये; नहर और कुएं बनाकर खेती बढ़ाई। पशु और खेती उनकी मुख्य सम्पत्ति थी। गेहुं और अलसी की

पदावार वे विशेष करते थे। उनके पास घोडे भी रहते थे। नौकानयन का उन्हें ज्ञान था। मांसाहार को वे निषिद्ध नहीं मानते थे। जुआ आदि खेलने के कितनेही दुर्गुण भी उनमें थे। बढई का काम और बुनने का काम उन्हें अच्छी तरह मालूम था। लोहे अथवा हरिन के सींगों के सिरे लगे हुए बाण, बख्तर या कवच, शिरस्त्राण, बरछे और तीक्ष्ण धारवाली तलवार उनके हथियार थे। सोने चांदी का उपयोग उन्हे मालूम था। शिल्पकला वे जानते थे। परंतु खोदाव, पचीकारी और नक्शकारी का काम उन्हें मालूम न था। कुटुम्ब के सब लोग साथही रहते थे। स्त्रियों में पडदा नहीं था। पुरुषों की ओर से उनका बडा मान होता था। कुमारी, विवाह–योग्य होने पर, अपना वर बहुत करके स्वयं पसन्द कर लेती थी। सारांश यह है कि आर्य लोग स्वतंत्रताप्रिय थे। और शान्तिसुख से अपना समय व्यतीत करते थे। उनके धर्म-विचार बहुत प्रगल्भ थे। अग्नि, सूर्य, मेघ, आदि शक्तियों का जगत् को अत्यन्त उपयोग होता है, इस लिए ऐसे देवताओं की स्तुति वेद के सूक्तों में पाई जाती है। आर्यों की परमेश्वराविषयक यह समज उनके ग्रन्थों में देख पडती है, कि सृष्टि का नियमन करने के लिए जगन्नियन्ता ने उपर्युक्त शक्तियों की योजना की है, और वह परमात्मा इस सृष्टि में पूर्ण हो कर भी शेष है। उपनिषदों में इसका सब से उत्तम विवेचन किया गया है।

सामाजिक विषयों में वर्णव्यवस्था आर्यों की मुख्य संस्था है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र ये समाज के चार भाग करके उनके कर्तव्य निश्चित कर दिये गये थे। वेदपठन ही मुख्य अध्ययन था, और विद्वत्ता का बडा मान था। सब लोगों में विद्या का प्रचार था। और राष्ट्रीय कर्तव्य पूर्ण करने के लिए सब लोग तैयार रहते थे। तात्पर्य यह है कि, आर्य लोग विद्वान्, शूर, सत्यप्रिय और अत्यन्त धर्मनिष्ठ थे।

वैदिक काल में प्रत्येक कुटुम्ब में अग्निहोत्र होता था। प्रतिदिन अग्नि की पूजा करके उसे आहुति देनें का नियम था। बडे बडे राजा यज्ञयागादि कर्म बडे ठाटबाट से करते थे। इस प्रकार के यज्ञों में सब जगह के विद्वान् लोग एकत्र होते, और अनेक गहन विषयोंपर वादविवाद करते थे। उसमें स्त्रिया भी शामिल होती थी। जनक नाम का एक राजा बडा तत्त्ववेत्ता था। उसकी सभा में वेदान्त विषय की चर्चा सदा हुआ करती थी। याज्ञवल्क्य ऋषि और जनक के संवाद उपनिषद् में दिये हैं; वे बहुत ही मनोहर, वक्तृत्वपूर्ण और अद्वितीय है।

पाठ दुसरा ।

भारतीय काल ।

सन् ईसवी से १००० वर्ष पहले तक ।

१. रामायण और महाभारत । २. रामायण की कथा ।
३ महाभारत की कथा । ४. भारतीय काल की सभ्यता ।

१. रामायण और महाभारतः—अनेक घटनाओं और व्यक्तियों के काल निश्चित न होने के कारण, प्राचीन इतिहास स्पष्टता से समझ नहीं पडता । वेदों में बतलाए हुए नियमों पर चलते रहने से, आर्यों की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई । जैसे जैसे समाज और सम्पत्ति बडी, वैसें वैसें राज्य की आवश्यकता उत्पन्न हुई; और गंगा-यमुना के किनारे के प्रदेशों में नवीन राज्य स्थापित हुए । ऐसें राज्यों का इतिहास रामायण और महाभारत में दिया हुआ है । और यही दो बडे ग्रन्थ हमारे प्राचीन इतिहास है । इस विषय में बहुत मतभेद है कि इन ग्रन्थों की घटनाए सच्ची हैं या झूट है । वे कब, कहा और किस क्रम से हुई, और कब लिखी गई । तथापि अपने पूर्वजों की सच्ची कर्तृत्वशक्ति, उनके गुण-दोष, नीति और रहन-सहन, उनका धर्म, इत्यादि बातें जानने के लिए ये दो ग्रन्थ अवश्य पढने चाहिए । रामायण में २४००० पद्य हैं । उनके कर्ता संस्कृत के आदिकवि वाल्मीकि हैं । महाभारत ग्रन्थ उससे चौगुना बडा है । उसे व्यास ने रचा ।

कुरु और पांचाल में जो युद्ध हुए उनके सम्बन्ध की उपलब्ध सब बातें महाभारतकार ने एकत्र करके अपना ग्रन्थ लिखा है । उसी प्रकार कोशल और विदेह देशों में जो विशेष सुख का काल हो गया, उसका वर्णन रामायण में है । जग के प्रत्यक्ष व्यवहार में जैसे सद्गुणी और दुर्गुणी पुरुषों के उदाहरण पाये जाते है, उसी प्रकारके पात्र महाभारतके हैं । परन्तु उत्तम कुटुम्बों में देख पडनेवाला परस्पर प्रेम, सत्यप्रियता, और स्त्रियों का पातिव्रत्य आदि अप्रतिम गुणों का दुर्लभ चित्र रामायण में देखने को मिलता है । शौर्य आदि प्रखर गुणों के सम्बन्ध में महाभारत चढा बडा है; परन्तु कुटुंब की सात्विक वृत्ति का हृदयभेदक वर्णन रामायण में है । ऐसे गुणों के जोर पर ही समाज का अस्तित्व कायम होने

के कारण, रामायण ग्रंथ सब प्रकार के लोगों को प्रिय हुवा है। राम का अपनी प्रजा पर प्रेम, और प्रजा की राम पर भक्ति—दोनों का रामायण में जो वर्णन हुआ है, उसे पढकर किसका हृदय नहीं पिघल उठता! आर्यों के राजकीय परिवर्तन, उनके कलह; और पराक्रम का वर्णन महाभारत में है। उनका धार्मिक कर्तव्य (आचरण) और उनकी गृहस्थिति रामायण में वर्णन की गई है। इन दोनों ग्रन्थों में मिलकर आर्यों के चरित्र का सम्पूर्ण चित्र बन गया है। किसी भी एक ग्रंथ में आधा चित्र देख पडता है। सारा चित्र देखने के लिए दोनों ग्रंथ पढने चाहिए। प्राचीन वैभव और सभ्यता का इतना रसीला और विस्तृत वर्णन दूसरे किसी भी राष्ट्र में नहीं पाया जाता। दोनों के वर्णन सरल, रसाल और स्वाभाविक हैं। आर्यावर्त के समस्त भाषाओं में इन ग्रंथों का तर्जुमा हुवा है।

"कुरु" नाम का राजवंश दिल्ली के पास हस्तिनापुर में राज्य करता था। पांचाल नाम का राजघराना, कुरुओं के राज्य के दक्षिण और गंगा के किनारे, राज्य करता था। उसी प्रकार यादव, मत्स्य, शूरसेन आदि दूसरे राजवंशों ने चारों ओर अपने राज्य स्थापित किये थे। इन राजघरानों के यहां विद्वान् लोगों का बडा जमाव रहा करता था। भिन्न भिन्न स्थानोंसे विद्वान् लोगों को बुलाकर नीति, धर्म, तत्त्वज्ञान इत्यादि विषयो पर राजा लोग वादविवाद किया करते थे। इसी कारण विद्या को उत्तेजन मिला। बडे बडे विद्वान् पण्डित उपजे। विद्यार्थी लोग विद्याभ्यास के लिए जगह जगह से गुरुकुल में जाकर रहने लगे। इस शिक्षा में युद्ध के लिए उपयोगी शिक्षा का भी समावेश होता था। विद्याभ्यास समाप्त होने पर विद्यार्थी गृहस्थाश्रम ले, कुटुम्बी होकर, सुख से रहते। कालान्तर में कुरु और पांचाल में भयंकर युद्ध ठना। उसीमें कुरुओं का गृहकलह शामिल हो जाने के कारण विरोध और भी बढ गया। उसी युद्ध का इतिहास महाभारत में दिया है। भरत नाम के पुरुष से उस वंश की उत्पत्ति हुई, इसी लिए उस वंश के इतिहास का 'महाभारत' नाम पडा। इस ग्रंथ की घटनाएं हो जाने पर, बहुत वर्षों के बाद, वह लिखा गया। उसकी भाषा वेद से भिन्न है। और प्रचलित संस्कृत-व्याकरण के अनुसार है। भारती युद्ध हिंदुस्थान के प्राचीन इतिहास की पहली निश्चित और भारी घटना है। इस युद्ध का समय ईसवी सन से ३१०१ वर्ष पहले है। हिंदू लोग इसीको कलियुग का आरंभ मानते हैं। परंतु युरोपियन विद्वान् समझते हैं कि, भारती युद्ध का काल ईसवी सन से अनुमानतः १३०० वर्ष पहले होगा।

२. रामायण की कथाः—कोशल, विदेह और काशी के राज्यों की राजधानियां क्रमशः अयोध्या, मिथिला और काशी थी । इन जगहों में आर्यों के धर्म और आचार-विचार बढते गये । अयोध्या में राजा दशरथ राज्य करते थे । उनकी कई स्त्रियां थी । उनमें कौशल्या, सुमित्रा और कैकयी प्रमुख थी । उनसे चार पुत्र हुए । कोशल्या के पुत्र श्रीराम, सुमित्रा के लक्ष्मण और शत्रुघ्न तथा कैकयी के भरत । ये सब पुत्र पराक्रमी थे; विशेषतः राम सब के प्यारे थे । इधर विदेह देश के राजा जनक ने अपनी कन्या सीता का स्वयंवर स्थिर किया । और यह प्रतिज्ञा प्रकट की, कि हमारे यहां के शिवधनुपको चढाकर जो बाण चलावेगा उसे सीता जयमाल पहनावेगी । यह प्रतिज्ञा पूर्ण करके राम ने सीता को वरा । इसके बाद राजा दशरथ ने योग्य समय में रामचंद्र को युवराज बनाकर अभिपेक करने का निश्चय किया । उस काम में रानी कैकयी ने विघ्न डाला । उसे दशरथ ने पहले दो वर देने कहे थे । उसमें से एक वर से भरत को राज्य, और दूसरे से राम को चौदाह वर्ष का वनवास कैकयी ने मांगा । वे वर पूर्ण करते हुए राजा के प्राणों पर आ बनी । यह प्रसंग देखकर, पिता का वचन पूर्ण करने के लिए, राम वनवास को निकले । उनके साथ उनकी पत्नी सीता और बंधु लक्ष्मण भी वनवास को गये । भरत उस समय अयोध्या में न थे । इसके बाद पुत्रविरह से राजा दशरथ की मृत्यु हो गई । यह बात मालूम होने पर भरत को अत्यन्त दुःख हुआ । माता का यह कृत्य उन्हें अच्छा नहीं लगा । वन में चित्रकूट पर्वत पर जाकर उन्होंने राम को लौटालने का प्रयत्न किया । परंतु जब राम ने यह कह दिया कि, प्रतिज्ञा के अनुसार चौदह वर्ष वनवास करके फिर लौट आऊंगा, तब भरत लाचार हुए । भरत ने राम की पादुका लेकर चौदह वर्ष उनके नाम से राज्य किया । इधर राम वनवास में घूमते घूमते दण्डकारण्य के पंचवटी नामक क्षेत्र में आये । वहां उन्होंने बहुत से राक्षसों का वध किया । यह जानकर लंका के राजा रावण ने, उन दोनो बंधुओं को, युक्तिपूर्वक, आश्रम से बाहर वन में कर दिया, और स्वयं कपट वेष धरकर सीता का हरण किया । आश्रम में सीता को न देखकर ये दोनों भाई शोकाकुल हुए, और सीता को ढूंढने के लिए वन में फिरने लगे । फिर राम ने वानरों के राजा सुग्रीव से मित्रता कर के, उसके मित्र वानरश्रेष्ठ हनुमान को सीता का खोज करने के लिए भेजा । हनुमान ने यह पता लाया कि सीता लंका

में रावण के यहां कैद है। तब राम ने वानर—भालुओं की सेना तैयार करके लंका पर चढाई की और रावण का वध करके सीता को मुक्त किया। इतने में चौदह वर्ष हो गये और राम लौटकर अयोध्या को आये। वहां उनका यथाविधि राज्याभिषेक हुआ। राम ने बहुत काल तक उत्तम प्रकार से राज्य करके प्रजा को सुखी और संतुष्ट किया।

३. महाभारत की कथाः—चन्द्रवंशी राजा पांडु के धर्म, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव नाम के पांच पुत्र थे। उन्हें पांडव, अर्थात् पांडु के पुत्र, कहते हैं। पांडु के भाई धृतराष्ट्र के दुर्योधन, दुःशासन आदि सौ पुत्र थे। वे अपने पूर्वज कुरु के नाम पर कौरव कहलाते हैं। पांडु शाप के कारण विरक्त हो, राज्य छोडकर वन में चले गये और वहां उनकी मृत्यु हुई। धृतराष्ट्र ने अपने भतीजों का उत्तम रीती से पालन किया और धर्मराज के बडे होने पर उन्हें राज्य का आधा भाग दिया। कौरवों को यह बात सहन नहीं हुई। उन्होंने अपने बाप से आग्रह करके पांडवों को वन में भगा दिया। वहां कौरवों ने उन्हें मार डालने के बहुत प्रयत्न किये; पर सब निष्फल हुए। फिर पांडव घुमते घुमते पांचाल देश के राजा द्रुपद के राज्य में आये। उस समय उसने अपनी कन्या द्रौपदी का स्वयंवर रचा था। उसमें यह पण था कि, स्वयंवर में आये हुए राजाओं में से, जो कोई वहां रखे हुए धनुष्य में बाण चढाकर मत्स्ययंत्र भेदेगा, उसे राजकन्या जयमाल पहनावेगी। अर्जुन ने वह पण पूर्ण किया और द्रौपदी पाई। फिर वह पांचों भाइयों की पत्नी हुई। इसके बाद धृतराष्ट्र ने पांडवों को बुलाकर उनका आधा भाग उन्हें दिया और आधा अपने पुत्रों के लिए रखा। पांडवों ने यमुना के किनारे इंद्रप्रस्थ नाम की नवीन राजधानी स्थापित की; यहीं फिर प्रसिद्ध दिल्ली शहर बसा। धर्मराज ने राजसूय यज्ञ करके सार्वभौमत्व स्थापित किया। उस समय उनकी बढती और वैभव देखकर कौरवों को मत्सर हुआ। उनका वैभव हरण करने के लिए उन्होंने धर्मराज को द्यूत खेलने को बुलाया। उसमें वे स्वयं अपने को, अपने बंधुओं को, अपने राज्य को और अन्त में अपनी पत्नी द्रौपदी को भी हार गये। अन्त में धृतराष्ट्र की आज्ञा से पांडव बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष अज्ञातवास भोगने के लिए द्रौपदीसहित वन को चले गये। यह अवधि समाप्त होने पर पांडव लौट आये और अपना राज्य फिर मांगने लगे। परन्तु कौरव देने से इन्कार करने

लगे। तब तो दोनों पक्षों में भयंकर संग्राम ठर गया। दोनों पक्षों की ओर प्रचण्ड सेना जमा हुई, अन्त में उस रणयज्ञ में पांच पांडव और श्रीकृष्ण तथा दूसरे पक्ष की ओर तीन वीर छोडकर, दोनों पक्षों के सब लोग 'स्वाहा' होगये। धर्मराज ने फिर अश्वमेध यज्ञ किया और बहुत वर्षोंतक सुख से राज्य किया। अन्त में धर्मराज ने अपने भाइयों और द्रौपदी के सहित स्वर्गारोहण किया।

महाभारत की बातों से तत्कालीन स्थिति का अच्छा ज्ञान होता है। राज-पुत्रों की शिक्षा, द्वंद्वयुद्ध, धर्मयुद्ध के नियम इत्यादि अनेक बोधप्रद बातोंका इस ग्रन्थ में वर्णन हुआ है। उसी प्रकार धर्म, तत्त्वज्ञान, राज्यव्यवस्था इत्यादि गहन गहन विषयों का अप्रतिम विवेचन शान्तिपर्व आदि महाभारत के भागों में हुआ है। भारतीय काल में सब प्रकार से लोगों का सुधार और उन्नति हुई थी। उसी प्रकार युद्धकला का भी उन्हे बहुत अच्छा ज्ञान था।

४. भारतीय काल की सभ्यताः—जिस काल में रामावतार हुआ उस काल का सुवर्णयुग नाम रखा जा सकता है। उस समय की राजनीति, लोगों की अभिवृद्धि, उनका वैभव, सदाचरण और सत्यप्रीति इत्यादि विषयों का वर्णन रामायण में मिलता है। राजा दशरथ की प्रजाहित के विषय में चिन्ता, राम की पितृभक्ति, और सत्यप्रीति, सीता का अनुपम पतिप्रेम, भरत की असाधारण बन्धुप्रीति आदि उत्तम गुणों के प्रेमपूर्ण और सरस उदाहरण दूसरी जगह न मिल् पाये जाते हैं।

उस काल में आर्यों की सभ्यता बढ रही थी। वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, इत्यादि महर्षि, राजाओं का आश्रय पाकर, धर्म-प्रसार और विद्या की उन्नति का काम बडी भावना से कर रहे थे। राजा जनक के पास विद्वान् लोगों का बडा जमाव था। स्वयं राजा जनक सब विद्याओं में अत्यन्त पारंगत था। स्त्रियों का उस समय बडा मान था। इस के सिवा, अनेक स्त्रियां तत्त्वज्ञान और वेदविद्या में निपुण थी। प्रथम तीन वर्णों को वेदविद्या का अधिकार था। यद्यपि आपस में भयंकर युद्ध होते रहते थे, तथा विद्योन्नति, धर्मप्रसार, कला-कौशल्य इत्यादि दूसरे उद्योग बन्द न थे। आज कल के सब प्रकार के अनाजों, सब प्रकार की धातुओं और सब प्रकार के जानवरों का उस समय के लोग उपयोग करते थे। व्याकरण, ज्योतिषशास्त्र, अध्यात्मविद्या इत्यादि गहन विषयों में लोगों की प्रगति हो रही थी।

वैदिक काल में आर्यों ने पंजाब में बस्तियां कीं। भारतीय काल में उन्हों ने गंगा–यमुना के किनारे के प्रदेशों में वस्तियां कीं। और फिर हिमालय की तलहटी से, आमये की ओर समुद्र तक का देश उन्हें मालूम हुआ। वे जहां जहां गये, वहां वहां उन्हो नें अपना धर्म, अपने आचार–विचार, खेतीवाडी और कलाकौशल्य की स्थापना की। सारांश, स्थूल दृष्टी से ई. स. के १००० वर्ष पहले ये बातें पूर्णता को प्राप्त होगई थी। इसके बाद उनके आचार–विचार, धार्मिक विचार और समाजरचना में बडे बडे फर्क पडने लगे। और भाषा, तत्त्वज्ञान इत्यादि विषयों की एक प्रकार से बहुत वृद्धि होते हुए भी, धर्म–विचारों में एक बडी क्रान्ति हो गई।

पाठ तीसरा।

सूत्रकाल।

ईसाके १००० वर्ष पहले से लेकर ईसाके ३०० वर्ष पहले तक.

१. मगध देश का उत्कर्ष। २. ग्रंथरचना।
३. बौद्धधर्म का उदय। ४. सिकंदर बादशाह की सवारी।

१. मगध देश का उत्कर्षः—यह बात ठीक ठीक नहीं समझ पडती कि, रामायण और महाभारत में बतलाई हुई घटनाए हो जाने पर, आगे कितनेही शतकों तक, किस जगह कौन से राजवंश उदय हुए। तथापि ईसा के छठवें शतक से पहले मगध देश की बहुत बढती हुई। मगध को आज कल बिहार प्रान्त कहते हैं। भारतीय युद्ध के समय इस देश पर जरासंध नाम का पराक्रमी राजा राज्य करता था। जरासंध के बाद उसके वंश के बाईस पुरुषों ने मगध देशपर राज्य किया। ईसा के ६०० वर्ष पहले के करीब मगध देश का राज्य प्रद्योत नामक वंश में गया। इस वंश का पहला पुरुष शिशुनाग नाम का राजा था। इसमें उस वंश को शिशुनाग–वंश भी कहते हैं। शिशुनाग से चौथा पुरुष बिंबिसार बडा चतुर और परोपकारी राजा हुआ। उसने ईसा के ५३७–४८५ वर्ष पहले तक राज्य किया। बिंबिसार राजा के समय में ही

वैदिक काल में आर्यों ने पंजाब में बस्तियां कीं। भारतीय काल में उन्हों ने गंगा-यमुना के किनारे के प्रदेशों में वस्तियां कीं। और फिर हिमालय की तलहटी से, आग्नये की ओर समुद्र तक का देश उन्हें मालूम हुआ। वे जहां जहां गये, वहां वहां उन्हो नें अपना धर्म, अपने आचार-विचार, खेतीवाडी और कलाकौशल्य की स्थापना की। सारांश, स्थूल दृष्टी से ई. स. के १००० वर्ष पहले ये बातें पूर्णता को प्राप्त होगई थीं। इसके बाद उनके आचार-विचार, धार्मिक विचार और समाजरचना में बडे बडे फर्क पडने लगे। और भाषा, तत्त्वज्ञान इत्यादि विषयों की एक प्रकार से बहुत वृद्धि होते हुए भी, धर्म-विचारों में एक बडी क्रान्ति हो गई।

पाठ तीसरा।

सूत्रकाल।

इसाके १००० वर्ष पहले से लेकर ईसाके ३०० वर्ष पहले तक.

१. मगध देश का उत्कर्ष। २. ग्रंथरचना।
३. बौद्धधर्म का उदय। ४. सिकंदर बादशाह की सवारी।

१. मगध देश का उत्कर्षः—यह बात ठीक ठीक नहीं समझ पडती कि, रामायण और महाभारत में बतलाई हुई घटनाए हो जाने पर, आगे कितनेही शतकों तक, किस जगह कौन से राजवंश उदय हुए। तथापि ईसा के छठवें शतक से पहले मगध देश की बहुत बढती हुई। मगध को आज कल बिहार प्रान्त कहते हैं। भारतीय युद्ध के समय इस देश पर जरासंध नाम का पराक्रमी राजा राज्य करता था। जरासंध के बाद उसके वंश के बाईस पुरुषों ने मगध देशपर राज्य किया। ईसा के ६०० वर्ष पहले के करीब मगध देश का राज्य प्रद्योत नामक वंश में गया। इस वंश का पहला पुरुष शिशुनाग नाम का राजा था। इसमें उस वंश को शिशुनाग-वंश भी कहते हैं। शिशुनाग से चौथा पुरुष बिंबिसार बडा चतुर और परोपकारी राजा हुआ। उसने ईसा के ५३७-४८५ वर्ष पहले तक राज्य किया। बिंबिसार राजा के समय में ही

लगे। तब तो दोनों पक्षों में भयंकर संग्राम ठन गया। दोनों पक्षों की ओर प्रचण्ड सेना जमा हुई, अन्त में उस रणयज्ञ में पांच पांडव और श्रीकृष्ण तथा दूसरे पक्ष की ओर तीन वीर छोडकर, दोनों पक्षों के सब लोग 'स्वाहा' होगये। धर्मराज ने फिर अश्वमेध यज्ञ किया और बहुत वर्षोंतक सुख से राज्य किया। अन्त में धर्मराज ने अपने भाइयों और द्रौपदी के सहित स्वर्गारोहण किया।

महाभारत की बातों से तत्कालीन स्थिति का अच्छा ज्ञान होता है। राज-पुत्रों की शिक्षा, द्वंद्वयुद्ध, धर्मयुद्ध के नियम इत्यादि अनेक बोधप्रद बातोंका इस ग्रन्थ में वर्णन हुआ है। उसी प्रकार धर्म, तत्त्वज्ञान, राज्यव्यवस्था इत्यादि गहन गहन विषयों का अप्रतिम विवेचन शान्तिपर्व आदि महाभारत के भागों में हुआ है। भारतीय काल में सब प्रकार से लोगों का सुधार और उन्नति हुई थी। उसी प्रकार युद्धकला का भी उन्हे बहुत अच्छा ज्ञान था।

७. भारतीय काल की सभ्यता:—जिस काल में रामावतार हुआ उस काल का सुवर्णयुग नाम रखा जा सकता है। उस समय की राजनीति, लोगों की अभिवृद्धि, उनका वैभव, सदाचरण और सत्यप्रीति इत्यादि विषयों का वर्णन रामायण में मिलता है। राजा दशरथ की प्रजाहित के विषय में चिन्ता, राम की पितृभक्ति, और सत्यप्रीति, सीता का अनुपम पतिप्रेम, भरत की अवर्णनीय बन्धुप्रीति आदि उत्तम गुणों के प्रेमपूर्ण और सरस उदाहरण दूसरी जगह क्वचित् पाये जाते हैं।

उस काल में आर्यों की सभ्यता बढ रही थी। वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, इत्यादि महर्षि, राजाओं का आश्रय पाकर, धर्म-प्रसार और विद्या की उन्नति का काम बडी शीघ्रता से कर रहे थे। राजा जनक के पास विद्वान् लोगों का बडा जमाव था। स्वयं राजा जनक सब विद्याओं में अत्यन्त पारंगत था। स्त्रियों का उस समय बडा मान था। इस के सिवा, अनेक स्त्रियां तत्वज्ञान और वेदविद्या में निपुण थी। प्रथम तीन वर्णों को वेदविद्या का अधिकार था। यद्यपि आपस में भयंकर युद्ध होते रहते थे, तथा विद्योन्नति, धर्मप्रसार, कला-कौशल्य इत्यादि दूसरे उद्योग बन्द न थे। आज कल के सब प्रकार के अनाजो, सब प्रकार की धातुओं और सब प्रकार के जानवरों का उस समय के लोग उपयोग करते थे। व्याकरण, ज्योतिषशास्त्र, अध्यात्मविद्या इत्यादि गहन विषयों में लोगों की प्रगति हो रही थी।

लने। तब तो दोनों पक्षों में भयंकर संग्राम ठन गया। दोनों पक्षों की ओर प्रचण्ड सेना जमा हुई, अन्त में उस रणयज्ञ में पांच पांडव और श्रीकृष्ण तथा दूसरे पक्ष की ओर तीन वीर छोडकर, दोनों पक्षों के सब लोग 'स्वाहा' होगये। धर्मराज ने फिर अश्वमेध यज्ञ किया और बहुत वर्षोंतक सुख से राज्य किया। अन्त में धर्मराज ने अपने भाइयों और द्रौपदी के सहित स्वर्गारोहण किया।

महाभारत की वार्तों से तत्कालीन स्थिति का अच्छा ज्ञान होता है। राज्य-पुत्रों की शिक्षा, द्वंद्वयुद्ध, धर्मयुद्ध के नियम इत्यादि अनेक बोधप्रद वार्तोंका इस ग्रन्थ में वर्णन हुआ है। उसी प्रकार धर्म, तत्त्वज्ञान, राज्यव्यवस्था इत्यादि गहन गहन विषयों का अप्रतिम विवेचन शान्तिपर्व आदि महाभारत के भागों में हुआ है। भारतीय काल में सब प्रकार से लोगों का सुधार और उन्नति हुई थी। उसी प्रकार युद्धकला का भी उन्हे बहुत अच्छा ज्ञान था।

४. भारतीय काल की सभ्यता:—जिस काल में रामावतार हुआ उस काल का सुवर्णयुग नाम रखा जा सकता है। उस समय की राजनीति, लोगों की अभिवृद्धि, उनका वैभव, सदाचरण और सत्यप्रीति इत्यादि विषयों का वर्णन रामायण में मिलता है। राजा दशरथ की प्रजाहित के विषय में चिन्ता, राम की पितृभक्ति, और सत्यप्रीति, सीता का अनुपम पतिप्रेम, भरत की अवर्णनीय बन्धुप्रीति आदि उत्तम गुणों के प्रेमपूर्ण और सरस उदाहरण दूसरी जगह क्वचित् पाये जाते हैं।

उस काल में आर्यों की सभ्यता बढ रही थी। वसिष्ठ, विश्वामित्र, गोतम, इत्यादि महर्षि, राजाओं का आश्रय पाकर, धर्म-प्रसार और विद्या की उन्नति का काम बडी शीघ्रता से कर रहे थे। राजा जनक के पास विद्वान् लोगों का बडा जमाव था। स्वयं राजा जनक सब विद्याओं में अत्यन्त पारंगत था। स्त्रियों का उस समय बडा मान था। इस के सिवा, अनेक स्त्रियां तत्वज्ञान और वेदविद्या में निपुण थी। प्रथम तीन वर्णों को वेदविद्या का अधिकार था। यद्यपि आपस में भयंकर युद्ध होते रहते थे, तथा विद्योन्नति, धर्मप्रसार, कला-कौशल्य इत्यादि दूसरे उद्योग बन्द न थे। आज कल के सब प्रकार के अनाजो, सब प्रकार की धातुओं और सब प्रकार के जानवरों का उस समय के लोग उपयोग करते थे। व्याकरण, ज्योतिषशास्त्र, अध्यात्मविद्या इत्यादि गहन विषयों में लोगों की प्रगति हो रही थी।

वैदिक काल में आर्यों ने पंजाब में बस्तियां कीं। भारतीय काल में उन्हों ने गंगा-यमुना के किनारे के प्रदेशों में बस्तियां कीं। और फिर हिमालय की तलहटी से, आग्नये की ओर समुद्र तक का देश उन्हें मालूम हुआ। वे जहां जहां गये, वहां वहां उन्हो नें अपना धर्म, अपने आचार-विचार, खेतीवाडी और कलाकौसल्य की स्थापना की। सारांश, स्थूल दृष्टी से ई. स. के १००० वर्ष पहले ये बातें पूर्णता को प्राप्त होगई थीं। इसके बाद उनके आचार-विचार, धार्मिक विचार और समाजरचना में बडे बडे फर्क पडने लगे। और भाषा, तत्त्वज्ञान इत्यादि विषयों की एक प्रकार से बहुत वृद्धि होते हुए भी, धर्म-विचारों में एक बडी क्रान्ति हो गई।

पाठ तीसरा।

सूत्रकाल।

ईसाके १००० वर्ष पहले से लेकर ईसाके ३०० वर्ष पहले तक.

१. मगध देश का उत्कर्ष। २. ग्रंथरचना।
३. बौद्धधर्म का उदय। ४. सिकंदर बादशाह की सवारी।

१. मगध देश का उत्कर्षः—यह बात ठीक ठीक नहीं समझ पडती कि, रामायण और महाभारत में बतलाई हुई घटनाए हो जाने पर, आगे कितनेही शतकों तक, किस जगह कौन से राजवंश उदय हुए। तथापि ईसा के छठवें शतक से पहले मगध देश की बहुत बढती हुई। मगध को आज कल बिहार प्रान्त कहते हैं। भारतीय युद्ध के समय इस देश पर जरासंध नाम का पराक्रमी राजा राज्य करता था। जरासंध के बाद उसके वंश के बाईस पुरुषों ने मगध देशपर राज्य किया। ईसा के ६०० वर्ष पहले के करीब मगध देश का राज्य प्रद्योत नामक वंश में गया। इस वंश का पहला पुरुष शिशुनाग नाम का राजा था। इसमें उस वंश को शिशुनाग-वंश भी कहते हैं। शिशुनाग से चौथा पुरुष बिंबिसार बडा चतुर और परोपकारी राजा हुआ। उसने ईसा के ५३७-४८५ वर्ष पहले तक राज्य किया। बिंबिसार राजा के समय में ही

बौद्ध धर्म का संस्थापक गोतम बुद्ध लोगों को धर्मोपदेश करता था। बिंबिसार का पुत्र अजातशत्रु भी अपने बाप के समान ही पराक्रमी था। उसने अपने राज्य की मर्यादा बहुत बढाई। यह राजघराना ईसा के लगभग ४०० वर्ष पहले समाप्त हुआ।

इस के बाद, करीब ८० वर्ष तक, नंद-वंश में इस देश का स्वामित्व था। उतनी अवधि में राजा नंद और उस के आठ लडकों ने मगध देश पर राज्य किया। मगध देश की सत्ता उस समय सम्पूर्ण उत्तर हिंदुस्थान को लेते हुए पंजाब तक चली गई थी। जिस समय नंद-वंश का अन्तिम पुरुष गद्दी पर था उसी समय ग्रीस (यूनान) देश के बादशाह सिकन्दर ने हिंदुस्थान पर स्वारी की। फिर ईसा के ३२२ वर्ष पहले मौर्य घराने का संस्थापक चंद्रगुप्त मगध देश पर राज्य करने लगा। चंद्रगुप्त के समय में मगध देश की अत्यन्त उन्नति हुई, और वहां की सभ्यता भी बहुत बढ गई।

ईसा के १००० से २०० वर्ष पहले तक के काल में गंगा-यमुना के किनार रहनेवाले कुछ आर्य लोगों ने गुजरात, काठियावाड आदि प्रान्त जीतकर वहां बस्तियां कीं। ईसा के ४०० वर्ष उनकी राजधानी द्वारका शहर की बहुत तरक्की हुई। वहां समुद्रमार्ग से बहुत व्यापार होता रहता था। वैसेही मालवे में आर्यों ने बस्ती करके उज्जयिनी शहर बसाया। विंध्याचल के पूर्व दिशासे नीचे दक्षिण में उतरकर, वर्तमान महाराष्ट्रमें आर्योंनें बस्ती की। और वहां उनकी पैठण नामक राजधानी बहुत प्रसिद्ध हुई। फिर कृष्णा को भी पार करके आर्यों-ने खास दक्षिण किनारे तक अपने राज्य स्थापित किये। मगध देश की एक शाखा ने सीलोन का टापू भी जीत लिया। इस प्रकार ईसा के ३०० वर्ष पहले तक सारा देश आर्य्यमय हो गया था। जहां देखिये वहीं आर्यों का धर्म, उनके ग्रन्थ और उनकी संस्कृत भाषा का प्रचार हो गया। इसके सिवा, उनकी खेती, उद्योग-धन्दे आदि बातों की खास दक्षिण तक स्थापना हो गई।

२. ग्रन्थरचना:—इस काल में नवीन ग्रन्थरचना बहुत हुई। अनेक विद्वानों का मत है कि, पीछे बतलाये हुए सूत्रग्रन्थ और धर्मशास्त्र के सूत्र इसी काल में निर्माण हुए; और इसीसे इस काल को 'सूत्रकाल' कहते हैं। छापने की कला तो दूर रही; परन्तु लेखन कला भी जिस समय लोगों को मालूम न थी, ऐसे समय में संक्षिप्त सूत्रों में ही विस्तृत शास्त्रीय ज्ञान का संचय और

अभ्यास करना सम्भव था। इसी लिए सूत्रग्रन्थों की इतनी बडाई है। ज्यों ज्यों समाज की तरक्की होती गई, त्यों त्यों भाषा को भी निराला स्वरूप प्राप्त होता गया। और व्याकरणशास्त्र की जरूरत पडने लगी। शाकटायन और गार्ग्य पहले बडे व्याकरणकार थे। उनके बाद पाणिनि नाम का एक महाविद्वान् व्याकरणकार पैदा हुआ। उसका काल ईसा के पहले करीब आठवी शतक मानते हैं। उसने संस्कृत भाषा के व्याकरण के सूत्र इतने संक्षेप में बनाये हैं कि उन्हें देख कर विद्वान् लोग आज भी चकित हो जाते हैं। अष्टाध्यायी नाम की छोटी पुस्तक में उनका समावेश किया गया है : शास्त्रीय दृष्टि से यूक्लिड की भूमिति के समान उनकी योग्यता है। पाणिनि से करीब चार सौ वर्ष बाद वररुचि या कात्यायन नाम का दूसरा बडा व्याकरणकार हुआ। उसने वार्तिक सूत्र बनाकर पाणिनि के ग्रन्थ की पूर्ति की, फिर उस करीब तीनसो वर्ष बाद पतंजलि नामक व्याकरण का महाभाष्यकार हुआ। व्याकरण–शास्त्र के ये तीन महामुनि विख्यात हैं, और संस्कृत–साहित्य का कालनिर्णय करने के लिए इनका विशेष उपयोग होता है। इसीसे संस्कृत व्याकरण को 'त्रिमुनि-व्याकरण' कहते हैं। भूमिति के मूल तत्व यूनानियों को हिंदुस्थान से मिले। अंकगणित तो मूल आर्यों ने ही पूर्णता को पहुँचाया था। विशेषतः उसके दशांश अपूर्णांक की कल्पना मूल आर्यों ने ही निकाली थी। तत्त्वज्ञान, वैद्यक, इत्यादि विषयों पर भी बडे बडे ग्रन्थ इस काल में बने। वैद्यशास्त्र को आयुर्वेद कहते हैं। इस शास्त्र के ग्रन्थ, पहले पहल सिकन्दर बादशहा हिंदुस्थान से यूरोप को ले गया। यह बात तो यूरोपियन पंडित भी कबूल करते हैं, कि न्याय-शास्त्र को पहले आर्य विद्वानों ने ही पूर्ण दशा को पहुँचाया। कपिल नाम के विद्वान् पण्डित ने सांख्यशास्त्र की रचना की।

उसके बाद गौतम, कणाद आदि प्रसिद्ध न्यायशास्त्रकार हुए। उन्होंने न्यायशास्त्र को पूर्ण किया। जैमिनि के पूर्वमीमांसा सूत्र और बादरायण के उत्तरमीमांसासूत्र, इस काल के अन्त में, बौद्ध धर्म की उत्पत्ति के बाद बने। पूर्वमीमांसा में धर्मशास्त्र का विचार और उत्तरमीमांसा में ब्रह्मज्ञान का विचार है। इन सूत्रग्रंथों पर फिर अनेक विस्तृत टीकाएं हुई हैं.

३. बौद्धधर्म का उदय :—प्राचीन काल में आर्यों ने, बुद्धि और विद्वत्ता के जोर पर, प्रत्येक विषय में विचार और खोज करके ज्ञान की वृद्धि की।

और सारे राष्ट्र की उन्नति करने के लिए बहुत प्रयत्न किये। ज्ञान प्राप्त करने का उनका उत्साह बहुत बढा चढा हुआ था। उपर्युक्त प्रकार से जब आर्यों की उन्नति हो रही थी तब साथही दूसरे विषयों की तरह, धार्मिक विषयों में भी, वे बराबर विचार कर रहे थे। इस प्रकार जब कोई महापुरुष किसी नवीन धर्म का प्रचार शुरु करता तब उसका समावेश पुरातन धर्म में हो जाता था। परंतु इससे ऐसा नहीं होता था कि कोई नवीन ही धर्म उत्पन्न हो। ईसा के पहले छठवें शतक में गौतम बुद्ध नाम का एक महा विद्वान् पुरुष अवतीर्ण हुआ, और उसने लोगों को कुछ नवीन धर्मविचार सिखाये। कुछ वर्षों के बाद वे विचार नवीन धर्मस्वरूप में बदल गये। उस धर्म का फैलाव विशेषतः हिंदुस्थान के बाहर अधिक हुआ। इसीका नाम बौद्ध धर्म है। इस समय सब धर्मों में बौद्ध धर्म के लोगों की संख्या अधिक है। हिंदुस्थान में भी करीब एक हजार वर्ष तक इस धर्म की विशेष तरक्की थी। परंतु उसके बाद और कई विद्वान् धर्मप्रवर्तक पैदा हुए। उन्होंने बुद्ध के उत्तमोत्तम मतों का पहले के सनातन आर्यधर्म में समावेश कर लिया। इस कारण हिन्दुधर्म का जोर फिर बढा और केवळ बौद्ध धर्म का प्रभावहि हिंदुस्थान में रहा।

काशी के उत्तर रोहिणी नदी के किनारे कपिलवस्तु शहर में शुद्धोदन नाम का शाक्य लोगों का एक राजा राज्य करता था। पश्चिम ओर कोशल और दक्षिण ओर मगध के प्रबल राज्यों के बीच में शुद्धोदन का छोटासा राज्य था। ईसा के ५६७ वर्ष पहले शुद्धोदन को एक लडका हुआ। उसका नाम सिद्धार्थ रखा गया। यही बौद्ध धर्म का संस्थापक गौतमबुद्ध है। गौतम उसके कुल का नाम है। उसकी विद्वत्ता से फिर उसे लोग बुद्ध, अर्थात् 'ज्ञाता' कहने लगे। शाक्य वंश में जन्म होने के कारण उसे शाक्यमुनि अथवा शाक्यसिंह भी कहते हैं। वडे होने पर उसका मन संसार से विरक्त हुआ और वह घर-द्वार छोडकर तपस्या करने लगा। उसका मत यह हुआ कि, देहदण्ड करके मोक्ष-प्राप्ति नहीं हो सकती; किन्तु उत्तम आचरण से ही मुक्ति हो सकती है। अपने इसी मत के अनुसार, वह लोगों को उपदेश करने लगा—(ईसा से ५२२ वर्ष पहले)। मगध देश के राजा बिंबिसार ने उसे आश्रय दिया और उसके नवीन उपदेश का अपने 'राजगुरु' नामक राज्य में प्रचार किया। इस नवीन धर्म में ज्ञान का महत्त्व अधिक बतलाया गया है। इस लिए उस पंथ के लोगों ने

अपना नाम बुद्ध अर्थात् 'जाननेवाला,' या 'ज्ञानी' रखा। और इसीसे 'बौद्धधर्म' नाम पडा। बौद्ध धर्म के मुख्य अनुयायी संन्यासवृत्ति से रहने लगे। उनका मुख्य तत्त्व यह था कि किसीके साथ उपद्रव न करना चाहिए। इच्छा या वासना को नष्ट कर के पुनर्जन्म बंद करना और निर्वाण अर्थात् मोक्षपद पाना इस धर्म का अन्तिम ध्येय है। भिक्षा माग कर निर्वाह करनेवाले संन्यासी या भिक्षु गांव गांव उपदेश करते हुए फिरने लगे। स्त्रियां भी भिक्षु होकर उपदेश करने लगीं। इस प्रकार नवीन धर्म स्थापन करके गौतमबुद्ध अस्सी वर्ष की अवस्था में परलोक सिधारा,-(ईसा के ४८७ वर्ष पहले)। उसके बाद उसके अनुयायियों ने एक सभा की, और उसके वचन एकत्र करके उनके तीन खंड किये। उसे पीठक या करंडक कहा जाता है। इसी मंडलीनें धर्म-प्रसार का काम बडे वेग से शुरू किया। इससे बौद्ध धर्म का ग्रंथसमुदाय बहुत ही अधिक बढा। फिर सौ वर्ष के बाद एक दूसरी बहुत बडी सभा हुई। उस समय बौद्ध लोगों में दो पक्ष हो गये। उनमें से एक पक्ष यह देश छोडकर उत्तर और नैपाल और तिब्बत में चला गया। फिर उसने, चीन देश में जाकर ठेठ जापान तक, सब लोगों को नवीन धर्म की दीक्षा दी। इस प्रकार बौद्ध धर्म का प्रचार इतना हुआ कि, आज पृथ्वी पर बौद्ध धर्म के ही अनुयायी दूसरे धर्मों से अधिक हैं। इधर दूसरे पक्ष ने उस धर्म का प्रचार हिन्दुस्थान, ब्रह्मा, लंका या सीलोन इत्यादि देशों में किया। इसके लगभग सौ वर्ष बाद चन्द्रगुप्त के नाती अशोक ने ईसा के २४२ वर्ष पहले बौद्ध लोगों की तीसरी सभा की; और इस धर्म के ग्रन्थों का, उनके प्रचार का, और अगले उद्योग का उत्तम प्रबन्ध कर दिया। अशोक हिन्दुस्थान में बौद्ध धर्म का बडा आश्रयदाता हुआ।

बुद्ध का समकालीन महावीर नामक पुरुष पाटन के पास वैसली में पैदा हुआ। उसने जैन धर्म की स्थापना की। महावीर का ईसा के ५२७ वर्ष पहले देहान्त हुआ होगा। इस धर्म के तत्त्व प्रायः बौद्ध धर्म के तत्त्वोंसे मिलता झुलताहै। जैनों में श्वेतांबर और दिगंबर दो पंथ हैं, और करीब १५ लाख लोग हैं। यह धर्म यद्यपि अब भी जारी है तथापि उसकी वृद्धि बौद्ध धर्म के समान नहीं हुई।

४. सिकन्दर बादशाह की सवारी—(ईसा के ३२६–३२५ वर्ष पहले) कहते हैं कि, मिश्र देश के राजा और आसीरिया की रानी सेमिरामीस ने प्राचीन काल में पंजाब प्रांत पर चढाई की थी। परंतु उसका विश्वसनीय हाल और

तारीख नहीं मिलती । ईरान के बादशाह दारियस ने सिंधु नदी के पश्चिम ओर का भाग अपने राज्य में मिलाया । यह भाग पहले से भारतवर्ष में शामिल था। ईसा के ५१५ वर्ष पहले दारिअस के लडके जर्जिस ने ग्रीस देश पर चढाई की। उस समय उसके साथ हिंदुस्थान की शूर सेना गई थी । उसके बाद ग्रीक बादशाह सिकन्दर ने हिंदुस्थान पर सवारी की-(ईसा के ३२६ वर्ष पहले)। उस समय यूरप में ग्रीक लोक बहुत सभ्य और प्रबल थे । मध्य एशिया से पश्चिम की ओर गये हुए आर्य लोगों के ही ये वंशज थे । ईसा के पहले चौथे शतक में उस देश पर फिलिप और उसका लडका अलेक्जेंडर उर्फ सिकंदर* नाम के दो पराक्रमी बादशाह राज्य करते थे । सिकंदर बीस वर्ष की अवस्था से राज्य करने लगा । कुछ दिन बाद ईरानी लोगों से बदला लेने के लिए सिकंदर बादशाह ने ईरानपर चढाई की । उस समय उसकी उम्र ३० वर्ष की थी । ३५ हजार ग्रीक सेना उसके साथ थी । उसने सब पश्चिमी भाग जीतकर ईरान के राजा को अनेक लडाइयों में हराया । सिकंदर महापराक्रमी और राज्य-लोभी पुरुष था । ईरान और अफगानिस्तान जीतने पर वह खैबर-घाटी से अटक शहर के पास डोंगियों का पुल बांधकर सिंधु नदी पार करके हिंदुस्थान में आया । उस समय पंजाब में तक्षशिला में पौरस (पौरव) नाम का एक राज-पूत राजा राज्य करता था। झेलम नदी के किनारे सिकंदर ने उससे युद्ध किया। सिकंदर ने पौरस का पराभव कर के उसे कैद कर लिया । सिकंदर ने जब उससे पूछा कि, "मैं तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव करूं" तब, बिलकुल न डरते हुए राजा पौरस ने उत्तर दिया कि "जैसा राजा लोग राजाओं के साथ बर्ताव करते हैं"। यह सुनकर सिकन्दर बहुत खुश हुआ, और उसने उसका राज्य फिर उसे लौटा दिया। सिकंदर सारा हिंदुस्थान जीतना चाहता था, परंतु उसकी फौज बहुत दिनतक परदेश में रहकर घबडा उठी थी; इस लिए वह स्वदेश को लौट जाने के लिए आतुर हो गई थी । इस कारण सिकंदर सिंधु नदी द्वारा जलमार्ग से लौट गया । परंतु ग्रीस देश में पहुंचने के पहलेही एशियामाइनर के बाबिलोन शहर में उसे ज्वर आया और वह ३२ वर्ष की अवस्था में परलोक सिधारा।

---

* अलेक्जेन्डर को मुसलमान लोग अस्कन्दर कहते थे, इससे सिकंदर शब्द बना ।

सभ्य यूनानियों की यह चढाई हिंदुस्थान के इतिहास में बहुत महत्त्व की है। सिकंदर ने जगह जगह ग्रीक फोज की छावनियां मुकर्रर की, और बहुत से राजाओं से सुलह की। इससे जान पडता है कि, वह फिर हिंदुस्थान में आना चाहता था। सिकंदर के साथ ग्रीस के बहुत से विद्वान् लोग यहां आये थे। उन्होंने उस समय की स्थिति का बहुत अच्छा हाल लिख रखा है। उससे यह मालूम होता है कि, उस समय हिंदू लोगों की दशा किस प्रकार की थी। सिकंदर बादशहा हिंदुस्थान से अनेक विद्वान् पंडित और बडे बडे ग्रंथ ग्रीस देश को ले गया। यूरप के लोगों को हिंदुस्थान देश मालूम हो जाने के कारण कुछ दिन तक, दोनों का संबंध बढता गया। सिकंदर की इस सवारी से हिंदुस्थान के प्राचीन इतिहास की बहुतसी बातें मालूम होती हैं।

सिकंदर की मृत्यु के बाद उसका राज्य उसके सेनापतियों ने बांट लियां। एशिया का प्रदेश सेल्यूकस निकेटर के बांट में आया। सेल्यूकस ने ईसा के ३१२—२८० वर्ष पहले तक राज्य किया। यह मगध देश के राजा चंद्रगुप्त का समकालीन था। चंद्रगुप्त ने इसके पहलेही पंजाब और सिंधु नदी के पार हिंदुस्थान का भाग, ग्रीक लोगों से जीत लिया था। उसे वापस लेने के लिए सेल्यूकस ने हिंदुस्थान पर सवारी की—(ईसा के ३०५ वर्ष पहले)। परंतु चंद्रगुप्त के सामने उसकी कुछ भी न चली। चंद्रगुप्त से सुलह करके उसने उसके साथ अपनी लडकी का विवाह कर दिया। तब से वे परस्पर स्नेहभाव से बर्ताव करते थे। उनके राज्य आपस में मिले हुए थे और हिंदुकुश पर्वत उनकी सीमा थी। चंद्रगुप्त के दरबार में सेल्यूकस ने अपना मेगास्थनीज नाम का वकील रखा था। मेगास्थनीज का लिखा हुआ हिंदुस्थान का तत्कालीन वर्णन उपलब्ध नहीं है। उसके अवतरण, जो दूसरे ग्रंथकारों ने लिये हैं, वे मिलते हैं। ये अवतरण बडे महत्व के हैं। सेल्यूकस के बाद, करीब दो सो वर्ष तक, ग्रीक लोगों का हिंदुस्थान से अच्छा सम्बन्ध चला जाता था।

पाठ चौथा ।



बौद्धकाल ।

ईसा के ३०० वर्ष पहले से ईसा के ३०० वर्ष पीछे तक :

१. मौर्य घराना अशोक　　२. शुंग और आन्ध्र घराने ।
३. शकराजा कनिष्क ।　　४. बौद्धकालीन सुधार ।

१. मौर्य घराना:—(ईसा के ३२२-१८४ वर्ष पहले):—मगध देश की राजधानी पाटलीपुत्र, आजकल का पटना, शहर है । पूर्वोक्त चंद्रगुप्त नंद राजा की मुरा नामक शूद्र स्त्री से उत्पन्न हुआ था । इस लिए उसे मौर्य कहते हैं । जब किसी कारण से नंद ने उसे राज्य से निकाल दिया, तब वह पंजाब में जाकर सिकंदर बादशाह से मिला । वहां ग्रीक लोगों से युद्धकला का उसे अच्छा ज्ञान होगया । सिकंदर के चले जाने पर उसने पंजाब में बहुत सी फौज इकट्ठा की, और मगध देश पर चढाई करके वह राज्य ले लिया । इस प्रकार नंद वंश का पराभव होने पर पाटलीपुत्र में मौर्य वंश की स्थापना हुई-(ईसा के ३२२ वर्ष पहले) । चंद्रगुप्त ने पंजाब और उत्तर की ओर का सब प्रांत जीत कर अपने राज्य में मिला लिया, और सार्वभौम राज्य स्थापित किया । मध्य आशिया के बेक्ट्रीयाके ग्रीक सेल्यूकस नामक राजाकी पुत्री के साथ चंद्रगुप्त ने विवाह कर उसके साथ मित्रता संपादन की । चंद्रगुप्त के दरबारमें ग्रीक वकील मेगास्थनीज आठ वर्ष रहा था । उस का लिखा हुआ चंद्रगुप्त के राज्य और वैभव का जो हाल उपलब्ध है, उससे ऐसा जान पडता है कि चन्द्रगुप्त का राज्यप्रबन्ध अप्रतिम था । ईसा के २९८ वर्ष पहले चंद्रगुप्त का देहांत हुआ । उसके बाद उसके पुत्र चित्रगुप्त उर्फ बिंदुसार ने पचीस वर्ष राज्य किया । बिंदुसार के दो लडके थे । बडे का नाम सुशीमा और छोटे का नाम अशोक । बिंदुसार के बाद अशोक राज्य करने लगा-(ईसा के २७२ वर्ष पहले) ।

अशोक महावैभवशाली चक्रवर्ती राजा हुआ । उत्तर की ओर काबुल, कंदहार और हिमालय; पूर्व की ओर कटक, गंजाम; दक्षिण की ओर मैसुर

ओर पश्चिम की ओर काठियावाड उसके राज्य की सीमा थी। इतने विस्तृत प्रदेश में अशोक के शिलालेख पाये गये हैं। उनसे उसके राज्य-प्रबन्ध का बहुत हाल आज कल मालूम हुआ है। यद्यपि अशोक का राज्य भारी था, तथापि उसके राज्य का बंदोबस्त भी उत्तम था। अच्छे कायदे बनाकर और उत्तम प्रबन्ध करके उसने प्रजा को बहुत सुख दिया। बौद्ध धर्म को आश्रय देने के कारण अशोक विशेष प्रसिद्ध है। उसने यह धर्म स्वीकार करके अपने राज्य में जारी किया। मगध देश में उसने बहुत से विहार बनवाये और ६४००० धर्मोपदेशक नियत किये। इस 'विहार' शब्द से मगध देश का विहार नाम पडा। यही नाम अब भी चला जाता है। धर्म प्रचार के लिए उसने बौद्ध पंडितों की एक बडी सभा की, और भिन्न मतों की एकता की। उसने खास तौर पर खंभे खडे कराके उन पर, और बहुतेरे पहाडों के पत्थरों पर धर्म-संबंधी राजाज्ञाएं खुदवाकर प्रसिद्ध की। धर्म की व्यवस्था के लिए राज्य में उसने एक नवीन महकमा जारी किया। धर्म-प्रचार के लिए उसने देश देश में उपदेशक और वकील भेजे। स्वयं अपने पुत्र महेंद्र और कन्या संघमित्रा को उसने धर्म-प्रसार के लिए सीलोन टापू में भेजा। जो बौद्ध ग्रंथ अशुद्ध होगये थे उन सब का संशोधन कराया। ग्रीस, सिरिया, इजिप्ट, तिब्बत, चीन, ब्रह्मा, कंबोडिया, श्याम, जावा, सीलोन, इत्यादि देशों में अशोक के वकील गये थे। पश्चिमी देशों की अनेक उपयुक्त कलाओं का अशोक ने अपने राज्य में प्रचार किया। अशोक के पहले इमारतों में कलाकौशल और सुंदरता बहुत न थी। उसीके समय से इन बातों में तरक्की हुई। मौर्य पहाडों में वंशके खुद-वाये हुए बौद्ध मंदिर अब भी पाये जाते हैं। ईसा के करीब २३२ वर्ष पहले राजा अशोक का स्वर्गवास हुआ। तब से फिर धीरे धीरे उसके राज्य की उतरती कला आई; और ईसा के १८४ वर्ष पहले मौर्य घराने का अंत हुआ।

२. शुंग और आंध्र घराने:—मौर्य घराने के अंतिम राजा के पास पुष्यमित्र नाम का सरदार था। वह ईसा के १८४ वर्ष पहले मगध देश का राज्य करता था। उसके वंश को शुंग वंश कहते हैं। पुष्यमित्र का लडका अग्निमित्र बडा विद्वान् था। कालिदास के मालविकाग्निमित्र नाटक का वही नायक है। अग्निमित्र ने विद्या को उत्तम आश्रय दिया। कहते हैं कि महाभाष्यकार पतंजलि अग्निमित्रही के जमाने में हुआ। शुंग घराने ने ईसा के ७२ वर्ष

पहले तक मगध देश पर राज्य किया । उसके समय में, बहुत जगहों में, पहाडों में खोदी हुई गुफाएं तैयार हुईं । भाजा की गुफाएं राजा पुलिंदक ने ईसा के १२७ वर्ष पहले तैयार कीं । वैसेही कार्ली की गुफाएं इसी घराने के देवभूति राजा ने ईसा के ८६ वर्ष पहले तैयार कीं । यह बात खोज करनेवाले लोग बतलाते हैं । शुंग के बाद काण्व राजाओं ने कुछ वर्ष तक मगध पर राज्य किया । इसके बाद मगध देश आंध्रों के अधिकार में गया । ईसा के पूर्व पहले शतक में आंध्र घराने की हुकूमत मध्य हिंदुस्थान, मालवा, मगध और दक्षिण के एक बडे भाग पर थी । ये आंध्र लोग दक्षिण के मूल निवासी थे । आर्यों ने जब दक्षिण में प्रदेश करके उन्हें जीता, तब उन्होंने आर्यों की सभ्यता स्वीकार की । ईसा के तीन चार सो वर्ष पहले से लेकर स० २०८ ई० तक वे प्रबल थे । इस काल में भिन्न भिन्न भागों पर उनकी सत्ता थी । पहिले पहिल उनकी राजधानी कृष्णा नदी के मुखके पास धनकटक नगरमें थी । वहांसे पश्चिमकी ओर उनका राज्य बढता गया । तब उन्होंनें अपनी राजधानी प्रतिष्ठान नगर की । प्रतिष्ठान अथवा पैठन शहर उस समय बहुत प्रसिद्ध था । जिन दिनों पैठन में आंध्रों का राज्य था, उसी समय उज्जैन में राजा विक्रमादित्य ईसा के ५६ वर्ष पहलें राज्य करता था । उसीने संवत् नाम की वर्ष-गणना, अपने राज्यारोहण काल से शुरू की । उसके दरबार में बडे बडे विद्वान् पंडित थे । अनेक प्रसिद्ध ग्रंथ उसके समय में निर्माण हुए ।

३. शकराजा कनिष्कः-(सन् ७८ इसवी) हिंदुस्थान से वायव्य की ओर मध्य एशिया में ग्रीक लोगों का जो राज्य था, उसका उन्होंने बॅक्ट्रिया नाम रखा था । कुछ दिनों के बाद वह राज्य सिथियन लोगों ने ले लिया । उन्ही लोगों ने फिर हिंदुस्थान पर भी कई चढाइयां कीं । विद्वानों का अनुमान है कि, हिंदुस्थान में जिन 'शक' नाम के लोगों ने राज्य स्थापन करके अपनी वर्ष-गणना जारी की, वे शक और ये सिथियन एकही होंगे । इन्हीं लोगों में से 'कुशन'-वंशी राजा कनिष्क ईसा के पूर्व पहले शतक में काश्मीर और उसके आसपास के प्रदेश पर राज्य करता था । यह भी अशोकही के समान प्रसिद्ध राजा हुआ । उसके राज्य का विस्तार दक्षिण में आगरे से सिंध और गुजरात तक तथा उत्तर में यार्कन्द और खोकंद तक था । सन् ४० ईसवी के करीब उसने बौद्ध लोगों की चौथी सभा की, और उस धर्म की पुस्तकों का संशोधन

तथा भाषान्तर कराया। जिस प्रकार अशोक की तैयार की हुई धर्म-पुस्तक सीलोन, ब्रह्मा और पूर्व द्वीपों में प्रमाणभूत मानी जाती है, उसी प्रकार कनिष्क की तैयार की हुई पुस्तक को तिब्बत, तातार, चीन, जपान आदि उत्तरी देशों के बौद्ध लोग अपनी धर्म-पुस्तक मानते हैं। कनिष्क की राजधानी पुरुषपुर अथवा पेशावर थी। यहां उसने बुद्ध का बहुत बडा मंदिर बनवाया। उसकी गिरी हुई इमारत की नीवों से अभी हाल में बुद्ध की अस्थियां निकलीं, वे ब्रह्मी लोगों के सिपुर्द की गयी हैं। कहते हैं कि, कनिष्क ही ने शक नाम की वर्ष-गणना जारी की। इस शक का आरंभ स० ७८ ई० में हुआ। शकों की दूसरी एक शाखा ने पश्चिम और काठियावाड प्रान्त से आकर उज्जेन में राज्य स्थापन किया। उसमें से नहपान ने महाराष्ट्र पर चढाई की थी। दक्षिण में शकों की हुकूमत कुछही काल, अर्थात् स० १२४-१३२ ई० तक थी। उसे आंध्रभृत्य राजा पुलुमायी ने उठा दिया। उज्जैन में काठियावाड के शकों का राज्य स० ३९५ ई० तक था। गुप्तों ने उसका उच्छेद किया।

४. बौद्धकालीन सुधारः—अशोक के समय से, चौथे शतक के मध्य तक, हिंदुस्थान में बौद्ध धर्म की तरक्की थी। बौद्ध धर्म के प्रचार से प्राचीन वैदिक धर्म यद्यपि थोडा बहुत पिछल गया, तथापि संस्कृत भाषा की ग्रंथ-रचना कुछ बंद नहीं हुई। उस काल में भी आर्यों की बुद्धिमत्ता से संस्कृत में ग्रंथ निर्मित हुए, और वे आज तक सर्वमान्य हैं। पीछे बतलाये हुए जैमिनि के पूर्वमीमांसा सूत्र और बादरायण के उत्तरमीमांसा सूत्र इस काल में निर्माण हुए। उनमें बौद्धमत के खंडन करने का प्रयत्न किया गया है। स्मृतिग्रंथों का उदय इसी काल में हुआ। मनु, याज्ञवल्क्य, पराशर इत्यादि अनेक स्मृतिकार हुए। उनमें मनुस्मृति प्राचीन और सर्वमान्य है। इन स्मृतिग्रंथों में आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त तीन भाग हैं। उन में हिंदूधर्म का अधिकांश समावेश हुआ है। यही स्मृतियां हिंदुओं के मूल कायदे हैं।

तथापि बौद्धधर्म का फैलाव प्राकृत भाषाओं के द्वारा विशेष हुआ। इससे प्राकृत भाषाओं की तरक्की हुई, और बहुत श्रेष्ठ दर्जे का साहित्य उनमें निर्माण हुआ। उनमें महाराष्ट्रीय भाषा अग्रेसर है। वही आज कल की मराठी भाषा की जननी है। बौद्धों का बहुत बडा ग्रन्थसमूह इस काल में निर्माण हुआ। प्रसिद्ध बौद्ध ग्रन्थकार नागार्जुन और अश्वघोष तथा वैद्यशास्त्रकर्ता चरक, कनिष्क के समय में हुए होंगे।

हिन्दुस्थान में जो पहाडों में खुदी हुई गुफाएं है, उनमें से नवदशांश बम्बई इलाके में हैं। ये सब कठिन पत्थरों में खुदी हुई हैं । उनमें से कार्ला, कन्हेरी, नासिक आदि स्थानों की गुफाएं बहुत प्रसिद्ध हैं। ये गुफाएं बहुत करके बौद्ध काल की हैं । उनकी नक्शकारी, मजबूत बनावट और भव्य मूर्तियां देखने से इस बात का बहुत अच्छी तरह अनुमान किया जा सकता है कि, उस समय शिल्पकला कितनी उन्नत दशा में थी। वेरूल की गुफाएं बहुतही पीछे बनी हैं।

इस काल में वैद्यशास्त्र आदि विषयों में, बहुत खोज करने के बाद, जो ग्रन्थ बने, उनके भाषान्तर फिर पश्चिम की ओर गये। शस्त्रक्रिया का प्रचारक सुश्रुत किस समय हुआथा इसका ठीकठीक पत्ता नहीं लगता। जान पडता है कि, जातिभेद की प्रबलता इस समय विशेष न थी। बौद्धधर्म को जबतक राजाश्रय रहा, तब तक वह अच्छा टिका; पर राजाश्रय छूटते ही उसका जोर कम हो गया, और हिन्दूधर्म की फिर उन्नति हो चली।

पाठ पांचवां।

पौराणिक काल।

सन ३०० ई. से सन १००० ई. तक।

१. अयोध्या, उज्जैन और कन्नोज के राजवंश।

२. हिन्दू धर्म का पुनरुज्जीवन। ३. पौराणिक काल का सुधार।

४. मध्यकालीन राजपूत राज्य। ५. विदेशियों की चढाई।

१. अयोध्या, उज्जैन और कन्नोज के राजवंशः—वास्तव में पुराण बहुत पुराने हैं, और उनकी उत्पत्ति के विषय में विद्वानों का बहुत मतभेद है। वे बहुत पहले से पाये जाते हैं। उनमें जगत की उत्पत्ति और प्रसिद्ध राजपुरुषों का इतिहास दिया है। परन्तु ईसवी सन के चौथे शतक में, बौद्ध धर्म का पराभव करने के लिए, जब हिन्दू धर्म की जागृति हुई, उस समय हिन्दू देवताओं को महत्त्व देने के लिए पहले के पुराणों में अनेक फेरफार किये गये। अर्थात् पुरानी नींव पर पुराणों की नवीन रचना की गई। जान पडता है कि, यह नवीन रचना का काम स. २५० ई० के करीब शुरू होकर आगे तीस चार सौ वर्ष तक जारी था। इसी लिए इस काल का नाम 'पौराणिक काल' रखा है।

मगध देश का वैभव आंध्रों ने कम किया, उसे गुप्तों ने चौथे शतक में फिर स्थापित किया। यह गुप्त वंश स. ३१९–२० ई० से आगे करीब दो सो वर्ष पाटलीपुत्र ओर अयोध्या में राज्य करता था। इस वंश ने गुप्त नाम का एक शक चलाया था। गुप्तवंशी राजा पराक्रमी थे। उनमें से कुछ राजाओं ने तो हिन्दुस्थान का आधिकांश अपने अधिकार में कर लिया था। उस वंश में पहला चक्रवर्ती राजा समुद्रगुप्त हुआ। उसका पुत्र चन्द्रगुप्त भी बापही के समान पराक्रमी हुआ। विक्रमादित्य नाम धारण करके अयोध्या को उसने अपनी राजधानी बनाया। उसने मालवा प्रान्त ओर उज्जैन शहर जीता। कहते हैं कि, उसीके दरबार में रघुवंशकार कालिदास आदि नव विद्वद्रत्न थे। उसने स. ३७५–४१३ ई. तक राज्य किया। फा–हियान नाम का विद्वान् चीनी पुरुष, उसके जमाने में, अर्थात् स. ३९९–४१३ तक हिन्दुस्थानमें बौद्ध धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिए घूम रहा था। उसके लेखों से उस समय का बहुत सा हाल मालूम होता है। उससे जान पडता है कि उस समय हिन्दुस्थान की दशा बहुत अच्छी थी। फा–हियान, जल–मार्ग से सीलोन गया ओर वहां से जावा द्वीप होते हुए चीन को लौट गया। उसके समय में बौद्ध धर्म हिन्दुस्थान में बहुतही जोर पर था।

चन्द्रगुप्त के लडके कुमारगुप्त ने सन् ४१३–५५ ई. तक राज्य किया। उसे पश्चिम ओर से श्वेतहूणों ने बहुत दुःख दिया। और उन्होंने स.४८० ई.में गुप्त राज्य भ्रष्ट कर दिया। इसके बाद करीब पचास वर्ष तक हूणों का बहुत बडा राज्य ईरान से उत्तर हिन्दुस्थान तक फैला था। उनका राजा मिहिरकुल बहुत दुष्ट था। स. ५२८ में गुप्त राजा बालादित्य और मालवा के राजा यशोधर्मा ने उसे पराजित कर के काश्मीर में भगा दिया।

सातवें शतक के आरम्भ में स्थानेश्वर का राजा हर्ष, बहुत पराक्रमी हुआ। उसने स. ६०६–६१२ ई. तक सारा उत्तर हिन्दुस्थान जीत कर कन्नौज शहर को अपनी राजधानी बनाया। उसी समय दक्षिण में पराक्रमी चालुक्य राजा पुलकेशी (स. ६०८–६४२ ई.) राज्य करता था। इस कारण राजा हर्ष दक्षिण देश न जीत सका। यह राजा हर्षवर्धन शिलादित्य के नाम से प्रसिद्ध है। उसने स. ६०६ से ६४८ ई. तक राज्य किया। कादम्बरी का कर्ता बाण कवि इसीके दरबार में था। उसने हर्षचरित काव्य लिखा है। रत्नावली नाटक का कर्ता यही हर्ष है।

यद्यपि उसका झुकाव बौद्धधर्म की ओर था, तथापि दूसरे पंथों पर भी उसकी कृपादृष्टि रहती थी । उस काल में हिन्दुस्थान में कुछ राजा बौद्ध और कुछ हिन्दूधर्मी थे । दोनों प्रकार के राजा दोनों धर्मों के लोगों को दान देते थे । एकही कुटुम्ब में बाप हिन्दू और लडका बौद्ध ! ऐसी दशा थी । एक हजार वर्ष तक ये दोनों धर्म शान्ति के साथ यहां बने रहे । मथुरा में बौद्ध धर्म की प्रबलता थी, और हरिद्वार वर्तमान समय के अनुसार, हिन्दुओं का पवित्र स्थान था । हर्ष के समय में कन्नौज शहर बहुत तरक्की पर था । उसी प्रकार प्रयाग और काशी, हिन्दुओं के पवित्र स्थान, उन्नतावस्था में थे । अनेक स्थानों में बडे बडे बुद्ध विहार थे । उनमें नाना शास्त्रों का अध्ययन होता रहता था । इसीके समय में प्रसिद्ध चीनी प्रवासी हुएनसंग हिन्दुस्थान में आया । यहां स. ६२९–४५ ई. तक रह कर उसने सारे देश का पर्यटन किया । हिन्दुस्थान और हर्ष राजा के विषय में उसने जो कुछ हाल लिख रखा है, वह बडेही महत्त्व का है । अस्तु ।

हर्ष के बाद उसका राज्य नहीं टिका । इसके बाद यशोवर्धन नाम का एक राजा कन्नौज में हुआ । उसके दरबार में भवभूति कवि था (स. ७३० ई.)। विक्रमशिला और नालन्दा में बौद्ध लोगों के बडे बडे विहार थे । इस काल में आर्यभट्ट (ज. स. ४७६ ई.), वराहमिहिर (मृ. स. ६८७), और ब्रह्मगुप्त (स. ६२८) ये तीन प्रसिद्ध ज्योतिषी क्रमशः पाटलीपुत्र, उज्जैन और भीलमाल (राजपुताना) में प्रसिद्ध हुए ।

२. हिन्दू धर्म का पुनरुज्जीवनः—हर्ष की मृत्यु के बाद, मुसलमानों का अंमल जारी होने के समय तक, जगह जगह अनेक राजपूत राज्य थे । उनमें चक्रवर्ती राजा कोई नहीं हुआ । इस काल में बौद्ध धर्म घटने लगा, और हिन्दूधर्म का पुनरुज्जीवन शुरू हुआ । विद्या-प्रचार आदि कामों में हिन्दुओं ने बौद्धों के ही मार्ग का अवलम्बन किया । बौद्ध भिक्षुओं की ही तरह हिन्दुओं के संन्यासी विद्यादान के काम में कष्ट सह कर परिश्रम करने लगे । इसी प्रकार धीरे धीरे बौद्धधर्म की शक्ति कम हुई, और हिन्दूधर्म के नवीन स्वरूप ने जोर पकडा । इस पुनरुज्जीवन के काम में प्रयत्न करनेवाला पहला धर्मोपदेशक बिहार प्रान्त का रहनेवाला कुमारिलभट्ट है । यह सातवें शतक के अन्त में था । हिंदुओं के शास्त्रों के छे मुख्य भाग हैं । उन्हें षड्दर्शन कहते

हैं। उनमें से अन्त के दो, पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा, भागों का बौद्धधर्म की प्रबलता से लोप हो गया था। परंतु इस पुनरुज्जीवन-काल में पूर्वमीमांसा पर कुमारिलभट्ट ने विस्तृत टीका लिखकर यज्ञयागादि कृत्यों का समर्थन किया। उसी प्रकार फिर आठवें शतक में उत्तरमीमांसा का समर्थन करके, महाभारतान्तर्गत भगवद्गीता के आधार पर शंकराचार्य ने वेदान्त का प्रतिपादन किया। इस प्रकार कुमारिलभट्ट और शंकराचार्य ने हिंदूधर्म के पुनरुज्जीवन का काम पूर्ण किया। दक्षिणी सिरे से लेकर उत्तर और हिमालय तक और द्वारका से लेकर पूर्व-समुद्र तक घूमकर शंकराचार्य ने चारों दिशाओं में मठ स्थापन किये। इनका प्रभाव अब भी सारे भारतवर्ष में है। शंकराचार्य का ग्रंथभांडार विपुल है। उसका पठन आज तक बराबर श्रद्धापूर्वक जारी है। हिमालय पर केदारनाथ में बत्तीस वर्ष की अवस्था में शंकराचार्य का अंत हुआ—(जन्म वैशाख शु. १० शके ७१० मृत्यु वैशाख शु. १५ शके ७४२; सन ७८८–८२२)। बादरायण के ब्रह्मसूत्रों पर शंकराचार्य ने भाष्य किया। वह शांकरभाष्य के नाम से प्रसिद्ध है।

शंकराचार्य के धर्म-तत्त्वों का, और उनके उदात्त विचारों का, भिन्न भिन्न पुरुषों ने सारे देश में प्रचार किया। उससे फिर अनेक पंथ और कई प्रकार की उपासनाएं उत्पन्न हुईं। रामानुज (स० ११५०), मध्वाचार्य (ज. स. ११९९), रामानंद (स. १३००–१४००), चैतन्य (स० १४८५–१५३३), ये वैष्णव पंथ के बडे साधु हुए और उनके अनुयायी भी आज बहुत हैं। वल्लभ स्वामी ने (स० १५२० ई०) कृष्णभक्ति का विशेष प्रसार किया। हिंदु मुसल्मानों की मित्रता करनेका प्रयत्न कबीरनें किया (स. १३८०–१४२०)।

३. **पौराणिक काल का सुधारः**—इस पौराणिक काल में संस्कृत विद्या को उत्तेजन मिला, और अनेक बडे बडे ग्रंथ निर्मित हुए। परंतु वे स्वतंत्र नहीं हैं, किन्तु पुराने आधार पर नवीन रचे हुए हैं। बहुत से काव्यग्रंथ स्वतंत्र भी हैं। प्रसिद्ध पंचमहाकाव्य इसी काल में निर्माण हुए। इसी समय पुराणों की वर्तमान रचना तैयार हुई। वैसेही पहले के अनेक ग्रंथों पर, और सूत्रों पर, इस काल में बडे बडे भाष्य हुए। विशेषतः गोविंदस्वामी, केशवस्वामी, आदि 'स्वामी'—नामधारी भाष्यकार इस काल में हुए।

इसके पहले प्राकृत भाषा का उपयोग विशेष होता था। वह बंद हो गया और संस्कृत भाषा का फिर प्रचार हुआ। काव्य, नाटक, उपन्यास, साहित्य—

ग्रंथ, शिल्पकला, ज्योतिष, गणित, वेदान्त इत्यादि विषयों पर अनेक संस्कृत ग्रंथ इस काल में तैयार हुए । इस काल के देवालय और इमारतें देखने से ज्ञान पडता है कि, उस समय शिल्पकला की भी अच्छी तरक्की थी । ज्योतिःशास्त्र पूर्णता को प्राप्त हुआ । अंकगणित और बीजगणित की भी बहुत प्रगति हुई । आठवें शतक में पहले पहल अरब लोगों ने बीजगणित का भाषान्तर किया, और वहां से फीर वह यूरप में गया । पंचतंत्रकार विष्णुशर्मा, भट्टी, बाणभट्ट, दंडी, भारवि, सुबंधु, भर्तृहरि आदि कवि और ग्रंथकार इसी काल में हुए ।

४. मध्यकालीन राजपूत राज्यः—जिस समय गुप्तवंश का राज्य उन्नत दशा में था, उसी समय गुजरात प्रान्त के वल्लभीपुर में वल्लभी वंश का राज्य स्थापित हुआ । वलभीपुर भावनगर के समीप था । इस राज्य का संस्थापक भट्टार्क पहले गुप्तों के दरबार में था । यह राज्य स. ४६०–७६६ तक कायम था ।

गुजरात में वल्लभी वंश का अन्त होने पर चावडा वंश की हुकूमत शुरू हुई । इस वंश के पहले राजा वनराज ने सन् ७४६ में पट्टन शहर बसाया । दो सो वर्ष तक इस वंश का राज्य गुजरात में था । इसके बाद उसे दक्षिण के चालुक्य राजाओंने जीत लिया–(सन् ९४३)। चालुक्य वंश का पहला राजा मूलराज बडा पराक्रमी था । उसका लडका चामुंड जब पट्टन में राज्य कर रहा था तब महमूद गजनवी ने सोमनाथ पर चढाई करके पट्टन शहर को जीत लिया । महमूद के चले जाने पर वह राज्य फिर चालुक्यों को मिला । चालुक्यों के बाद कुछ दिन तक गुजरात में बाघेल वंश का राज्य था । इसके बाद सन् १२९७ ई. में गुजरात प्रान्त अलाउद्दीन खिलजी ने जीत लिया ।

नवें शतक से, इस देश में, भिन्न भिन्न स्थानों में, अनेक छोटे बडे राज्य उदय हुए । मगध देश पर पालवंशी राजा राज्य करते थे । वे बौद्धधर्मी थे । तिब्बत में बौद्ध धर्मका प्रचार उन्होंने किया । इस वंश के सत्रह राजा प्रसिद्ध हैं । उनके जमाने में संस्कृत भाषा की प्रबलता थी ।

बंगाल प्रान्त में ग्यारहवें शतक के अन्त में 'सेन' नाम के राजा प्रमुख थे । सेन वंश का राज्य बख्तियार खिलजी ने सन् १२०२ में जीत लिया ।

कन्नोज में जब राज्यपाल नाम का राजा राज्य करता था, तब सुलतान महमूद गजनवी ने उस पर चढाई की । इसके बाद राठोडवंशी राजपूत राजाओं ने कनोज का राज्य जीत लिया । उस वंश के सात राजा हुए । उनमें से राजा जयचन्द के जमाने में महमूद गोरी ने कनोज का राज्य जीत लिया । उसी राठोड वंश के पुरुष ने फिर जोधपुर के राज्य की स्थापना की ।

नवें शतक के प्रारम्भ में परमार राजपूतों ने धार में राज्य स्थापित किया। इस घराने का मुंज राजा प्रसिद्ध है। उसने संस्कृत भाषा को उत्तेजन दिया। मुंज के बाद, उसका भतीजा प्रसिद्ध राजा भोज (सन् १०१०-१०५३) राज्य करता था। विद्वानों और कविजनों का वह आश्रयदाता था। उसने संस्कृत भाषा को अधिक उत्तेजन दिया। गुलामवंशी सुलतान अल्तमश ने सन् १२३२ ई. में उज्जैन शहर जीत लिया, और फिर अलाउद्दीन खिलजी ने धार के परमारों को पराजित किया।

पंजाब में भी राजपूत राज्य थे; परन्तु वह प्रान्त सब से पहलेही मुसलमानों के हाथ में गया। स. ७२६ ई. में अनंगपाल ने दिल्ली में तुवरवंशी राजपूतों का राज्य स्थापन किया। उस वंश के उन्नीस पुरुषों ने वहां राज्य किया। अन्तिम राजा निपुत्री होने के कारण उसकी लडकी के लडके अर्थात् अजमेर के चौहान-वंशी पृथ्वीराज को, दिल्लीका राज्य मिला। स. ११९३ ई. में मुहम्मद गोरीनें इसे जित लिया। महाराष्ट्र के राजवंशों का हाल आगे भाग ३ पाठ १ में दिया है।

ठेठ दक्षिण में पांड्य, चोल और केरल नाम के बहुत प्राचीन राज्य थे। वे बहुत वर्षों तक कायम रहे। कांची में, अर्थात् चोलमंडल में, बहुत दिन तक पल्लवों का राज्य था। 'कारोमंडल' चोलमण्डल का ही अँगरेजी अपभ्रंश है। मैसूर प्रान्त में 'गंग' नामक एक घराना था। मुसलमानों के आने के पहले द्वारसमुद्र में होयसल बल्लालों का राज्य प्रबल हुआ था। आपस में लडने के कारण इन राज्यों का उत्कर्ष नहीं हो सका। अन्त में अल्लाउद्दीन खिलजी के सेनापति मलिक काफूर ने दक्षिणी सिरे तक, लढाई करके ये सब राज्य नष्ट कर दिये-(सन १३१० ई.)।

पांड्य लोग रोमन लोगों से मोतियों का व्यापार करते थे। उनकी राजधानी मथुरा-मीनाक्षी है। चोलवंश की राजधानी तंजौर है। उनका उत्कर्ष राजराज नामक राजा के समय में हुआ-(स ९८५-१०१० ई.)। इसने सीलोन टापू जीता। इतनाहीं नहीं, किन्तु वर्तमान समय के मद्रास इलाके का अधिकांश उसके ही हाथ में था। पश्चिम की ओर केरल नामक राज्य था? उसमें मलबार और कानडा प्रान्त शामिल थे।

५. विदेशियों की चढाई—उस समय पूर्व और पश्चिम, दोनों किनारों से, जलमार्गद्वारा, परदेशियों का सम्बन्ध भारत से शुरू हो गया था। जगत के

सम्पूर्ण इतिहास की ओर सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करने पर जान पडता है कि, स्वतंत्रता और ऐश्वर्य का उपभोग भारतीय आर्यों ने जितना अधिक किया उतना बहुतही थोडे लोगों ने किया होगा । बिलकुल प्राचीन वेदकाल से लेकर मुसल्मानों के आगमन तक हिन्दुओं के राज्य कायम थे । इतने बडे समय में अनेक परदेशी लोगों नें वायव्य की ओर से चढाइयां कीं। कितने ही अवसरों में, बहुत बहुत प्रयत्न करने पर, विदेशियों नें पंजाब का कोई राज्य अथवा समीप का कोई प्रदेश जीत पाया; पर सारा देश अकबर बादशाह के जमाने तक विदेशियों के हाथ में नहीं गया! आर्यों की राज्यपद्धति ही ऐसी थी कि, उसके कारण छोटे छोटे अनेक राज्य निर्माण होते, और उनमें परस्पर प्रेमभाव न होने के कारण विदेशियों को भीतर आने का मौका मिलता, तथापि विदेशी अंमल बहुत समय तक न टिकता था। सिकन्दर बादशाह यहां रहही नहीं सका । उसके जो कुछ आदमी पीछे रह गये उन्हें चन्द्रगुप्त ने भगा दिया । सौ वर्ष के बाद बॅक्ट्रिया के ग्रीक लोगों ने फिर भी हिन्दुस्थान पर सवारी की उस समय मगध देश के पुष्यमित्र ने उन्हे बहार निकाल दिया । ग्रीक लोगों को यहां यवन कहते थे। यवनों के बादशाहों ने आकर इस देश में करीब सो वर्षतक राज्य किया; परन्तु उन्हें उज्जैन के विक्रमादित्य ने ईसा के ५७ वर्ष पहले के करीब लौटा दिया । गौतमीपुत्र पुलुमायि शातकर्णी ने शकों की दूसरी एक टोली के राजा नहपान का पराभव किया–(स. १२६)। शकों के बाद यूची नाम के लोग हिन्दुस्थान में आये। उनका, चौथे शतक में, समुद्रगुप्त ने पराभव किया। पांचवें शतक में श्वेतहूण आये । उन्हें उज्जेन के राजा यशोधर्म ने जीता। सातवें शतक में फिर हूण लोग आये । उनका पराजय कन्नौज के श्रीहर्ष ने किया । इसके बाद तीन सौ वर्ष तक हिन्दुस्थान पर विदेशियों की चढाई नहीं हुई । सारांश, विदेशियों के साथ यहां के लोग सतत पन्द्रह सौ वर्ष तक लडते रहे और अपने राज्य का अस्तित्व कायम रखा । ई. स. १००० लगभग आर्यों के प्राचीन सुधार का लय हो गया, और हिन्दुस्थान के अधिकांश भाग में मुसल्मानों का अंमल जारी हुआ। इसके बाद मुसल्मानों का भी ऱ्हास हुआ और हिन्दुओं का पुनरुज्जीवन होने लगा । इसी बीच में पश्चिमी आर्य लोग इधर आये, और अन्त में उन्हीं लोगों में से अँगरेजों की अधीनता में हमारा यह प्राचीन देश चला गया । अब अगले भाग में यह विस्तारपूर्वक बतलाया जायगा कि, उपर्युक्त सब हाल कैसे हुआ ।

भाग दूसरा ।

मुसलमानी रियासत ।

पाठ पहला ।

मुसल्मानों का हिन्दुस्थान में प्रवेश ।

सन् १०००–११८९ ईसवी तक ।

१. मुसल्मानों का पूर्ववृत्तान्त । २. उनके पंथ और उनका विस्तार ।
३. सुलतान महमूद गजनवी । ४. सोमनाथ की सवारी और महमूद की मृत्यु ।

१. मुसल्मानों का पूर्ववृत्तान्तः—सन् ५७० ई. में अरब देश के मक्का शहर में मुसलमानी धर्म के संस्थापक मुहम्मद पैगम्बर का जन्म हुआ। छुटपनही से उसके मन में बराबर धर्म–सम्बन्धी विचार उठा करते थे। चालीस वर्ष की अवस्था तक भिन्न भिन्न धर्मों का विचार करके उसने एक नयाही धर्म स्थापन करने का निश्चय किया । इसके बाद उसने प्रकट किया कि, 'सत्य धर्म का प्रचार करने के लिए मुझे ईश्वर ने भेजा है' । यह बात लोगों में प्रकट होजाने पर वह सब को अपने नये धर्म का उपदेश करने लगा। इस कारण मक्का में लोग उसे तकलीफ देने लगे । इस लिए स. ६२२ ई. में वह मक्के से मदीने भग गया । इस पलायन को अरबी भाषा में 'हिजरा' कहते है। इसीसे अरबी सन् को 'हिजरी' संज्ञा मिली है। पहले पहल मुहम्मद के नातेदारो ने उस के धर्म की दीक्षा ली। इसके बाद मदीना में उसे बहुत अनुयायी मिले। तथापि जब उसने समझा कि, इतनेही से हमारे धर्म का प्रचार जोर से नहीं हो सकता, तब उसने ईश्वरी प्रेरणा से एक ऐसी आज्ञा प्रसिद्ध की कि, 'दुराग्रही लोगों को नम्रता का उपदेश अच्छा नहीं लगता। इस लिए तरवार के जोर पर धर्म–प्रचार करो। लढाई में यश आने पर अपना धार्मिक हेतु सिद्ध होगा, और इस लोक में अपनी उन्नति होगी; तथा लढाई में अयपश आने से मरण हो जाने पर मोक्ष–प्राप्ति होगी।' इस उपदेश के कारण मुस॰ ल्मानों में फौजी आवेश की हवा समा गई और उनकी सत्ता जोर से बढने लगी।

उस समय ईसाई आदि पश्चिमी धर्मों में बडे गडबड उत्पन्न हुए थे । ऐसी दशा में अपने धर्म का प्रसार करने की इच्छा से मुहम्मद ने यह जाहिर किया कि, 'मूल के सच्चे धर्म का ऱ्हास हो रहा है, इस लिये सच्चे धर्म का पुनरुज्जीवन करने के लिए परमेश्वर स्वयं ग्रन्थ लिखकर दूतों के हाथ से मेरे पास भेज देता है।' इस रीति से उसने आगे जो ग्रन्थ प्रसिद्ध किया उसे कुरान कहते हैं। यही मुसलमानों का धर्म–ग्रन्थ है ।

मुहम्मदी धर्म के मुख्य तत्व ये हैं कि ईश्वर एक है, वह पापपुण्यका फल सब को देता है। मनुष्य का पुनर्जन्म नहीं होता। सब मृत पुरुषों की आत्माएं वैसीही पडी रहती हैं, और जगत् के अंत में ईश्वर उन सब का एकदम न्याय करता है, और उनके पापपुण्य के अनुसार नर्कवास अथवा स्वर्गवास देता है। इसके सिवा प्रतिदिन शुचिर्भूत होकर तीन वार नमाज पढना, गरीबों को दान-धर्म करना, न्याय से चलना, मद्यपान और मूर्ति–पूजा न करना और प्रतिवर्ष मक्का की यात्रा करना, इत्यादि बातों के लिए कुरान में सख्त ताकीद गई है।

धीरे धीरे मुसल्मानी धर्म बढने लगा। मुहम्मद के उपदेश से उसके अनुयायियों के मन में राज्यपद की आशा; लूट का लोभ; कीर्ति की आकांक्षा और स्वर्गसुख की इच्छा उत्पन्न हुई । वे आसपास का प्रदेश जीत कर मुसल्मानी धर्म का प्रचार करने लगे । मक्का में काबा नाम का देवालय था। उसकी मूर्ति तोड कर मुहम्मद ने वहा मशजिद बनाई । आसपास चढाइयां करते हुए, बीमार होकर, मुहम्मद स. ६३२ में मर गया। उसका दफन मदीना में हुआ । मुहम्मद बडा बुद्धिमान्, शूर, बलवान्, शान्त और संकट समय में न डगमगानेवाला, धीर पुरुष था। वह न्याय करने में अत्यन्त कठोर, परन्तु मन से उदार, और निस्सीम ईश्वरभक्त था।

२. मूसल्मानों के पंथ और उनका विस्तार:—मृत्यु के समय मुहम्मद ने अपने अनुयायियों की एक सभा नियत करदी । और उसने यह प्रबन्ध कर दिया कि, यही सभा धर्म और राज्य की वृद्धि करने के लिए एक योग्य पुरुष नियत करके उसे 'खलीफा' की पदवी दिया करे । आगे बहुत दिनों तक उसकी यह व्यवस्था कायम रही। खलीफों की गद्दी कुछ दिन तक मदीना में थी । फिर वह डमास्कस, बगदाद इत्यादि स्थानों में गई । इस समय कॉन्स्टांटिनोपल् का तुर्क सुलतान ही मुसल्मानों का खलीफा समझा

जाता है। मुहम्मद के पीछे क्रमशः अबूबकर, उमर, उस्मान और अली नाम के चार खलीफा हुए। अली, मुहम्मद का दामाद, अर्थात् उसकी लडकी फातिमा का पति था। उसके हसन और हुसेन दो लडके थे। अली के समय से खलीफा के पद के लिए मुसलमानों में झगडे उपस्थित हुए और दो पक्ष हो गये। एक पक्ष कहता था कि, खलीफा का पद मुहम्मद के वंश ही में रहना चाहिए; और दूसरा पक्ष कहता था कि, जिसको धर्मसभा निश्चित कर दे उसे मिले; फिर वह मुहम्मद के घराने का हो, चाहे न हो। इन दोनों पक्षों के फिर भयङ्कर युद्ध हुए और हसन–हुसेन तथा उनके पक्ष के लोग कतल में मारे गये। हिन्दुस्थान में मुसल्मान जो ताजिया निकालते हैं, वे इसी कतल के प्रदर्शनरूप हैं। हसन और हुसेन के पक्षवालों को 'शिया' कहते हैं। वे लोग अली के पहले के तीन खलीफों को नहीं मानते। दूसरे पक्ष को सुन्नी कहते हैं। ये मुसलमानों के दो मुख्य पन्थ हैं। शिया पन्थकी प्रवृत्ति विशेषतः ईरान में है। मुहम्मद के घराने के पुरुषों को सैय्यद कहते हैं।

मुहम्मद के बाद, तीन चार सौ वर्ष में, मुसल्मानी राज्य और धर्म का फैलाव चारों दिशाओं में हुआ। ईरान, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, मध्यएशिया और उत्तर आफ्रिका के प्रान्त उनके अधिकार में आ गये। इन सब देशों के लोगों ने मुसल्मानी धर्म की दीक्षा ली। यूरप के नैर्ऋत्य कोण जेबल्तरीक (तरीक का बनाया हुआ किला जो जिबराल्टर के नाम से प्रसिद्ध है) से मुसल्मान यूरप में आये और उन्होंने स्पेन देश को अपने अधिकार में लिया। कुछ काल के बाद पश्चिम ओर के देशों में उनकी सत्ता का ऱ्हास हुआ और क्रिश्चियन धर्म की प्रबलता हुई। परन्तु पूर्व की ओर मुसल्मानी धर्म की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई और अन्त में उन्होंने हिन्दुस्थान जीत लिया।

सन् ६६४ में महलब नाम का मुसल्मान सरदार मुलतान तक आकर लौट गया। इसके बाद सन् ७११ में मुहम्मद कासिम नामक सरदार ने सिन्ध प्रान्त पर चढाई की और वहां के दाहिर नामक राजपूत राजाका वध कर के उसने वह प्रान्त ले लिया। दाहिर राजा की दो लडकियों को पकडकर उसने खलीफा के पास, नजर के तौर पर, भेज दिया। कुछ दिनों बाद कासिम मारा गया और राजपूत लोगों ने मुसल्मानों को उस प्रान्त से भगा दिया।

१. गजनी का तुर्की घराना:–(सन् ९६७–११८६)—धीरे धीरे मुसल्मानों में फूट होकर उनके अनेक राज्य स्थापन हुए। नवें शतक के अन्तमें

बुखारा में सामानी नामक वंश का एक राज्य स्थापन हुआ । इस राज्य में अरबी भाषा पीछे पड गई और फारसी भाषा का उदय हुआ । तुर्क लोगों को मध्य एशिया के सामानी राजाओं ने मुसल्मानी दीक्षा देकर अपने अधीन कर लिया । यही तुर्क फिर सामानी वंशका नाश करके प्रबल हुए । पश्चिम एशिया और यूरोप का पूर्वभाग तुर्कों ने अपने अधिकार में कर लिया, वह अब भी उनके अधिकार में है । बुखारा के तुर्क राजा अब्दुल मलिक के पास अलप्तगीन नाम का एक तुर्क गुलाम था । उसने सन् ९६७ के करीब अपने पराक्रम से गजनी में स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया । उस राज्य की सीमा पंजाब प्रान्त में आ भिडी । पंजाब में जयपाल नाम का राजपूत राजा राज्य करता था । सन् ९७६ में अलप्तगीन की मृत्यु होगई और उसका दामाद सुबुक्तगीन राज्य करने लगा ।

अपनी सरहद्द पर मुसल्मानी राज्य स्थापित होना राजपूतों को अच्छा नहीं लगा । हार जाने के कारण प्रति वर्ष कर देना कबूल करके जयपाल लौट आया । फिर कर भेजना बन्द करते ही सुबुक्तगीन ने पंजाब पर चढाई की और जयपाल का पराभव तथा सरहद्द का इन्तिजाम कर के वह लौट गया । सुबुक्तगीन सन् ९९७ में मर गया ।

सुलतान महमूद (सन् ९९९-१०३०):—सुबुक्तगीन के बाद उसका लडका महमूद, गजनी के घराने में बडा पराक्रमी राजा हुआ । सुल्तान पद्वी पहले उसीने धारण की । वह शूर और बडा महत्त्वाकांक्षी था । पश्चिम और उत्तर दिशाओं का प्रदेश जीत लेने पर उसकी दृष्टि हिन्दुस्थान की ओर फिरी । महमूद के मन में ये विचार उत्पन्न हुए कि हिन्दुस्थान के राजाओं में एकता नहीं है, इस लिए उन पर चढाई करने से हमारे साथी किसी न किसी उद्योग में लगेंगे; अपार सम्पत्ति का लाभ होगा और यदि सफलता प्राप्त हुई तो राज्यवृद्धि होने पर यश भी मिलेगा ! इस प्रकार सोचकर सन् १००१ से १०२४ तक उसने हिन्दुस्थान पर छोटी बडी १७ चढाइयां कीं, उनमें से १२ बहुत प्रसिद्ध हैं ।

पहली चढाई सन् १००१ में पंजाब पर हुई । इसमें महमूद ने जयपाल का पराभव करके, कर लेने का ठहराव किया । दो बार पराजित होने के कारण, अपने लडके आनन्दपाल को गद्दी पर बैठा कर, जयपाल ने आत्महत्या

कर ली। सन् १००४ में पंजाब में भाटी के राजा विजयराय पर महमूद ने दूसरी चढाई की। उसमें विजयराय का पराभव हुआ। उसका राज्य और अपार लूट का सामान महमूद को मिला। तीसरी सवारी सन् १००५ में पंजाबही पर हुई। इसमें आनन्दपालका पराभव हुवा। चोथी चढाई सन् १००६ में हुई वह महत्त्व की थी। सब राजपूत राजा मुसल्मानों का पराभव करने के लिए बडे आवेश के साथ एकत्र हुए। हिन्दू स्त्रियों ने अपने जवाहिर और गहने बेचकर दूर दूर के प्रान्तों से धर्म-युद्ध के लिए सामग्री भेजी। महमूद भी बडी तैयारी के साथ आया। आनन्दपाल बडे आवेश से लड रहा था कि इतने ही में उसका हाथी गोलों और तीरों की मार से घबडा कर रणभूमि से भाग उठा, साथ ही साथ हिन्दुओं की हिम्मत हार गई और महमूद जीत गया। उसने हिमालय के पास नगरकोट का प्रसिद्ध देवस्थान यथेच्छ रीतिसे लूटा। इस विजय के उपलक्ष में महमूद नें गजनी में बडा उत्सव किया। पांचवी सवारी सन् १०१० में और छठी सन् १०११ में हुई। उनमें महमूद ने स्थानेश्वर का देवालय लूटकर वहां की मूर्तियां फोड डाली। सन् १०१३ और १०१४ में उसने काश्मीर प्रान्त पर दो चढाइयां कीं। स. १०१८–१९ की नवीं चढाई में बरान का राजा हरदत्त महमूद के स्वाधीन हुआ; और उसने दस हजार अनुयायियों के साथ मुसल्मानी धर्म का स्वीकार किया। इसके बाद कनोज के राजा राज्यपाल परिहार ने उसकी शरण में जाकर अपना बचाव किया। महमूद मथुरा के बडे बडे मन्दिर तोडकर और वहां की सम्पत्ति लूटकर गजनी को लोट गया। सन् १०२१–२३ में बुन्देलखण्ड पर दो चढाइयां करके महमूद बहुत सा लूट का माल गजनी ले गया।

४. सोमनाथ की सवारी और महमुद की मृत्यु:—महमूद ने बारहवीं और अन्त की चढाई सन् १०२४ में की। इस चढाई में वह काठियावाड में पेठा। इस प्रांत को सोराष्ट्र कहते थे। उसके दक्षिणी किनारे पर समुद्र में सोमनाथ नामक एक अति श्रीमान् देवस्थान पुरातन काल से प्रसिद्ध था। उसे सोराष्ट्र अथवा सोरटी सोमनाथ कहते थे। वहां की अपार संपत्ति हरण करने के लिए महमूद मुलतान और अजमेर के मार्ग से गुजरात में आया। अजमेर और अनहिलपट्टन के राजा महमूद के आते ही भग गये। फिर महमूद सीधा सोमनाथ पर टूट पडा और देवालय को घेरे पर हम्ला करके महमूद

भीतर जाना ही चाहता था कि इतने में राजपूत राजा देवालय की रक्षा करने के लिए चढ धांये । घनघोर युद्ध होने के बाद राजपूत लोगों का पराजय हुआ और वे भग गये । देवालय में शंकर का बडा लिंग था । उसके पास पहुँचने पर ब्राह्मणों ने महमूद से विनती की कि "यदि तुम मूर्ति में हाथ न लगाओगे तो हम तुम्हें बहुत सा सुवर्ण देंगे।" इस पर महमूद ने कहा- "बुत-फरोश" (मूर्ति बेचनेवाला) की कीर्ति की अपेक्षा "बुत-शिकन" (मूर्ति तोडनेवाला) की कीर्ति मुझे अधिक प्रिय है । इतना कह कर उसने स्वयं वह मूर्ति तोडी। उस समय उसके भीतर से हीरों और माणिकों के ढेर बाहर निकल पडे । इस प्रकार सोमनाथ की अपार संपत्ति लेकर, राजपूत राजाओं का पराभव करता हुआ, महमूद अनहिलपट्टन को आया । गुजरात का रमणीय और उपजाऊ प्रदेश देखकर उसके मनमें था कि वह सदा वहीं रहे; पर उसके साथियों को यह बात पसंद न आई । इस कारण एक वर्ष रहकर महमूद लौटने लगा। उसी समय, जब उसे यह खबर मिली कि अजमेर के मार्ग पर सब राजपूत राजा उसे रोकने के लिए तैयार हो रहे हैं तब वह सिद्ध प्रांत के रेतीले मैदान से मुलतान होता हुआ गजनी की ओर जाने लगा। उस रास्ते पर गर्मी से और नानाप्रकार के रोगों से महमूद की फौज को बहुत कष्ट हुआ । रास्ता बतानेवालों ने अंडबंड मार्ग बतला कर उसे धोखा दिया। उसके बहुत से साथी प्राणों से भी हाथ धो बैठे । ऐसी कष्टमय दशा में वह गजनी जा पहुंचा। इसके बाद फिर वह हिंदुस्थान में नहीं आया। सोमनाथ के लिंग के टुकडे और देवालय के भव्य चंदनी दरवाजे वह गजनी ले गया। मूर्ति का एक टुकडा उसने गजनी की मशजिद में लगवाया और दुसरे टुकडे के दो भाग करके उन्हें मक्का और मदीना में भेज दिये । सोमनाथ के दरवाजे उसने अपने बाप की कबर में लगाये । सन् १८४२ में अँगरेज गजनी से जो दरवाजे यहां लाये वे सोमनाथ के नहीं हैं।

यह पराक्रमी सुलतान सन् १०३० में मर गया । वह व्यवहार-दक्ष, राजकारबार में चतुर और शूर था । द्रव्यलोभ के लिए लोग उसे दोष देते हैं। मरते समय उसने अपने सारे धन का अन्तिम दर्शन किया, उस समय वह बहुत रोया। उसने गजनी में पाठशाला और पदार्थ-संग्रहालय स्थापित किये। वह विद्वानों का बहुत मान करता था । उसके दरबार में अन्सारी, फिर्दोसी

आदि अनेक कवि थे । हिंदुस्थान से वह उत्तम उत्तम कारीगर गजनी ले गया और शिल्पकला को उत्तेजन दिया । उसने सुंदर इमारतें बनवाकर शहर को सुशोभित किया । परधर्मियों पर जुल्म करके उसने जजिया कर नहीं लादा । फौजी नीति में वह निपुण था ।

वास्तव में हिन्दुस्थान के इतिहास से महमूद का बहुत सा सम्बन्ध नहीं है । सिर्फ पंजाब प्रान्त उसके राज्य में शामिल था । तथापि हिंदुस्थान में आनेवाला पहला पराक्रमी मुसलमान राजा यही है । उसके बादवाले पुरुष विशेष पराक्रमी न थे । उनमें से बहुतों ने हिंदुस्थान पर चढाइयां कीं । एकने तो कुछ दिन तक लाहोर को अपनी राजधानी बनाया था, तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि गजनवी वंश ने हिंदुस्थान पर राज्य किया ।

अफगानिस्तान में गोर नाम का एक प्रान्त था । वहां के सरदारों ने महमूद के वंश का पराभव करके गजनी शहर ले लिया । उन सरदारों में गयासुद्दीन और शहाबुद्दीन ऊर्फ मुहम्मद गोरी प्रसिद्ध हैं । उन्हीं का हिंदुस्थान से सबंध है।

पाठ दूसरा ।

गोरी और गुलाम घराने ।

सन् ११८६ ई. से सन् १२९० ई. तक ।

१. गोरी घराना,-महम्मद गोरी । २. गुलाम वंश,-कुतुबुद्दीन ।
३. शम्सुद्दीन अल्तमश । ४. सुलताना रजिया ।
५. बल्बन ।

१. गोरी घराना, शहाबुद्दीन महम्मद गोरीः-(सन् ११८६-१२०६) --जिस समय गोरी वंश ने गजनी में राज्य स्थापन किया उस समय दिल्ली में पृथ्वीराज चौहान, कन्नोज में जयचंद राठोड और गुजराथ में भीमदेव नाम के पराक्रमी राजपूत राजा राज्य करते थे । उनमें से पहले दो राजाओं का आपस में वैर था । गजनी में महमूद के वंश का पराभव होने के बाद, गयासुद्दीन गोरी राज्य करता था और उसका भाई शहाबुद्दीन ऊर्फ मुहम्मद गोरी

देश जीतता हुआ फिरता था। उसने सन् ११७६ से ११९५ तक हिंदुस्थान पर सात चढाइयां कीं । पहली तीन चढाइयों में उसने पंजाब से लेकर सिंध तक, वायव्य की ओर का सारा प्रदेश जीत लिया । चौथी सवारी उसने सन् ११९१ में की । कन्नौज के राजा जयचन्द ने, दिल्ली के पृथ्वीराज चौहान को पराजित करने के लिए, मुहम्मद गोरी के पास वकील भेजकर उसे अपनी मदद को बुलाया। उस समय चित्तोड के राजा ने पृथ्वीराज को मदद दी । उन्होंने तलावडी की लडाई में समरभूमि पर मुहम्मद का पूर्ण पराजय किया। पृथ्वीराज को मुहम्मद गोरी पर दया आजाने के कारण उसने उसकी विशेष दुर्दशा नहीं की। इसके बाद जब मुहम्मद ने देखा कि पृथ्वीराज अब कुछ गाफिल रहने लगा है, तब सन् ११९३ में उसने अपनी हार का बदला लेने के लिए फिर धावा किया । स्थानेश्वर की रणभूमि में मुसल्मानों और राजपूतों का मुकाबिला हुआ । आरंभ ही में मुहम्मद ने शिकस्त खाई और हिन्दू फौज ने उसका पीछा किया; परंतु उन्हें अस्ताव्यस्त देखकर मुहम्मद एकदम उनपर लौट पडा। राजपूतों का पराभव हुआ। बहुत से राजपूत राजा और वीर समरभूमि में काम आये। पृथ्वीराज शत्रुओं के हाथ में पड गया। उन्होंने उसका वध किया। मुहम्मद गोरी ने अजमेर पर अधिकार करके वहां के लोगों को कतल किया । कुतुबुद्दीन ऐबक नाम का एक होशियार गुलाम बहुत दिनों से उसकी फौज में नौकर था, उसे हिंदुस्थान का राज्य सौंपकर मुहम्मद गोरी लौट गया। यह उसकी पांचवीं चढाई है।

सन् ११९४ में मुहम्मद ने छठे बार हम्ला किया । उसने जयचंद राठोड का पराभव करके उसका वध किया और कन्नौज शहर को लूट लिया। उस समय कन्नौज के राठोड वंश ने, मारवाड में आकर नवीन राज्य स्थापित किया, वही जोधपुर का राज्य है। मुहम्मद ने पूर्व की ओर धावा करके काशी के मंदिर लूटे और भ्रष्ट किये । सन् ११९५ में मुहम्मद फिर हिंदुस्थान में आया । उस समय कुतुबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली, ग्वालियर, बुंदेलखंड, बिहार बंगाल और गुजरात के प्रांत जीत कर उनमें मुसल्मानों की सत्ता स्थापित की।

सन् १२०२ में गयासुद्दीन गोरी के मरने पर शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी गजनी के तख्त पर बैठा । उसके राज्य में बलवे हुए, उन्हें शांत करते हुए सिंधु नदी के किनारे गकर जाति के जंगली लोगों ने उसका खून किया।

मुहम्मद गोरी शूर था; परंतु उसका स्वभाव दुष्ट था । हिंदुस्थान में मुसलमानी सत्ता स्थापित करनेवाला पहला पुरुष यही है । जीते हुए सब प्रांतों पर उसने अपने अफसर नियत किये । मुहम्मद सन् १२०६ में मर गया । उसके वंश ने फिर हिंदुस्थान में पैर नहीं रक्खा ।

२. गुलाम वंश, (सन् १२०६–१२९०):—मुहम्मद गोरी के पीछे हिंदुस्थान का राज्य कुतुबुद्दीन ऐवक के हाथ में आया–(सन् १२०६)। गोरी के पास वह गुलाम था इस लिये उस के वंशको गुलाम कहते है. इसी वंशने उत्तर हिदुस्थान मुसल्मानी सत्ता के अधीन किया । मुहम्मद गोरीके मरने पर कुतुबुद्दीन ने दिल्ली में स्वतंत्र राज्य स्थापित किया और अपने नाम से खुतवा* पढाकर सिक्का चलाया । कुतुबुद्दीन ने अपने मुल्क का अच्छा बंदोबस्त किया । वह न्यायी और शांत था । सन् १२१० में उसकी मृत्यु हो गई । उसने दिल्ली की मशजिद और अपने नाम की एक बहुत बडी मीनार बनवाना शुरू किया । ये काम फिर अल्तमश ने पूरे किये ।

जिस समय कुतुबुद्दीन दिल्ली के आसपास प्रबंध करने में लगा हुआ था, उस समय बखतियार खिलजी नामक, मुहम्मद गोरी के एक दूसरे सरदार ने बंगाल और बिहार पर अपना दखल कर लिया । उस समय गौड नामक बंगाल की राजधानी थी । वहां बखतियार खिलजी और उसके पश्चात् दूसरे मुसल्मान सरदार स्वतंत्रता से राज्य करने लगे ।

३. शम्सुद्दीन अल्तमश, (सन् १२१०–१२३६):–कुतुबुद्दीन के पीछे उसका दामाद शम्सुद्दीन अल्तमश गद्दी पर बैठा । बंगाल और सिंध प्रांत के सूबेदार स्वतन्त्रता से चलने लगे थे, उन्हें उसने जीत लिया । उसी प्रकार विक्रमादित्य की राजधानी उज्जैन शहर को जीत कर उसने वहां के सब देवालयों का विध्वंस किया । वह सन् १२३६ में मर गया । उस समय सिंध से भागीरथी तक सारा उत्तर हिंदुस्थान उसकी हुकूमत में आगया था ।

अल्तमश के जमाने में मुगल लोग हिंदुस्थान पर चढाई करने लगे । ये मुगल लोग मूल चीनी–तातार ऊर्फ मंगोलिया प्रांत में रहते थे । वहां से उनकी टोलियां पश्चिम और दक्षिण की ओर फैल गई । वे सदा फिरते रहते । किसी

---

* बादशाह के तख्त पर बैठने के बाद उसके नाम से देवालय में प्रार्थना करने की मुसल्मानों में चाल है। उसे खुतवा कहते है।

किसी समय वे भयंकर तूफान के समान सारे प्रदेश को वाताहत करते और क्षण में किसी तरफ गायब हो जाते । उन मुगल लोगों में बारहवें शतक में चंगेजखां नाम का एक बहुत प्रसिद्ध पुरुष हो गया । उसने पूर्व समुद्र से पश्चिम समुद्र तक सब एशियाखण्ड का प्रदेश जीत लिया । चंगेजखां की सी फौज और उसके राज्य का सा विस्तार आज तक किसीका नहीं हुआ । चंगेजखां का जन्म सन् ११५४ में हुआ और वह सन् १२२७ में मर गया । अल्तमश के जमाने में ये मुगल लोग हिंदुस्थान पर पहले पहल सवारियां करने लगे । और आगे तीन सौ वर्ष के बाद उनका राज्य इस देश में कायम हुआ ।

४. सुलताना रजिया, (सन् १२३६-३९):—यह अल्तमश की लडकी उसके पीछे राजकाज देखने लगी । वह पराक्रमी थी । उसका बाप जब बाहर चढाई पर जाता तब वह दिल्ली में रहकर राज्य का सारा बंदोबस्त करती । परंतु एक हबशी गुलाम पर उसकी बडी भक्ति थी । यह बात दरबारी लोगों को न रुची और उन्होंने उसे कैद करके मार डाला ।

उसके पीछे उसका भाई बहराम राज्य करने लगा । परन्तु उसका भी सन् १२४१ में खून हुआ । उसके बाद अलाउद्दीन मसऊद नामक अल्तमश के नाती ने सन् १२४३ ई० तक राज्य किया । फिर उसे पदच्युत करके उसका भतीजा नासिरुद्दीन महमूद गद्दी पर बैठा । उसने बीस वर्ष तक बडी चतुरता से राज्य किया । वह विद्वान् था और उसकी रहनसहन बहुत सादी थी । मुगलों का बंदोबस्त करने के लिए उसने वायव्य की ओर सरहद्द पर फौज रख दी । मध्यएशिया के करीब २५ राजा मुगलों के दुःख से घबडाकर दिल्ली में नासिरुद्दीन के दरबार में आ रहे थे ।

५. बल्बन, (सन् १२६६-१२८६):—नासिरुद्दीन के लडका न होने के कारण उसका राज्य उसके वजीर बल्बन ने ले लिया । वह विद्वानों का पक्षपाती और प्रजाहित-दक्ष था । तथापि हिंदुओं पर उसकी भी कडी दृष्टि रहती थी । उसका दरबार बडे ठाटबाट का था । मद्यपान करनेवालों को वह सख्त सजा देता था । उसके समय में तुगरलखां नामक बंगाल के सूबेदार ने बलवा मचाया । यह तीन वर्ष तक रहा । अन्त में बल्बन ने उसे शांत किया और तुगरलखां तथा उसके कुटुंबियों को जान से मरवा डाला । बल्बन को महमूद नामका एक सद्गुणी और पराक्रमी पुत्र था । वह मुगलों से लडते हुए

मारा गया । पुत्र-शोक से सुलतान बीमार पडा; फिर वह नहीं उठा । सन् १२८६ में वह भी मर गया । उसके बाद उसका नाती कैकुबाद राज्य पर बैठा । वह बडा दुराचारी था । उसके राज्य में चारों ओर बलवे हुए । राजधानी में खिलजी और मुगल दो पक्ष थे । उनमें से खिलजी पक्ष के मुखिया जलालुद्दीन ने कैकुबाद का वध करके दिल्ली का राज्य ले लिया–(सन् १२९०) । इस प्रकार गुलाम वंश की समाप्ति हुई ।

कुतुबुद्दीन के पुरखा गोरी घराने के गुलाम थे; इस कारण मुसलमान इतिहासकारों ने उन्हें गुलाम संज्ञा दी है; पर इतनेही से यह न समझ लेना चाहिए कि उनका कुल–शील हीन था । उस समय कुलीन घरानों के लोग तक दुर्दैव से गुलामगीरी में पडते; इतनाही नहीं, किन्तु गुलामगीरी से ही बहुतों का उदय हुआ है । गुलाम शब्द से सिर्फ हारे हुए मनुष्यका ही अर्थ समझना चाहिए ।

जब से गजनी के महमूद ने हिंदुस्थान में प्रवेश किया तब से गुलाम वंश के अन्त तक, करीब तीन सौ वर्ष हो गये; इतने समय में मुसल्मानों ने नर्मदा के उत्तरी प्रदेश में अपनी सत्ता कायम की । यह काम करते हुए हिन्दुओं के मन्दिर फोडना, मूर्तियों का विध्वंस करना और तलवार के जोर पर लोगों को जीतना इत्यादि उपद्रव बराबर हो रहे थे । हिंदुओं की हुकूमत धीरे धीरे घट रही थी । गुलाम वंश के पुरुष, उत्तर ओर से आनेवाले मुगलों के हम्लो का बंदोबस्त न कर सके । उस वंश का शीघ्र ही लय हुआ ।

पाठ तीसरा ।

खिलजी और तुगलक घराने ।

सन् १२९० इ. सें सन् १४१४ ई. तक ।

१. खिलजी घराना-अलाउद्दीन । २. तुगलक घराना-महम्मद तुगलक ।
३. फीरोज तुगलक ।

१. खिलजी घराना, (सन् १२८९–१३२०):–अलाउद्दीन खिलजी:– पेशावर के उस तरफ अफगानिस्तान के पहाडों में पहले खिलजी नामक एक जाति के लोग रहते थे । बल्बन के पास उन लोगों की भरती बहुत थी ।

उन्हीं में से जलालुद्दीन खिलजी नामक पराक्रमी पुरुष ने दिल्ली का तख्त उडा लिया; उस समय उसकी उम्र ७० वर्ष की थी। वह बहुत सौम्य और विद्वानों का आदरकर्ता था। मुगलों का दुःख मिटाने के लिए जलालुद्दीन ने उनके लिए दिल्ली में अलग जगह नियत कर दी, उसे मुगलपुरा कहते हैं। अलाउद्दीन नामक जलालुद्दीन का एक भतीजा था। वह बडा पराक्रमी था, इस लिए उसका नाम हिंदुस्थान के इतिहास में स्मरणीय हुआ है।

इसी अलाउद्दीन ने पहले पहल नर्मदा नदी पार करके दक्षिण में प्रवेश किया–(सन् १२९५)। उस समय महाराष्ट्र देश में यादव घराने के राजाओं का अंमल था। उनकी राजधानी देवगढ ऊर्फ देवगिरि, अर्थात् आज कल के दौलताबाद शहर में थी। उस समय अलाउद्दीन को उसके चाचा ने मालवा प्रांत के बंदोबस्त पर रखा था। मौका पाकर वह अठारह हजार फौज के साथ देवगढ पर गया और उसने यह प्रगट किया कि 'मुझे मेरे चाचा ने निकाल दिया है।" वहां के राजा रामदेवराव यादव की कुछ भी तैयारी न होने के कारण वह देवगढ के किले में जा रहा। अलाउद्दीन ने किले को घेर लिया और यह जाहिर किया कि मैं केवल छोटीसी फौज लेकर आगे आया हूं; बादशाह की बडी फौज पीछे से आती है। यह सुनकर रामदेवराव घबडा गया। किले में सामग्री भरते समय अनाज की जगह नमक के बोरे भर दिये गये थे! ऐसी दशा में रामदेवराव ने सुलह की बात चीत चलाई। इतनें ही में रामदेव का लडका शंकरदेव बडी फौज लेकर आया। उसने अलाउद्दीन का बहुत कुछ पराजय कर दिया था; इतने ही में रामदेव का एक सरदार छोटी सी फौज लेकर शंकरदेव की मदद को आता था। उन लोगों को दूर से देखकर शंकरदेव की फौज को जान पडा कि बादशाह की फौज अलाउद्दीन की मदद को आती है। उसे देखते ही वे रणभूमि छोड कर इधर उधर भगने लगे। अन्त में दोनों ओर से सुलह हो गई। रामदेवराव ने अपना कुछ मुल्क अलाउद्दीन को दिया और दण्ड भी देकर प्रति वर्ष कर देना कबूल किया। वहां से लौट कर अलाउद्दीन ने अपने चाचा का खून किया और दिल्ली का तख्त छीन लिया–(सन् १२९६)।

सारा हिंदुस्थान देश पादाक्रान्त करनेवाला पहला मुसल्मान बादशाह अलाउद्दीन है। उसने सन् १२९६ से १३१६ तक राज्य किया। सन् १२९७ में

गुजरात प्रांत जीत कर वहां के राजा कर्णराय को उसने निकाल दिया। कर्णराय की स्त्री कमलादेवी और लडकी देवलदेवी को पकड कर वह दिल्ली ले आया। कमलादेवी को उसने अपनी पटरानी बनाया और देवलदेवी का विवाह अपने लडके के साथ कर दिया। राजपूताने में चित्तौड, अर्थात् आजकल का उदेपुर, बडा प्रसिद्ध राजपूत राज्य था। वहां के राणा भीमसिंह की स्त्री पद्मिनी बडी सुस्वरूप और तेहेदार थी। उसे प्राप्त करने के उद्देश से अलाउद्दीन ने चित्तौड पर सवारी की; पर उस काम में उसे सफलता नहीं हुई। चित्तौड जीतने के लिए अलाउद्दीन ने कोई उपाय उठा नहीं रखा। राजपूत लोग बडी हिम्मत के साथ लडे। दोनों ओर कई बार हारजीत हुई। अन्त में राजपूतों ने अलाउद्दीन की परवा न करके अपना राज्य और स्वतंत्रता कायम रखी (सन् १३०३–४)।

मलिक काफूर नामक एक नीचे मनुष्य को अलाउद्दीन ने बहुत बढा रखा था। काफूर ने दक्षिणमें अनेक चढाइयां कीं। सन् १३०७ में वह देवगढ के रामदेवराव को पकड कर दिल्ली ले आया; परन्तु बादशाह ने उसे सन्मानपूर्वक लौटा दिया। महाराष्ट्र के दक्षिण में भी पहले भिन्न भिन्न हिन्दू राज्य थे; उन पर चढाई करके सन् १३१० में काफूर ने उन्हें जीत लिया और मुसल्मानी सत्ता का झंडा ठेट दक्षिणी किनारे तक पहुँचा दिया। सन् १३१२ में उसने फिर महाराष्ट्र पर सवारी की। उस समय रामदेवराव का लडका शंकरदेव देवगढ की गद्दी पर था। उसका वध करके मलिक काफूर ने महाराष्ट्र देश बिलकुल मुसल्मानी सत्ता के अधीन कर दिया।

सन् १३१६ में अलाउद्दीन की मृत्यु होगई। पीछे पीछे से उसके राज्य में चारों ओर बलवे शुरू हुए। वह क्रूर, व्यसनी और जुल्मी था; तथापि भाग्यशाली था। उसने थोडे ही अवकाश में राज्य की मर्यादा बहुत अधिक बढा ली। उसकी धाक विलक्षण थी। उसके कायदे सख्त और निष्ठुर थे। वह लगान का रुपया सख्ती के साथ वसूल करता था; इस कारण लोग बहुत व्याकुल हुए। मलिक काफूर की संगति से उसका अत्यन्त नुकसान हुआ। उसके जमाने में मुसल्मानों का दक्षिण में पहले पहल प्रवेश हुआ।

अलाउद्दीन के पश्चात् उसके लडके सुलतान मुबारिक को तख्त मिला—(सन् १३१६–२०)। वह अत्यन्त दुर्व्यसनी, क्रूर था। उसके राज्य में चारों ओर दंगेबखेडे और अस्वस्थता रहा करती थी। मलिक खुसरू नाम का

उसका एक विश्वासपात्र सरदार मुख्य वजीर था। वही अन्त में उससे बिगड उठा। उसने खिलजी घराने के सब मनुष्यों कों कत्तल कर डाला और बादशाह का भी वध करके स्वयं राज्य करने लगा । पाँच महीने तक चारों ओर बलवे मचे हुए थे। खुसरू मूल का जातिभ्रष्ट गुजराती था। उसकी हुकूमत से सब लोग घबडा उठे। अन्त में पंजाब के सूबेदार गाजीबेग तुगलक ने दिल्ली पर धावा करके खुसरू का खून किया । वह गयासुद्दीन के नाम से दिल्ली के तख्त पर बैठा। वही तुगलक घराने का संस्थापक है-(सन् १३२०)।

२. तुगलक घराना, (सन् १३२०-१४१४):—महम्मद तुगलक, (सन् १३२९-१३५१)—तुर्क अफगान जाति का यह तीसरा घराना है। गयासुद्दीन बहुत सज्जन था । उसने पांच वर्ष राज्य किया; पर इतने ही समय में उसने बहुत से सुधार किये । दिल्ली के पास तुगलकाबाद नाम का जो किला है वह उसीका बनवाया हुआ है । सन् १३२६ में जब गयासुद्दीन का देहान्त हो गया तब उसका नाती मुहम्मद तुगलक राज्य करने लगा ।

मुहम्मद तुगलक अच्छा विद्वान् और सदाचरणी था । वह मनमाने विचार सिद्ध करलेने का प्रयत्न करता, इस लिए उसका सब प्रकार से नुकसान ही हुआ। हिंदुस्थान में मुसलमानी सत्ता अब तक स्थायी न हुई थी। परकीयों के हम्ले और भीतरी बलवे मच रहे थे । धन के बिना उनका बंदोबस्त न हो सकता था। रैयत पर करों का भार बढने के कारण जब लोग घबडा उठे तब उसने हुक्म दिया कि सोने के सिक्केकी जगह पर तांबे के टुकडे चलाये जाय। पर इसका परिणाम यह हुआ कि लोग जाली तांबे के टुकडे तैयार करके, सोने के सिक्कों के बदले, वही लगान में अदा करने लगे । इस कारण खजाने में तांबे के ढेर जमा हो गये । परदेशी व्यापारी हिंदुस्थान की कीमती चीजें तांबे के सिक्कों से खरीद कर उन्हें परदेश में सोने के सिक्कों से बेचने लगे। इस कारण हिंदुस्थान का व्यापार बैठ गया और बादशाह के यहां का सोना भी खतम हो गया! जब वे तांबे के टुकडे लोग न लेने लगे तब उसे अपना पागलपन मालूम हुआ। दक्षिण हिंदुस्थान में जब बलवे मचने लगे तब वहां स्वयं हमेशा उसे हाजिर रहना पडा। इस लिए दिल्ली शहर छोड कर, देवगढ का दौलताबाद नाम रख कर, उसे उसने अपनी राजधानी बनाया; और दिल्ली के लोगों को, अपने घर-द्वार छोड कर दौलताबाद जाने का हुक्म दिया। ऐसा

करने से लोगों को अत्यन्त कष्ट हुआ । वहां जब सब लोगों के लिए सुभीता न हुआ तब फिर उसने लोगों को दिल्ली लौट जाने की आज्ञा दी । बडे बडे देश जीत कर अपना नाम अजर–अमर करने का उसे विलक्षण हौसला था। उसे तृप्त करने के हेतु से, चीन देश जीतने के लिए, उसने एक लाख फौज अपने भतीजे ख़ुसरू के अधिकार में दी और उसे सन् १३३७ में नैपाल की हद्द पर होते हुए हिमालय के पहाडों से चीन देश को रवाना किया। वहां पराजित होकर जब वह फौज लौटी आरही थी, तब मेह और ठंढ के कारण उसका बहुत संहार हुआ। एक लाख फौज में से सिर्फ दस आदमी लौट कर आये। इतना होने पर भी अगले वर्ष उसने दूसरी एक बडी फौज तुर्किस्तान और ईरान देश जीतने के लिए तैयार की; पर खजाने में धन न होने के कारण उसे उस फौज को छुट्टी देनी पडी।

मुहम्मद के ऐसे कृत्यों से हाल में ही जमा हुआ मुसल्मानों का राज्य शिथिल होने लगा। बंगाल और कर्नाटक प्रान्त स्वतंत्र होगये। महाराष्ट्र प्रदेश में हसन गंगू नाम के सरदार ने सन् १३४७ में एक बडे स्वतंत्र मुसल्मानी राज्य की स्थापना की । उसे बहमनी राज्य कहते हैं । मुहमद की फौज में भी बलवे होने लगे। एक ओर का बलवा शान्त न होने पाता कि दूसरी ओर खडा हो जाता। अन्त में सिन्ध प्रान्त का बलवा शान्त करते हुए वह बीमार पडा और सन् १३५१ में ठट्ठा शहरमें उसकी मृत्यु हो गई । आफ्रिका में तांजर्स का निवासी इब्नभतूता नामक एक विद्वान् पुरुष घूमते घूमते सन् १३४१ में दिल्ली आया था। मुहम्मद तुगलक ने उसे अपना न्यायाधीश नियत किया था। इब्नभतूता ने अपने प्रवास–वर्णन में मुहम्मद के राज्य का वर्णन किया है। मुहम्मद के राज्य की आमदनी १ करोड १६ लाख रुपये थी। दौलताबाद का प्रचण्ड किला इसी बादशाह ने बनवाया।

३. फीरोज तुगलक, (सन् १३५१–१३८८ तक):—यह मुहम्मद का चचेरा भाई, उसके पीछे, तख्तपर बैठा। वह चतुर और प्रजा–कार्यदक्ष था। वह जब अपने विस्तृत राज्य का बन्दोबस्त न कर सका तब उसने बंगाल और दक्षिण के राज्यों की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली और बाकी बचे हुए राज्य का बन्दोबस्त कर लिया। वह अच्छे स्वभाव का पुरुष था। पाठशाला, दवाखाना, धर्मशाला, कुवां, तालाब, पुल इत्यादि बनवाकर बहुतसे लोकोपयोगी काम उसने

किये । तथापि उसने जो नहरें बनवाई उनसे उसका नाम चिरस्मरणीय हो गया है । उसनें यमुना नदी की जो लम्बी नहर तैयार करवाई वह अब भी जारी है । उसके सिवाय और दो बडी नहरें उसने बनवाई थीं; पर वे इस समय नहीं चलतीं । नहरें बनवा कर खेती सुधारने का प्रबन्ध पहले पहल इसी बादशाह ने किया । सारांश, वह सदा लोगों के कल्याण में लगा रहता था ।

स्वभाव अच्छा होने पर भी फीरोजशाह के मन में स्वधर्म का व्यर्थ अभिमान रहता; इस कारण उसके समय में भी हिन्दू लोगों पर बहुत जुल्म हुआ । ब्राह्मणों के लिए जजिया कर माफ था, उसे उसने फिर जारी किया । यह कर वे लोग खुशी से न देते थे, इस कारण उसने बहुतों को मरवा डाला । उसके बूढे होने पर राज्य में झगडे उपस्थित हुए । उसके लडके राज्य के लिए लडने लगे । ऐसी दशा में फीरोजशाह ९० वर्ष का होकर, सन् १३८८ में इस संसार से कूच कर गया ।

फीरोजशाह के बाद, करीब २५ वर्ष तक, राज्य में अनेक गोलमाल हुए । बंगाल, पंजाब, मालवा, खानदेश इत्यादि प्रान्तों में स्वतन्त्र राज्य स्थापित हुए । दिल्ली में फीरोजशाह का नाती सन् १४१४ तक महमूद तुगलक के नामसे राज्य करता था ।

पाठ चौथा ।

पन्द्रहवें शतक की घटनाएं ।

सन् १३९८ ई० से सन् १५२६ ई० तक.

१. तैमूरलंग की सवारी । २. सैय्यद वंश ।
३. लोदी वंश । ४. गतकाल की पर्यालोचना ।
५. बहमनी राज्य ।

१. तैमूरलंग की सवारी, (सन् १३९८ ई०):—यह पीछे बतला ही चुके हैं कि तेरहवें शतक में, मध्य एशिया में चंगेजखां नामक एक पराक्रमी मुगल बादशाह होगया । उसके वंशजों ने, उसके बाद, सब एशिया और यूरप का अधिक भाग पादाक्रान्त किया । तैमूरलंग उन्हीं में से एक पुरुष है ।

उसका बाप दस हजार सवारों का सरदार था। जब आसपास अंधाधुंधी मची हुई थी तब सन् १३७० में तैमूर ने समरकन्द में स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की। किसी युद्ध में चोट लग जाने के कारण वह लंगडा होगया था, इसी कारण लोग उसे 'लंग' कहने लगे, वही ग्रन्थकारों ने भी लिखा है। अगले पच्चीस वर्षों में तैमूर ने अपने पराक्रम से राज्य का बहुत बडा विस्तार कर लिया। वह बडा महत्त्वाकांक्षी था। जब उसने सना कि हिन्दुस्थान में अंधाधुंधी मची हुई है तब उसने अपने नाती पीरमुहम्मद को आगे भेज दिया और फिर कुछ दिनों बाद वह स्वयं हिन्दुस्थान पर चढ धाया।

मुल्क को जलाकर और लूट कर नष्ट करना, शहरों को जीतकर वहां के लोगों को कतल करना, इत्यादि राक्षसी उपद्रव तैमूर की सवारी में अधिक होते थे। रास्ते के शहरों और लोगों का विध्वंस करके, पानीपत होता हुआ तैमूरलंग एकदम दिल्ली में आया। उस समय उसके पास इतने कैदी जमा हुए कि उसे यही न समझ पडा कि वह उनका क्या बन्दोबस्त करे। तब पन्द्रह वर्ष के ऊपर के सब लोगों को उसने एकदम कतल करवा डाला। महमूद तुगलक का पराजय करके उसने दिल्ली शहर हस्तगत किया। महमूद गुजरात को भग गया। तैमूर दिल्ली का बादशहा बन बैठा और शहर को लूटा। शहर के लोग त्राहि त्राहि करके इधर उधर भगने लगे। तैमूर की फौज ने भयंकर रक्तपात किया। शहर के सब रास्ते मुर्दों की राशियों भर गये। इस प्रकार पन्द्रह दिन तक दिल्ली में रहकर तैमूरलंग स्वदेश को लौट गया। उस समय वह अगणित लूटका धन साथ ले गया। रास्ते में मेरठ शहर का भी उसने दिल्ली ही का सा हाल किया। हिन्दुस्थान के बहुत से कुशल कारीगर, तैमूर अपने साथ समरकन्द ले गया। लौटते समय उस पंजाब प्रान्त पर खिज्रखां सैय्यद नामक सर्दार को अपना कारबारी मुकर्रर किया। वही आगे चलकर सैय्यद घराने का संस्थापक हुआ।

यह कहा जा सकता है कि ईश्वरी क्षोभ से जग का संहार करने के लिए जो नाना प्रकार के संकट मनुष्य जाति पर टूट पडते हैं उन्हीं में से तैमूरलंग की सवारी भी एक संकट है। तैमूर सन् १४०५ में मर गया। स्पेन देश का एक वकील तैमूर के दरबार मे था उसने जो वृत्तान्त लिख रखा है वह बडा मनो-रंजक है। तैमूर के अत्यन्त विस्तृत राज्य में कायदा था और उसकी विल-

क्षण धाक बँधी हुई थी । उसके दरबारका वैभव देख कर स्पेन का वकील चकित हो गया । तैमूर की रानी के साथ तीन सौ दासी सदैव हाजिर रहतीं । तैमूर चाहे जितना दुष्ट कहा जाय; तथापि वह अप्रबुद्ध न था । उसके कायदे, उसकी राज्य–व्यवस्था, उसके समय की विद्या और कला, इत्यादि बातें यूरप से भी बहुत चढी चढी थीं । उसकी कठोर राजनीति उस काल के अनुसार ही थी । उसके पास दो लाख फौज तैयार रहती । उसने छोटे बडे चालीस धावे किये और तत्कालीन बडे बडे राज्यों को पादाक्रान्त किया । जीते हुए देशों के कारीगरों को स्वदेश में लाकर उसने नवीन व्यवसाय जारी किये ।

तैमूरलंग के चले जाने पर मुसल्मानी राज्य की स्थिति बहुत ही शोचनीय हो गई । बहुत से प्रान्त स्वतन्त्र हो गये । महमूद तुगलक लौट कर फिर दिल्ली में रहने लगा । परन्तु विशेष कर राजधानी के बाहर उसकी सत्ता न थी । उसके मरने पर सन् १४७२ में खिजूरखां सैय्यद ने दिल्ली का राज्य छीन कर थोडा बहुत अधिकार जमाया ।

२. सैय्यदवंश, (सन् १४१४–१४५० ई.).—खिज्रखां तमूरलंग की ओरसे बादशाहत करता था । वह अच्छे स्वभाव का था । सन् १४२७ में उसके मरने पर उसके लडके सैय्यद मुबारिक ने कुछ दिन तक चतुराई के साथ राज्य संभाला । उसके वजीर ने सन् १४३५ में उसका खून किया । इसके बाद मुबारिक के लडके मुहम्मद ने सन् १४४५ तक और मुहम्मद के लडके अलाउद्दीन सैय्यद ने सन १४५० तक राज्य किया । वे दोनों दुर्बल थे, इस कारण बहलोल लोदी नामक एक होशियार अफगान सर्दार ने दिल्ली का तख्त छीन लिया ।

३. लोदीवंश; (सन् १४५०–१५२६ ई.)—लोदी अफगान जाति के व्यापारी थे । वे फीरोज तुगलक के समय में बढे । बहलोल पराक्रमी था । उसने दिल्ली के राज्य का बहुत सा भाग लौटा लिया; और ३८ वर्ष सुख से राज्य करके सन् १४८८ में मर गया । उसके बाद उसका लडका सिकन्दर लोदी भी अत्यन्त पराक्रमी हुआ । उसके राज्य में अखण्ड शान्ति छाई हुई थी । वह राजकारबार में दक्ष और प्रजा के कल्याण के लिए प्रयत्नशील था । उसने बहुतसे लोकोपयोगी काम किये । तथापि वह हिंदूधर्म का द्वेषी था, इस कारण उसके समय में भी हिंदुओं को बहुत कष्ट सहना पडा । सन् १५१७ में सिकन्दर की मृत्यु हुई । इसके बाद उसका लडका इब्राहीम राज्य करने लगा ।

इब्राहीम लोदी पराक्रमी नहीं था। उसके राज्य में बलवे हो रहे थे। लाहोर का सूबेदार दौलतखां लोदी उसका शत्रु था। अफगानिस्तान देश के काबुल शहर में तैमूरलंग का वंशज बाबर नाम का पराक्रमी और महत्त्वाकांक्षी सरदार राज्य करता था। उसे दौलतखां लोदी ने हिंदुस्थान पर चढाई करने के लिए बुलाया। बाबर भी यही चाहता था। उसने सन् १५२६ में हिंदुस्थान पर चढाई की। पानीपत की समरभूमि पर अप्रेल की २१ तारीख को घनघोर युद्ध हुआ। उसमें इब्राहीम मारा गया और हिंदुस्थान का राज्य बाबर को मिला। यह पानीपत की पहली लडाई है।

४. गतकाल की पर्यालोचनाः—मुगल बादशाह की स्थापना हिंदुस्थान के इतिहास में बहुत ही बडी क्रांति है। इस लिए इस जगह क्षण मात्र ठहर कर, यहां तक की स्थिति का सामान्य विचार करना आवश्यक है।

महमूद गजनवी से लेकर लोदी घराने की समाप्ति तक करीब पांच सौ वर्ष का काल बीत गया। यह नहीं कहा जा सकता कि इन पाँच सौ वर्षोंमें से प्रथम के दो सौ वर्षों तक मुसल्मानों की हुकूमत हिंदुस्थान में पंजाब से आगे बढी थी। पहले पहल हिंदुस्थान में गोरी वंश ने राज्य स्थापन किया और अलाउद्दीन खिलजी ने हिंदुस्थान के अधिक भाग पर कब्जा कर लिया। तब से लेकर मुहम्मद तुगलक तक मुसल्मानों की सत्ता एकछत्री थी। तथापि कृष्णा के दक्षिण ओर का बहुत सा मुल्क मुसल्मानों के अधिकार में न आया था। अलाउद्दीन से आगे दो सौ वर्षों का ही समय महत्त्वपूर्ण है। इस काल में हिंदू मुसल्मानों के झगडे बराबर हो रहे थे। उन झगड़ों के कारण प्रजा के हिताहित का विचार विशेष किसी को नहीं सूझा। देश में मुसल्मानों ने अपने कायदे और आचारविचार शुरू किये। तथापि हिंदुओं ने अपने धर्माचारों का अधिकाधिक निश्चय से पालन किया। छोटे दर्जों की नौकरियें हिंदुओं को मिलती; पर प्रतिष्ठापूर्ण और बडे बडे अधिकार उन्हें बहुत नहीं मिलते थे। इस काल में कलाकौशल्य की अच्छी उन्नति थी। बीजापुर, अहमदाबाद, जौनपुर इत्यादि स्थानों की बड़ी बडी इमारतें इसी काल की बनी हुई हैं। संस्कृत और प्राकृत भाषाओं में हिंदुओं की ग्रंथ-समृद्धि भी बहुत हुई। सरकारी काम के लिए घोडों से और पैदल से डाक का प्रबन्ध रखा गया था।

फारसी और अरबी भाषाएं सिखाने के लिए पाठशालाएं भी थीं। इससे अधिक लोकशिक्षा की ओर राज्यकर्ताओं ने ध्यान नहीं दिया। प्रांतों के सूबेदारों का अधिकार अनियन्त्रित रहता था। देश का अधिकांश व्यापार हिंदुओं ही के हाथ में था। इस समय दंगेबखेडे, लढाइयाँ, लूटमार, खून और राज्यक्रांति इत्यादि उपद्रव बराबर होते रहते। प्रजासुख अथवा राज्यसुधार के उदाहरण बहुत से नहीं देख पडते। राज्य का विस्तार होना और शीघ्र ही उसका लय होना-इन दो बातों की आवृत्ति बारंबार हुई सी देख पडती है। अलाउद्दीन का विस्तृत राज्य महमूद तुगलक के समय में अव्यवस्थित हो गया। सन् १३४७ में दक्षिण में बहमनी राज्य की स्थापना हुई। इसके बाद धीरे धीरे काश्मीर, सिन्ध, बंगाल, गुजरात, मालवा, खानदेश इत्यादि स्थानों में स्वतन्त्र मुसलमानी राज्य स्थापित हुए। उन्हें फिर एक छत्र के नीचे लाने का काम मुगल वंश के पराक्रमी बादशाह अकबर ने किया। उसी क्रम की आवृत्ति फिर औरंगजेब बादशाह की मृत्यु के बाद हुई, और नवीन राज्य फिर निर्माण हुए। गद्दी पर बैठते ही कुटुम्ब के सब पुरुषों को कतल करना, अथवा उन्हें जन्मान्ध करके कारागृह में डालना, आदि उपद्रव बारम्बार हुआ करते। हिन्दू और मुसलमानों में धर्मसम्बन्धी झगडा शुरू रहने के कारण प्रजा को बहुत सा सुख नहीं मिला। तथापि राजधानी या दूसरे बडे बडे शहरों को छोड कर राज्यक्रान्ति, लढाई, कतल, आदि बातों का सम्बन्ध बाहर के प्रदेशों से बहुत न रहता था। सारांश, देश का सामान्य जनसमूह इस बात की परवा न करता था कि गद्दी पर कौन आया और कौन गया; किन्तु वह सदा अपने अपने व्यवसाय में निमग्न रहता था। कुछ काल के बाद हिन्दू और मुसल-ल्मान दोनों स्नेहभाव से एक जगह रहने लगे। आपस में एक दूसरे की जरूरत मालूम होने लगी। हिन्दू काश्तकार, मुसल्मान जमीदार का खेत जोतने लगा और हिन्दू गृहस्थ मुसल्मान की जमानत करने लगा। गांव खेडों में पंचाइतों की प्रथा जारी होने के कारण लोगों के व्यवहार अलग ही अलग बादशाह के पास न पहुँचते हुए-सरलता के साथ चलते थे।

तथापि जग के इतिहास में उपर्युक्त पाँच सो वर्षों का महत्त्व बहुत बडा है। ईसाई और मुसल्मान धर्म के लोगों में अनेक भयंकर युद्ध हुए और इससे

एशिया तथा यूरप की आपस में पहचान हुई। व्यापार का क्रम जारी होकर पूर्व की ओर का माल शीघ्रता से यूरप को जाने लगा। मुसल्मानों ने रोमन बादशाही का विध्वंस करके जब यूरप में अपना राज्य स्थापित किया उसके पोन सौ वर्ष के बाद बाबर ने हिन्दुस्थान में प्रवेश किया। उसके थोडे दिन पहले अमेरिका का पता लगा, और पोर्तुगीज लोग प्रथमतः हिन्दुस्थान में आये। वैसे ही यूरप के अनेक साहसी लोग यहां आकर इधर का हाल उधर ले जाने लगे। इस प्रकार के प्रवास–वर्णन आज पाये जाते हैं, और वे बहुत मनोरंजक हैं।

मार्को पोलो नाम का वेनिस शहरका एक व्यापारी तेरहवें शतक में इधर आया था। उसका लिखा हुआ प्रवासवर्णन यूरप में प्रसिद्ध है। स्वदेशियों लिखा हुआ उस समय का विस्तृत इतिहास उपलब्ध न होने के कारण, इन प्रवास–वृत्तों से ही तत्कालीन व्यवहारों का थोडा बहुत ज्ञान होता है। उपर्युक्त पाँच सौ वर्षों में यूरोप के लोग अज्ञान के अंधकार से जग कर ज्ञानार्जन से सुसंस्कृत होने लगे। छापने की कला उन्हें मिल गई; और नौकानयन शास्त्र में उनकी प्रगति हुई; पहले जो प्रदेश उन्हें न मालूम थे वे नवीन प्रदेश उन्होंने खोज निकाले और वहां अपनी सत्ता स्थापित की तथा क्रम क्रम से अपना सुधार किया। कालान्तर से इसका यह परिणाम हुआ कि, यूरोपियन लोगों को दूसरे लोगों पर प्रभुत्व मिला। परन्तु हिन्दुस्थान देश कालचक्र में पड गया; वहां उपर्युक्त कुछ सुधार आदि नहीं हुआ; किन्तु उसके विरुद्ध हिन्दुओं का पहले का ज्ञान और पहले का सुधार शीघ्रता से नष्ट होता गया और यह देश उत्तरोत्तर अज्ञान के अन्धकार में डुबता गया। सारांश, यूरोपियन लोगों की बढती और हिन्दुओं का ऱ्हास जो उस समय शुरू हुआ वह आज तक वैसाही जारी है; और पश्चिमी राष्ट्र आज पृथ्वी पर अपना नाम बढा रहे हैं।

५. बहमनी राज्य–(सन् १३४७–१५२६):—केवल दिल्ली के राजवंशों का ही वर्णन कर देने से सारे देश का इतिहास पूरा नहीं होता। अलाउद्दीन खिलजी ने देश के अधिक भाग पर मुसल्मानी सत्ता स्थापित की; पर वह शीघ्रही लय हो गई और देश के अनेक स्थानों में स्वतन्त्र मुसल्मानी राज्य कायम हुए। उनमें से दक्षिण के राज्यों का इतिहास विशेष महत्त्वका है। इस राज्य को यद्यपि बहमनी कहते हैं; पर वह मुसल्मानों ही का था। उसकी

राजधानी गुलबुर्गा शहर था । हसन नाम का एक मुसल्मान दिल्ली में गंगू नामक ब्राह्मण के यहां गुलाम था । वह ब्राह्मण महमूद तुगलक के यहां ज्योतिषी था । इस लिए उसकी शिफारिस से दरबार में हसन का प्रवेश हुआ। कुछ दिनों बाद हसन को जाफरखां का खिताब और दक्षिण की फोज का आधिपत्य मिला। कालान्तर में मुहम्मद तुगलक के राज्य में बलवे हुए। उसी गडबड में जाफरखां ने गुलबर्गा में स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया-(सन् १३४७)। गंगू ब्राह्मण के उपकारों की याद करके उसने उसे कोषाध्यक्ष नियत किया और अपने राज्य का नाम बहमनी रखा । करीब डेढ सो वर्ष तक यह राज्य बढती पर था। मुहम्मद गवान नामक एक होशियार और चाणाक्ष पुरुष बहुत दिन तक इस राज्य का मुख्य प्रधान था । उत्तर ओर के तुर्क और अफगान लोगों की तरह दक्षिण के सुलतानों में कट्टरपन न था। सन् १४९०-१५२६ के बीच में बहमनी राज्य के भिन्न भिन्न सूबेदार स्वतन्त्र हो गये और पांच राज्य बन गये। वे इस प्रकार थेः—१ बेदर की बरीदशाही; २ बरार की इमादशाही; ३ अहमदनगर की निजामशाही; ४ बीजापुर की आदिलशाही; और ५ गोलकुंडा की कुतुबशाही । इनमें से पहले दो राज्य शीघ्र ही टूट कर पिछले तीन में शामिल हो गये। वे तीनों बहुत दिनों तक कायम थे। दक्षिण में सन् १३३६ से एक बलाढ्य हिन्दू राज्य विजयनगर में कायम हुआ था। उसके साथ उपर्युक्त तीन राज्यों ने युद्ध करके सन् १५६४ में तालीकोट की लडाई में हिन्दुओं का पराभव किया और वह राज्य डुबा कर उसकी सम्पत्ति हरण कर ली । मुगल बादशाहों ने, उपर्युक्त तीनों मुसल्मानी राज्य जीत कर सारा देश अपनी अपनी सत्ता के अधीन करनेके लिए अनेक प्रयत्न किये। अन्त में शाहजहां बादशाह ने अहमदनगर की निजामशाही सन् १६३७ में डुबा दी और बीजापुर तथा गोलकुंडा के राज्य औरंगजेब बादशाह ने सन् १६८६-८७ में डुबा दिये । अहमदनगर और बीजापुर शहर उस समय बहुत तरक्की पर थे। इस बात की सत्यता वहां आज तक प्रतीत होती है।

पाठ पांचवां।

मुगल वंश—बाबर और हुमायूं।

सन १५२६ ईसवी से सन १५५६ ईसवी तक।

१. बाबर, (१५२६–३०)। २. हुमायूं, (१५३०–४०, ५५–५६)।
३. सूरवंश, (१५४०–१५५५),–शेरशाह सूर (१५४०–४५)।

१. जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर, (सन् १५२६–३०):—यह तैमूरलंग के वंश का छठवां पुरुष था। इसका जन्म सन् १४८३ में हुआ। इसके बाप का नाम मिर्जा उमरशेख था। जिस समय बाबर की अवस्था बारह वर्ष की थी उस समय उसके पिता का देहान्त हुआ और मध्य एशिया के फरगाना प्रान्त का राज्य उसको मिला। परन्तु अवस्था छोटी होने के कारण राज्य संभालने का काम उससे न बन पड़ता। उसके भाईबन्दों ने उसे सब प्रकार से नंगा करके राज्य के बाहर निकाल दिया। उस समय उसने कितने ही वर्ष वनवास में बिताये। अन्त में स्वदेश छोड कर वह अफ़गानिस्तान आया और सेना जमा करके उसने काबुल का राज्य छीन लिया। तब उसके राज्य की सीमा हिंदुस्थान में मिल गई। उसके मन में यह विचार आया कि, मध्य एशिया का जो हमारा राज्य चला गया है उसके बदले कहीं दूसरी ओर हम राज्य कमावें, इसी विचार से वह हिन्दुस्थान में आनेका मौका देखता था। इब्राहीम लोदी के जमाने में जो अंधाधुंधी दिल्ली में जारी थी वह बाबर को मालूम थी। इस लिए उसने हिन्दुस्थान पर दो बार चढाई की; परन्तु उसे जय प्राप्त नहीं हुआ। अन्त में जब दौलतखां लोदी ने अपने भाई से लडने के लिए, उसकी मदद मांगी तब वह तीसरी बार फौज लेकर हिंदुस्थान में आया। उसमें बाबर को सफलता प्राप्त हुई और उसने दिल्ली में मुगल बादशाही की स्थापना की। 'बादशाह' नाम पहले बाबरने ही जारी किया।

तथापि बाबर को शान्ति नहीं मिली। उसके अनेक शत्रु थे। राजपूत राजा उसकी कुछ भी परवा न करते। उस समय मेवाड में राणा सांगा नामक बडा पराक्रमी और चतुर राजा राज्य करता था। वह भी बाबर के ही समान

महत्त्वाकांक्षी और दीर्घ–उद्योगी था। दिल्ली का राज्य अपने अधिकार में कर लेने के लिए वह भी प्रयत्न करता था । वह समझता था कि तैमूरलंग की तरह चढाई करके बाबर भी लौट जायगा । पर जब उसने देखा कि बाबर यहीं रह गया तब राजपूतों का बडा भारी जमाव करके राणा सांगा बाबर पर चढ धाया । आगरा से दस कोस पर, फतेहपुर–सीकरी में, हिन्दू मुसल्मानों का घोर संग्राम हुआ। बाबर को जय की बिलकुल आशा न थी । उसकी फौज की टोलियां पराभव पाकर लौटने लगीं । अन्त में बाबर ने ईश्वर की करुणायुक्त प्रार्थना करके शराब का व्यसन छोडने की शपथ ली, और अपने सिपाहियों में उसने यह उत्साह भर दिया कि अब हम लोग शत्रु के हाथों से छूट नहीं सकते; इस लिए यदि मरना ही है तो कुछ पराक्रम दिखला कर मरना चाहिए। कुछ दिन दोनों फौजें सामने सामने डेरा डाले हुए पडी थीं। ऐसे मौके में यदि राणा सांगा ने एकदम हम्ला किया होता तो उसे जय मिला होता; पर वैसा न होने के कारण बाबर को तैयारी करने का अवसर हाथ आ गया। अन्त में सन् १५२८ के मार्च महीने की १६ तारीख को अन्तिम युद्ध हुआ। प्रारम्भ ही में राणा सांगा का वकील बिगड कर बाबर में जा मिला । लडाई शुरू होने पर राणा सांगा घायल हुआ और उसके बहुत से साथी भी गिर पडे। तब राजपूतों का धैर्य छूट गया और मुसल्मानों की जय हुई । बाबर ने राजपूतों के सिर काट कर ढेर लगा दिये। और स्वयं 'गाजी' अर्थात्–'काफिरों का पराभव करनेवाला'–यह पद धारण किया । यह पद मुगलों के सनदपत्रों और सिक्कों पर सदा लिखा रहता था। सीकरी की लढाई के बाद बाबर ने तुरन्तही बुन्देलखण्ड में चन्देरी का किला ले लिया और फिर बिहार प्रान्त भी अपने राज्य में मिला लिया। राज्य में स्वस्थता होने के पहले ही आगरे में बीमार होकर बाबर सन् १५३० में परलोक सिधारा।

यद्यपि बाबर ने बहुत थोडे वर्ष राज्य किया तथापि राज्यकर्ताओं में उसकी योग्यता बहुत बडी है। बचपन में नाना प्रकार के संकट उसने भोगे थे। वह विद्वान् और रसिक था। तुर्की भाषा में उसने अपना चरित्र भी लिख रखा है। उसमें मरने के एक वर्ष पहले तक का सब हाल उसने लिखा है। बाबर की मा बडी चतुर और चाणाक्ष स्त्री थी । उसकी पत्नी भी वैसी ही [illegible]ार थी। वह सदा इन दो स्त्रियों की सम्मति लेता था । बडे बडे गुणि

और विद्वान् लोग, चित्रकार, कवि आदि बाबर के स्नेही थे। वह जैसा रण में शूर था वैसाही अत्यन्त कल्पक सेनानायक भी था। उसकी फौजी व्यवस्था सदा उत्तम रहती। चढाई पर रहते समय, एक मामूली सिपाही की तरह, वह सब प्रकार के कष्ट सह सकता था। मद्यपान का पहले उसे बडा व्यसन था पर वह सीकरी की लडाई से छूट गया। उसने अपने जीवनकाल में अनेक प्रकार के अनुभवों से उत्तम शिक्षा ग्रहण की थी, इस कारण उसमें नाना प्रकार की योग्यता आ गई थी। सृष्टि–सौंदर्य उसका प्रिय विषय था। वह कविता भी करता था। धूर्तता, विद्वत्ता, कष्ट–सहिष्णुता, महत्त्वाकांक्षा, उदारता इत्यादि गुणों के कारण वह उस वैभव के योग्य था। जो उसे मिला था उसके राज्य का विस्तार पश्चिम की ओर मध्य एशिया की अमू नदी से लेकर पूर्व ओर आसाम तक था। कहते हैं, हिंदुस्थान में तोपों का उपयोग पहले पहल बाबर ने ही किया।

२. हुमायूं–(सन् १५३०–४० और १५५५–५६):—मुगल बादशाही में यह नियम न था कि एक पुरुष के मरने पर उसके पश्चात् अमुक को ही राज्य मिले। इस कारण मृत बादशाह के लडकों में झगडे उपस्थित होते, और रक्तपात हुए बिना नवीन पुरुषों का राज्यारोहण न होता। बाबर के चार लडके थे। हुमायूं, कामरान्, हिन्दाल और मिर्जा अस्करी। इन सबों पर बाबर की अत्यन्त प्रीति थी। उसने हुमायूं को पास बुला कर अति प्रेमपूर्वक कहा, "बेटा, राज्यपद प्राप्त होने पर तू अपने भाइयों के साथ ममता से बर्ताव करना।" इसी के अनुसार हुमायूं ने अपनी ओर से अपने भाइयों को कभी दुख नहीं दिया। बाबर के मरने पर वह तख्त पर बैठा और बाप के आज्ञानुसार उसने कामरान् को काबुल और पंजाब, दो प्रान्त बिलकुल अलग कर दिये। हिन्दाल और अस्करी के हाथ में भी भिन्न भिन्न प्रान्तों का कारबार दे दिया। हुमायूं अच्छे स्वभाव का और ममतालु था। परन्तु राजकर्ता के लिए तेजी और निश्चय के जिन गुणों की आवश्यकता है वे उसमें न थे। इसी कारण उसे अपने राज्य में सुख नहीं मिला। राज्य के बलवों और गृहकलह के कारण हुमायूं के हाथ में बहुत दिन तक राज्य नहीं रह सका।

पहले पहल हुमायूं ने बुन्देलखण्ड पर सवारी करके कालिंजर का किला जीत लिया। शेरखां नामक उसका एक अफगान सर्दार बंगाले में रहता था।

उसने काशी के पास चुनारगढ में बलवा मचाया। उसको हरा कर हुमायूं ने चुनारगढ फिर उसी सरदार को सौंप दिया। यह बडी भूल उसने की। इसके बाद सन् १५३४ में उसने गुजरात प्रान्त पर धावा किया और वहां के सुलतान बहादुरशाह को हरा कर उसके बहुतसे शहर और किले ले लिये। इस प्रकार जीते हुए प्रान्त का बन्दोबस्त मिर्जा अस्करी को सौंपकर वह आगरे को लौट आया-(सन् १५३४)।

सूरवंशी पठान शेरखां ने बंगाले में फिर बलवा मचाया, इस लिए सन् १५३७ में हुमायूं को उस प्रान्त पर धावा करना पडा। हुमायूं ज्यों ज्यों आगे आया त्यों त्यों शेरखां पीछे हटने लगा। इस प्रकार वर्ष दो वर्ष बीत जाने पर सन् १५३९ में शेरखां और हुमायूं का मुकाबला बक्सर में हुआ। उसमें हुमायूं का पराभव हुआ और वह गंगा नदी तैर कर इस पार आया। कुछ समय बाद सन् १५४० में फिर दोनों का युद्ध कन्नौज में हुआ। उसमें भी पराजित होकर हुमायूं लाहोर भग गया। वहां जब कामरान् ने उसे आश्रय न दिया तब वह सिन्धप्रान्त की ओर जाने लगा। मार्ग में हिन्दाल के पास वह कुछ दिन तक रहा। वहां हिन्दाल के गुरु शेख अली अकबर जामी की हमीदा नामक एक सुस्वरूप लडकी के साथ उसने अपना विवाह किया-(सन् १५४१)। कुछ दिन बाद हिन्दाल भी जब उसे कुछ मदद न दे सका तब वह मार्ग के अनेक कठिन कष्ट सहता हुआ अमरकोट में आया। वहां हमीदा बेगम से उसके जो पुत्र उत्पन्न हुआ वही प्रसिद्ध अकबर बादशाह के नाम से प्रसिद्ध हुआ, (सन् १५४२)। सिन्धप्रान्त में सहारा न मिलने पर हुमायूं कन्दहार की ओर चला गया। वहां भी कामरान् की ओर से उसके भाई मिर्जा अस्करी के द्वारा उसे विघ्न उपस्थित हुए। ऐसी दशा में अकबर को रास्ते में छोडकर हुमायूं ईरान के शाह के पास मदद मागने गया। इधर कामरान् ने अकबर को काबुल में ला रखा। ईरान का शाह थमास्प शिया पन्थ का था। उसका पन्थ स्वीकार किये बिना हुमायूं को वह मदद नहीं देता था। इस लिए अन्त में लाचार होकर, थमास्प का कहना मान कर, उसकी फौज ले हुमायूं कन्धार को आया। वहां मिर्जा अस्करी को पकड कर उसने कन्धार ले लिया। फिर वह काबुल आया; वहां कामरान् को हरा कर उसने काबुल भी लिया-(सन् १५४५)। कामरान् के साथियों ने हिन्दाल का वध किया-

(सन् १५५१)। जब कामरान् ने दो तीन बार बलवा किया तब हुमायूं ने उसकी आंखें निकालवा लीं। कुछ दिनों बाद कामरान् मक्के में आकर मर गया—(सन् १५५७) । मिर्जा अस्करी को भी हुमायूं ने देश से निकाल दिया। वह भी मक्के में जाकर मर गया—(सन् १५७८) । इस प्रकार हुमायूं के शेष तीनों भाइयों का अन्त हुआ । काबुल में पाँच छे वर्ष तक कुछ स्वस्थता हो जाने पर जब हुमायूं ने सुना कि हिन्दुस्थान में गडबड मची है तब सन् १५५५ में, हिन्दुस्थान पर चढाई करके उसने अपना राज्य फिर प्राप्त कर लिया।

३. सूरवंश—(सन् १५४०—५५) ४. शेरशाह (सन् १५४०—४५):— इधर हुमायूं का पराभव करने के बाद शेरशाह ने दिल्ली में आकर राज्यपद धारण किया। शेरशाह शूर, चतुर और राजनीति मे दक्ष था। उसने मध्य-हिन्दुस्थान के अनेक स्थान ले लिये। परन्तु सन् १५४५ में जब वह कालिंजर का किला जीतने के लिए गया था तब बारूदखाना उडने से अचानक उसकी मृत्यु हो गई। उसने पांच वर्ष राज्य किया। उसका बहुत समय लडने में गया। तथापि उसने प्रजा के कल्याण के लिए अनेक काम किये। रैयत से लगान वसूल करने की पद्धति शेरशाह ने शुरू की, उसे ही फिर अकबर ने बढाया। बंगाल से ले कर सिन्ध तक, दो हजार मील के रास्ते पर, उसने हर दो मील पर कुएं और धर्मशालाएं बनवाई और रास्ते के दोनों तरफ वृक्ष लगा कर, लोगों के उपयोग के लिए घोडों की डाक रखी। जगह जगह अन्न-सत्र कायम कर के प्रवासियों के लिए सुभीता कर दिया। सारे राज्य में तौल और माप एक ही पद्धति पर नियत किये। रुपये का सिक्का पहले पहल इसी ने चलाया। सारांश, अफगान घराने के राज्यकर्ताओं में शेरशाह का बहुत बड़ा नाम है। यदि वह अल्पायू न हुआ होता तो उसके द्वारा और भी अनेक अच्छे काम हुए होते। शेरशाह के लडके सलीमशाह ने नव वर्ष शान्तिपूर्वक राज्य किया। वह बापके समान पराक्रमी न था; परन्तु प्रजा का हित करने में वह भी दक्ष था। उसने भी अच्छे अच्छे काम किये। सन् १५५१ में, उसके मरने पर, मुहम्मद सूर राज्य करने लगा।

हेमू नाम का एक होशियार और चतुर हिन्दू मुहम्मदशाह का मुख्य प्रधान था। मुहम्मदशाह दुर्व्यसनी और दुर्बल था; राज्य में बखेडे होने के कारण

उसका प्रभाव नहीं जमा। हां, हेमू ने मालिक की चाकरी ईमानदारी के साथ बजाई। इसी बीच में हुमायूं, उसका लडका अकबर और उसका विश्वासू सरदार बहरामखां दिल्ली पर चढ धाये। उस अवसर में घोर युद्ध हुआ। हेमू का पूर्ण पराभव हुआं। दिल्ली का तख्त सूर वंश के हाथ से निकल कर फिर हुमायूं के अधिकार में आ गया-(सन् १५५५)।

ऐसे प्रयत्न से पाये हुए राज्य का उपभोग हुमायूं बहुत दिन तक नहीं कर पाया। वह अनेक संकट सहते हुए क्षीण हो गया था। एक दिन जीने पर से उतरते हुए उसके हाथ की लकडी छूट पडी; वह गिर पडा और इसीसे उसका अन्त हुआ-(सन् १५५६)। हुमायूं का निजी बर्ताव उत्तम था; परन्तु राज्य करने में जिन विशिष्ट गुणों की आवश्यकता होती है वे गुण उसमें न थे; इसी कारण वह अपने बाप का कमाया हुआ राज्य सुरक्षित न रख सका; परन्तु उसके विघ्नों और उसकी विपन्नावस्था का अनुभव उसके पुत्र अकबर को अच्छा मिला और वह आगे बहुत पराक्रमी निकला।

पाठ छठवाँ।

मुगलवंश-अकबर।

सन १५५६ ईसवी से सन १६०५ ईसवी।

१. राज्यारोहण और शत्रुओंका बन्दोबस्त। २. अकबर के जीते हुए प्रदेश।
३. अन्तकाल की निराशा। ४. अकबर की योग्यता।
५. उसके किये हुए सुधार। ६. अकबर का धर्म।

१. राज्यारोहण और शत्रुओंका बंदोबस्तः—बालपन से अकबर विपन्नावस्था में बडा था। तेरह वर्ष की अवस्था में उसे बादशाही पद मिला। छुटपन में उसे शिक्षा किसी ने नहीं दी। अनुभव से और प्रसंग से जो कुछ शिक्षा मिली होगी उतनी ही उसके पास थी। बैरामखां ने उसका पालन किया। संकट के समय में भी बैरामखां ने हुमायूं को नहीं छोडा। राज्य प्राप्त होने के समय उसका विस्तार बहुत ही घट गया था। आगरा के आस पास जो कुछ सत्ता थी, वही थी। स्वकीय सरदारों के बखेडे और बाहरी शत्रुओं

के त्रास के कारण कोई नहीं कहता था कि, इस चौदह वर्ष के लडके की अच्छी चलेगी। पहले पहल सब कारबार बैरामखां देखता था।

सूरवंश का बन्दोबस्त न हुआ था। मुहम्मदशाह के प्रधान हेमू ने बडी भारी फौज ले कर अकबर पर धावा किया। आगरा शहर पर भी उसने अधिकार कर लिया। परन्तु बैरामखां ने पानीपत में हेमू का पराभव करके उसे जान से मार डाला–(सन् १५५६)। यह पानीपत की दूसरी लडाई है। इस विजय से अकबर की अच्छी धाक बैठ गई। आगे चल कर बैराम और अकबर में अनबन हो गई। अकबर का स्वभाव सौम्य रहता और खान का बर्ताव सदा उस पर कठोर रहता। अकबर ज्यों ज्यों बडा होता गया त्यों त्यों खान ने उसे अधिक अधिकार नहीं दिया। अन्त में अकबर ने खां को अलग करके सब अधिकार अपने हाथ में ले लिया। इस कारण बैरामखां को बहुत क्रोध आया और उसने बलवा किया। अकबर की सेना ने उसका पराभव करके उसे पकड लिया। अकबर उसके साथ बहुत उदारता का बर्ताव करना चाहता था; परन्तु उसने मक्के जाने के लिए अकबर से आज्ञा माँगी। जब वह मक्के को जा रहा था तब रास्ते में सूरत शहर में उसका खून हो गया–(सन् १५६१) बैरामखां के लडके को अकबर ने बडी सरदारी दी। उसी प्रकार आदमखां, खांजमां आदि अनेक सरदारों के बखेडे मिटा कर अकबर ने स्वराज्य में शान्ति स्थापन की।

२. अकबर के जीते हुए प्रदेशः—जब स्वराज्य में शान्ति हो गई तब अकबर राज्य के उन प्रान्तों के जीतने के उद्योग में लगा, जो स्वतंत्र हो गये थे। सन् १५६१ से लेकर सन् १५६७ तक वह राजपूत राज्यों के जीतने में लगा था। अकबर अत्यन्त गूढ राजनीतिज्ञ था। जब उसने देखा कि राजपूतों को युद्ध में जीतना बहुत कठिन है तब उसने, युद्ध की अपेक्षा सौम्य उपायों से, उन्हें अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न किया। राजपूतों के घरानों में से कुछ घरानों से विवाह करके उन्हें मिला लेने की युक्ति अकबर ने शुरू की। यह युक्ति अधिकांश में सिद्ध हुई और उसका राज्य सुरक्षित हुआ। सन् १५६१ में वह जयपुर गया। वहां के राजा बिहारीमल ने अपनी लडकी का विवाह अकबर के साथ कर दिया। बिहारीमल के लडके भगवानदास को अकबर ने अपनी फौज में एक बडे सरदार की जगह दी और उसके

लडकी का विवाह सलीमके साथ कर लिया । उसी वर्ष जोधपुर का राजा मालदेव भी अकबर के शरण में गया । उसकी लडकी जोधबाई के साथ अकबर ने विवाह किया । सन् १५६७ में अकबर ने मेवाड की राजधानी चित्तौगढ पर चढाई की । राजपूत लोगों मे घोर युद्ध किया । किन्तु अन्त में अकबर में चित्तोह पर अधिकार कर लिया । उदयसिंह अकबर के शरण में नहीं गया; तथापि आगे, वह अकबर के साथे स्नेहभाव से बर्ताव करने लगा । उदैपुर वंश का बाना आज तक वैसाही कायम है । यहां के राजाओं ने मुसल्मानों से शादीब्याह नहीं किया ।

सन् १५७२-७३ में अकबर गुजरात प्रान्त के जीतने में लगा था । उसमें अकबर ने बडी बडी लढाइयां मारीं । अन्त में अहमदाबाद पर अधिकार कर के वहां उसने अपना सूबा नियत किया । बंगाल प्रान्त दाऊदखां नामक सरदार के हाथ में था । अकबर की फौज ने दाऊदखां का पराभव करके उसका वध किया और बंगाल, बिहार तथा उडीसा प्रान्त दिल्ली की बादशाही में मिला लिये । (सन् १५७४-७६) राजा टोडरमल ने इन् प्रान्तों के जीतने में विशेष पराक्रम दिखलाया । उसने, और फिर कुछ दिन तक राजा मानसिंह ने उस प्रान्त का बन्दोबस्त किया और वहां नवीन उत्तम राज्यपद्धति शुरू की । इस समय में अकबर ने राज्य का बहुत सुधार कर लिया । आगरा और सीकरी में सुन्दर इमारतें बनवाई । सन् १५८५ में अकबर ने काबुल प्रान्त जीत कर वहां का बन्दोबस्त राजा भगवानदास को सौंप दिया । सन् १५८७ में उसने भगवान-दास और कासिमखां के साथ फौज भेज कर काश्मीर प्रान्त को जीत लिया, अपने राज्य में मिलाया । इस जंग में राजा बीरबल मारा गया । सन् १५८९ में राजा टोडरमल की मृत्यु हुई । सन् १५९२ में अकबर ने सिन्ध प्रांत को हस्त-गत किया । उसी प्रकार सन् १५९४ में कन्धार जीत लेने पर, अफगानिस्तान और नर्मदा तक का सारा हिंन्दुस्थान अकबर के अधिकार में आ गया ।

सन् १५९५ के लगभग अहमदनगर की गद्दी के सम्बन्ध में झगडे शुरू हुए । वह मौका देख कर अकबर ने अपने लडके मुराद को फौज दे कर, उस राज्य पर धावा करने के लिए भेजा । चान्दबीबी नाम की एक होशियार स्त्री उस समय अहमदनगर का शासन करती थी । उसने पुरुष की तरह मर्दानी पोशाक पहन कर

स्वतः युद्ध किया। यह खबर मालूम होते ही अकबर ने अपने विश्वासपात्र सरदार अबुल फ़जल को अहमदनगर पर भेजा; और पीछे से स्वयं भी दक्षिण आया।

अबुल फजल ने दौलताबाद पर कब्जा करके अहमदनगर पर धावा किया। उसी बीच में चांदबीबी मारी गई और अहमदनगर का किला मुगलों के हाथ में आगया-(सन् १६००)। तथापि निजामशाही पर अधिकार नहीं हुआ। इतने ही में अकबर ने सुना कि उसके बडे लडके सलीम ने उत्तर हिन्दुस्थान में बलवा किया। इस कारण दक्षिण की मुहीम वैसीही छोड कर अकबर तुरन्तही दिल्ली को लौट आया। इस चढाई में अकबर ने खानदेश और बरार-प्रान्त जीत लिये।

३. अन्तकाल की निराशाः—पहले पहल अकबर के बहुत से वर्ष जिस प्रकार सुखशान्ति और वैभव में व्यतीत हुए उसी प्रकार उसे अन्तकाल में दुःख हुआ। उसके तीन लडके थे। सलीम, दानियाल और मुराद। उन सबों का जन्म सन् १५६९ के आगे दो चार वर्ष में हुआ था। वे शूर, उदार और होशियार थे; पर सब को मद्यपान का बडा व्यसन था। वे भिन्न भिन्न प्रान्तों के बन्दोबस्त पर थे, और अनेक चढाइयों में हाजिर रहते थे। दानियाल पर अकबर की विशेष प्रीति थी। इस कारण सलीम को जान पडा कि अकबर के पीछे मुझे राज्य न मिलेगा। इस लिए जब उसने देखा कि अकबर दक्षिण को गया है तब उसने उत्तर में बलवा करके राजचिन्ह धारण किये। यह सुन कर अकबर तुरन्त ही लौट आया; और अबुल फजल को लिखा कि, तुम दूसरी रास्ता से आकर सलीम को पकडो। अबुल फजल बहुत बडा पुरुष था। परन्तु सलीम ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि मेरे विषय में मेरे बाप का मन बिगाडने का कारण वही है। अबुल फ़जल, अकबर के आज्ञानुसार सलीम को पकडने के लिए जब दक्षिण से लौटा आ रहा था तब सलीम ने, अपने उपर्युक्त अविचार के कारण, बुन्देलखण्ड में हत्यारों के द्वारा उसका खून करवाया-(सन् १६०२)। अकबर ने जब यह सुना कि मेरे प्राणप्रिय सरदार अबुल फजल का स्वयं मेरे पुत्र ने वध किया तब वह अत्यन्त शोकग्रस्त हुआ। इसके सिवा उसके और भी दो एक अत्यन्त प्रिय सरदार मारे जा चुके थे। इन्हीं कारणों से उसकी इहलोक की सब आशाएं मारी गईं। उसकी पहले की वृत्तियों में अब बहुत बडा अन्तर पड गया। जैसे तैसे सलीम को उसने ठीक किया। सन् १६०४ में उसके दूसरे लड़के

दानियाल की भी मृत्यु हो गई। इस प्रकार एक के पीछे एक दुःखों के आ पडने से अकबर बिलकुल क्षीण हो गया। अन्त में अपनी मृत्यु निकट जान कर, शान्ति के साथ उसने सब बातों का प्रबन्ध किया। सब लोगों से अन्तिम विदाई ली और सलीम से सदुपदेश की चार बातें बतला कर यह जगत्-विख्यात पराक्रमी मुगल बादशाह सन् १६०५ में परलोक सिधारा। इस प्रकार ६२ वर्ष की आयु भोग कर आगरे के किले में अकबर का देहान्त हुआ। उसने पचास वर्ष राज्य किया। सिकन्दरा में उसकी कबर है।

४. अकबर की योग्यता:—आज तक पृथ्वी पर जितने बडे बडे राजपुरुष हो गये उन्हीं में अकबर की गणना है। उसने अपना यश, वैभव और बड़प्पन स्वयं कमाया था। उसका स्वभाव मनमिलाऊ था। वह राजकाज में अत्यन्त कुशल था। उसका डीलडोल मध्यम और दिखाऊ था। उसका चेहरा दूसरे पर प्रभाव डालनेवाला था। उसके शरीर में अप्रतिम शौर्य था। महावत को जान से मार कर भग उठनेवाले हाथी पर, एकदम कूद कर, अकबर उसे वश में कर लेता। सांडिनी पर सवार होकर, बात की बात में, वह लम्बी लम्बी मंजिलें तय करता। वह बहुत विद्वान् न था; परन्तु नाना प्रकार के ग्रन्थ दूसरों से पढाकर वह सुनता था। इस कारण वह बहुश्रुत हो गया था। नींद के चार घंटे छोडकर बाकी सब समय वह किसी न किसी उद्योग में लगाता था। राज्य के सब भाग, उसने स्वयं घूम कर देखे थे। उसकी रहन सहन बहुत सादी थी। वह दयालु था। लोगों पर उसका विलक्षण प्रभाव था। रोज एक बार दरबार करके वह सब लोगों का कहना सुन लेता। उस समय अकबर से मिलने के लिए किसी को भी मनाई न थी। मर्दाने खेल, शिकार, बागबगीचा, चित्रकला, गायनकला इत्यादि बातों में उसे स्वाभाविक रुचि थी।

अकबर की योग्यता इतनेही से बडी नहीं निश्चित होती कि उसने एक के बाद एक अनेक प्रान्त जीते। यह बात सच है कि सरलता से राज्यप्रबन्ध जारी रहने के लिये शत्रुओं का बन्दोबस्त करके शान्ति स्थापित होना चाहिये। इस लिये भिन्न भिन्न प्रान्त जीतने के साथ ही साथ अकबर पहले ही से प्रजा को सुखी रखने के प्रयत्न में भी लगा था, और यही राजा का मुख्य कर्तव्य है। पहले चार सौ वर्ष तक अफगान सुलतानों की अमलदारी हिन्दुस्थान में थी। इस अवधि में नाना प्रकार के रक्तपात और अनर्थ हुए और

प्रजा को बहुत कष्ट रहा। अफगानों का स्वभाव ही क्रूर और विध्वंसक था। उन्होंने केवल फौजी जोर पर ही राज्य किया। प्रजासुख के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया और इसी कारण उनके राज्य बहुत दिन नहीं टिके। बाबर मुगल-खान्दान का था। उसके आने से पहले की दशा बदल गई; और अकबर ने पहले की गलतियां समझ कर प्रजासुख के लिए नवीन उपाय किये। इसी कारण उसका राज्य चिरकालीन हुआ। उसने प्रजा के साथ स्नेह और निष्पक्षपात का बर्ताव किया। राज्य, व्यापार, समाज और धर्म आदि विषयों में उसने प्रजा के सुख की वृद्धि की और इसी कारण उसके विषय में लोगों की पूज्यबुद्धि हुई। कुछ काल बाद 'दिल्ली राजधानी' और 'मुगल बादशाह' के विषय में लोगों का इतना पवित्र और पूज्य भाव उत्पन्न हुआ कि आगे चल कर मराठों ने दिल्ली को प्राप्त कर लेने के जो प्रयत्न किये वे राजपूतों को तथा अन्य हिन्दुओं को नहीं पसन्द आये। अकबर ने यह समझ कर कि, इस प्रकार का पूज्यभाव रैयत के मन में उत्पन्न करनेही से राज्य चिरकालीन होता है, पहले की राज्यपद्धति बदल कर नवीन राजनीति शुरू की। यह अकबर की बड़ी भारी चतुराई है। इसी हेतु से उसनें (१) भिन्न भिन्न प्रदेश अपने राज्य में मिला लिए; (२) हिन्दू और मुसल्मानों में भेदबुद्धि न रख कर सरकारी नौकरी और न्याय सब को एक समान मिलने का प्रबन्ध किया; (३) जजिया कर माफ करके उसने मानो हिन्दुओं के हृदय में चुभनेवाला एक बाण ही नष्ट कर डाला; उसी प्रकार क्षेत्र और तीर्थों आदि में यात्रियों को जो छोटे छोटे कर देने पड़ते थे वे भी माफ कर दिये; (४) धर्मसम्बन्ध में हिन्दू-मुसल्मानों की एकता करने के लिए सब धर्मों के उत्तमोत्तम तत्त्व स्वीकार करके एक नवीन धर्म की स्थापना की। उसका वर्तांव आगे दिया है; (५) अकबर ने यह समझ लिया कि राजपूत राजा भारतवर्ष के पुरातन क्षात्रिय हैं; इस लिए उनका मन जब तक अपनी ओर न आकर्षित किया जायगा, तब तक हमारा राज्य इस देश में नहीं टिक सकता। इसी नीति के अनुसार अकबर ने अपने दरबार के अच्छे अच्छे काम राजपूतों के सिपुर्द करके उनकी सहायता ली और उनकी लड़कियों की शादी अपने घराने में करने की चाल डाली; (६) उसके दरबार में राजा टोडरमल नामक अवध प्रान्त का एक क्षत्री सरदार था। उसने अनेक प्रान्तों का राजकाज करके राज्य के भूमि-कर का प्रबन्ध कर दिया।

टोडरमल ने पहले सब जमीन की माप की, बाद को उपजाऊ और गैर उपजाऊ जमीन का निश्चय करके लगान की रकम ठहरा दी । धीरे धीरे सारे राज्य में टोडरमल का वह प्रबन्ध जारी हो गया; (७) कुल राज्य के सोलह भाग, अर्थात् सूबे नियत किये गये । सूबा के अन्तर्भाग 'सरकार' और सरकार के अन्तर्भाग 'परगने' नियत किये गये । भूमि-कर के करीब २० करोड रुपये और जकात तथा अन्य आमदनी के २० करोड रुपये मिलकर कुल ४० करोड रुपये अकबर के राज्य की आय थी; (८) फौजी इन्तिजाम भी अच्छा था । दस सवारों से लेकर दस हजार सवारों तक के अधिकारी नियत थे । उनका क्रम बांध कर तनख्वाह निश्चित कर दी गई थी; (९) अकबर ने लोक-सुधार-सम्बन्धी फेरफार किये । पहले लडाई में जो लोग हार जाते थे उनको कतल करके स्त्री-बच्चों को गुलाम के तौरपर बेच डालने की चाल थी । अकबर ने इस चाल को बिलकुल बन्द कर दिया । प्रौढावस्था में लडके लडकियों का विवाह करने का नियम बनाया । विधवा स्त्रियों का पुनर्विवाह करने के लिए उत्तेजन दिया । और इस प्रकार इन्तिजाम कर दिया कि जिससे सती होने के लिए किसी स्त्री पर सख्ती न की जाय । मुसल्मान लोग जो अपना जनानखाना मनमाना बढाया करते थे उसकी मनाई कर दी । राज्य में पाठशालाएं स्थापित कीं । न्यायकर्म में दिव्य* करना और मनुष्य तथा जानवरों की बलि देना अपराध ठहराया । इस प्रकार का सुभीता अकबर ने कर दिया कि जिससे सब के जानमाल की [हिन्दू मन्दिरों की सम्पत्ति की भी] सरकार की ओरसे रक्षा हो सके, तथा सब लोग अपने अपने उद्योगधंधे, स्वतन्त्रता और निर्भयता के साथ कर सके; (१०) अबुल फजल ने 'आईन-ए-अकबरी' अर्थात् अकबर का कानून-नामक उत्तम ग्रन्थ लिखा है । उसमें उसने अकबर के बनाये हुए सब नियमों और सुधारों का उत्तम वर्णन किया है । सारांश, अकबर अपने कर्तव्य का यह उच्च विचार सामने रख कर बर्ताव करता था कि "राजा, लोगों की रक्षा करने के लिए, परमेश्वरद्वारा नियत किया हुआ प्रतिनिधि है ।" इसी कारण अकबर का नाम अजरामर हो गया है ।

---

* प्राचीन समय में सच और झूट का निर्णय करने के लिये आग पर चलने, ... में डुबाने इत्यादि बातों का प्रचार था, उसी को 'दिव्य' Ordeal कहते हैं.

५. अकबर का धर्मः—अकबर ने दीने–इलाही नाम का जो एक नवीन धर्म स्थापित किया वह अकबर का नाम चिराय होने के लिए और भी बडा कारण हुआ । अकबर ने सोचा कि हिन्दू और मुसलमान एकधर्मी हुए बिना लोगों में एकता न स्थापित होगी और बिना एकता के राज्य में मजबूती नहीं आ सकती; इसी लिए उसने दोनों धर्मों के उच्च तत्त्व चुन कर एक नवीन धर्म की स्थापना की। आगरे की पाठशाला के गुरु शेख मुबारिक (सन् १५०६–१५९३) के अबुलफैजी (जन्म १५४७) और अबुलफजल (सन् १५५१–१६०२), दो पुत्र थे । वे दोनों उत्तम विद्वान् और स्वतन्त्र विचारवाले पुरुष थे । इन अद्वितीय पुरुषों की सहायता मिलने पर, सन् १५७५ से लेकर पचीस वर्ष तक अकबर इस नवीन धर्म को तैयार कर रहा था । फैजी विद्वान् और विरक्त पुरुष था । उसने अनेक संस्कृत ग्रन्थों का मुसल्मानी भाषा में भाषान्तर किया । फजल विद्वान् तो थां ही; परन्तु वह शूर योद्धा और राजनीति में पटु था । उसकी और अकबर की इतनी दोस्ती हो गई कि अगले पचीस वर्षों में प्रत्येक महत्त्वपूर्ण काम में दोनों का अंग रहता था । पहले पहल अपने स्तुत्य उद्देश के विषय में लोगों का विश्वास जमने के लिए वह मुसल्मान, हिन्दु, पारसी और क्रिश्चियन धर्म के बडे बडे विद्वान् उपदेशक दूर दूर के देशों से आगरे में लाया । इसके बाद उसने उनकी ओर से धर्म पर वाद–विवाद शुरू किये । इन वाद–विवादों के लिए उसने एक मन्दिर बनवाया । प्रत्येक गुरुवार की रात में बडी सभा करके उसमें ये वाद–विवाद हुआ करते ! वे पचीस वर्ष तक जारी थे । अकबर और फजल ध्यान से सब बातें सुनते थे । कुछ काल के बाद अकबर ने भिन्न भिन्न धर्मों के उदात्त तत्त्व एकत्र करके नवीन धर्म स्थापन किया । उसमें बहुत करके मुसल्मानी धर्म को अर्धचन्द्र मिला । पारसियों की अग्निपूजा और हिन्दुओं की सूर्योपासना अकबर ने इस नवीन धर्म में ले लीं । क्रिश्चियन धर्म से भी बहुत सी बातें उसने लीं । अकबर का यह कृत्य मुसल्मानों को अच्छा नहीं लगा । वे उसका द्वेष करने लगे । प्रसिद्ध ब्राह्मण राजनीति–पटु राजा बीरबल इस काम में अकबर की सहायता करता था । अकबर स्वयं इस नवीन धर्म का पुरस्कर्ता हुआ । यह धर्म कुछ दिन चला, पर वह बहुत दिन नहीं टिका और न उसका बहुतसा प्रचार ही हुआ । कुछ काल बाद अबुलफजल का खून हुआ ।

काश्मीर की चढाई में राजा बीरबल का देहान्त हुआ । टोडरमल और दूसरे साथी भी मर गये । ऐसी दशा में अकबर की सर्व आशायें टूट गई और अन्त में दो तीन वर्ष तक उसका चित्त स्थिर न था । उसके लडके में भी पानी न था, इस लिए उसकी मृत्यु के साथ ही इस नवीन धर्म का भी लोप हो गया । तथापि फैजी और फजल के संयोग से हिन्दू और मुसल्मानों का परस्पर द्वेषभाव बहुतसा नष्ट हो गया और वे सुख से एकत्र रहने लगे ।

सारांश, अकबर का शासन इतना उज्ज्वल था कि उसके समय में पृथ्वी की पीठ पर इतना सुधार किया हुआ, सुखी और दृढ राज्य दूसरा न था । इंगलैंड की रानी एलिजाबेथ अकबर की समकालीन है । अकबर के दरबार में अनेक लोक प्रसिद्ध हुए । बेराम, तोडरमल, बीरबल, अबुल फैजल, फजी, राजा मानसिंह, तानसेन; मुल्ला पोपियाजा और हकीम महज़ान अकबरी दरबार के 'नवरत्न' हैं । बदाउनी नाम का एक विद्वान् इतिहासकर्ता उसके दरबार में था । उसके ग्रन्थ सरस हैं ।

पाठ सातवाँ ।

जहांगीर और शाहजहां ।

सन् १६०५-१६५८ ईसवी तक ।

१. सलीम उर्फ जहांगीर ।	२. नूरजहां ।
३. अन्त के बलवे ।	४. जहांगीर का राज्य-प्रबन्ध ।
५. शाहजहां ।	६. शाहजहां की योग्यता ।

१. सलीम उर्फ जहांगीर, (सन १६०५-१६२७ ईसवी):—अकबर के मरने पर उसका लडका सलीम जहांगीर (अर्थात् जग को जीतने वाला) के नाम से गद्दी पर बैठा । वह पराक्रम में कुछ कम न था; पर मद्यपान के व्यसन से उसके शरीर का तेज कम हो गया था । चूंकि अकबर ने राज्य का सब प्रबन्ध कर रखा था इस लिए जहांगीर कुछ दिन तक शान्ति के साथ राज्य कर सका । राज्य पर बैठते ही उसने कई अच्छे नियम किये; पर उनकी

उत्तमता बहुत दिन तक नहीं टिकी। इसी जमाने में अनेक पाश्चिमी प्रवासी हिन्दुस्थान में आये, उन्होंने जहांगीर का हाल लिख रखा है। वास्तव में जहांगीर का राजकाज घराऊ बातों से भरा हुआ है। उसमें राजकीय घटनाएं बहुत सी नहीं हुईं। सन १६०८ से लेकर १६१४ तक उदयपुर के राना अमरसिंह के साथ जहांगीर का युद्ध हो रहा था। इस युद्धमें उल्लेख करने योग्य जय किसीको नहीं मिला। अमरसिंह के लडके कर्ण ने बादशाही फौज में सर्दारी की नौकरी कर ली। सन् १६१६ से सन् १६२१ तक जहांगीर का लडका खुर्रम (शाहजहां) दाक्षिण देश जीतने का काम कर रहा था। उस समय मालिक अम्बर नामक एक हबशी राजनीतिज्ञ अहमदनगर में अपना राज्य जमा रहा था। परन्तु खुर्रम ने उसे दबा कर अहमदनगर जीत लिया; तौभी वह बहुत दिन मुगलों के अधिकार में नहीं रहा।

सलीम के चार लडके थे; खुसरू, पर्वीज, खुर्रम और शहरयार। खुसरू सद्गुणी और होशियार था। परन्तु अकबर की उस पर कृपा होने के कारण उसकी और जहांगीर की कभी नहीं बनी। खुर्रम चालाक और काबेबाज था। पर्वीज सदा मद्यपान में डूबा रहता। जहांगीर के राज्य पर बैठते ही खुसरू ने गदर किया, इस लिए बादशाह ने उसे कैद कर रखा। खुर्रम जब दाक्षिण को गया तब खुसरू को अपने साथ ले गया। वहां बुरहानपुर में उसका खून हुआ।

२. नूरजहां:—जहांगीर के शासनकाल में नूरजहां का वृत्तान्त महत्त्वपूर्ण है। उसका मूल घराना ईरान का था। उनका बाप मिर्जा गयास विपत्ति का मारा ईरान से हिन्दुस्थान को आ रहा था। मार्ग में उसके एक लावण्यवती लडकी पैदा हुई, वही नूरजहां है। पंजाब का एक व्यापारी वह सब कुटुम्ब सँभाल कर ले आया और उसी व्यापारी की सिफारिश से अकबर के दरबार में नूरजहां के मा-बाप का प्रवेश हुआ। उसका बाप बडा गुणी था। उसे अकबर ने अपना निजी कारबारी नियत किया। नूरजहां भी अपने मा-बाप के साथ महलों में आया जाया करती थी। सलीम की जब उस पर नजर पड़ी तब उसके साथ विवाह करने की उसकी लालसा हुई; पर यह बात अकबर को पसन्द न हुई। इस लिए शेरखां नामक सरदार के साथ नूरजहां का विवाह करके अकबर ने उसे बंगाल में नौकरी पर भेज दिया। इस प्रकार उस समय उसने नूरजहां को सलीम की दृष्टि की ओट में किया।

कुछ दिन बाद जब सलीम बादशाह हुआ तब उसने नूरजहां के पति का खून करवा कर उसे अपने पास बुलाया। पहले चार पांच वर्ष तक वह सलीम के वश नहीं हुई। फिर जहांगीर ने उसके साथ विवाह करके उसे अपनी पट-रानी बनाया। उस समय से जहांगीर उसीकी सलाह से काम करता। यद्यपि मुगल बादशाह का सारा कारवार वही देखती थी, तथापि उसने अपनी सत्ता का दुरुपयोग कभी नहीं किया। विशेषकर अन्तःपुर और राजमहलो की व्यवस्था उसने सुधारी। वह स्वभावतः गुणी और रसिक थी; इस कारण सामग्री–साहित्य आदि और घर के प्रबन्ध में उसने नाना प्रकार के उपयोगी फ़ेरफार किये। स्वयं बादशाह का इन्तिजाम वह अच्छा ही रखती थी। उसका मद्य-पान नूरजहां ने मित कर दिया। दरबार में जाते समय बादशाह की दुरुस्ती पर वह सदा ध्यान रखती। जहांगीर की प्रकृति क्षीण होने पर जो कारवाइयां शुरू हुई उनमें नूरजहां ने बडे बडे फेरबदल किये। अन्त में खुर्रम को राज्य प्राप्त होने पर वह अपनी तनखाह ले कर स्वस्थ बैठ रही। तब से लेकर उसने अपना शेष जीवन एकान्त वास में व्यतीत किया। सन् १६४६ में वह पर-लोक सिधारी।

१. अन्त के बलवेः–मुगलबादशाही में यह क्रम बार बार देखने में आता है कि ज्योंही बादशाह जरा भी बीमार हुआ त्योंही अगले इन्तिजाम के लिए सारे राज्य में एकदम दंगे शुरू होते। आसिफखां नामक नूरजहां का एक भाई था, उसकी लडकी मुन्ताजमहल खुर्रम उर्फ शाहजहां बादशाह को ब्याही थी। नूरजहां के पहले विवाह की एक लडकी थी। शहरयार के साथ उसका विवाह करके उसे राज्यपद प्राप्त करा देने का प्रयत्न नूरजहां ने शुरू किया। बैरा-मखां का लडका अब्दुर्रहमान खानखाना (रहीम कवि) और धर्मभ्रष्ट हिन्दू सरदार महाबतखां फौज में प्रमुख थे। खानखाना और शाहजहां दिल्ली पर कब्जा करने के लिए बडी भारी फौज लेकर आये। परन्तु पराभव हो जाने के कारण उन्हें भगना पडा। इतने ही में नूरजहां और महाबतखां में अनबन हो गई और जहांगीर ने महाबतखां का अपमान किया। इस लिए महाबतखां ने एकदम चढाई करके बादशाह को नूरजहां के साथ कैद कर लिया। नूरजहां ने बडी युक्तिपूर्वक अपने को बादशाह के साथ कैद से छुडाया और महाबतखां ... किया। महाबतखां दक्षिण में शाहजहां के पास भाग गया। नूरजहां

ने बादशाह को दक्षिण में शाहजहां और महावतखां को शिकस्त देने के लिए भेजा; पर जब बादशाह ने सुना कि वे दोनों वहां मिल कर एक हो गये हैं तब वह लौट आया। कुछ काल बाद बीमारी के कारण बादशाह हवा बदलने के लिए काश्मीर गया और वहीं बीमार होकर सन् १६२७ में मरगया। तब तो क्षण में नूरजहां के हाथ की सत्ता चली गई। शाहजहां तुरन्तही दक्षिण से आया और बडी युक्ति से सब प्रतिपक्षियों को हराकर दिल्ली का तख्त उसने प्राप्त कर लिया। उसने दूसरे हक़दारों को जान से मरवा डाला।

४. जहांगीर का राज्यप्रबन्धः—उपर्युक्त वर्णन से जहांगीर की योग्यता पाठकों को मालूम हो गई होगी। उसके हेतु अच्छे थे; पर वे सफल नहीं हुए। जब वह होश में रहता तब बहुत से अच्छे काम करता। वह स्वयं तो मद्यपान करता था; पर यदि दूसरा कोई करे तो उसे सख्त सजा देता था। राजमहल मे एक घंटा रखा था और उसकी सुनहली जंजीर उससे रास्तेपर लगा रखी थी। उसे खींचनेपर भीतर घंटा बजता और सब की दादफियाद बादशाह तक पहुँच जाती। इस जंजीर को 'न्यायशृंखला' कहते थे। सांकल की लंबाई साठ फुट थी और उस में साठ सोने के घंटे थे। जहांगीर रसिक था। उसने विद्या को उत्तेजन दिया। उसका ऐश-ओ-आराम और अमन-ओ-चैन अमर्यादित थे। उसकी धर्मश्रद्धा मामूली थी। धर्म के काम में उसने किसीपर जुल्म नहीं किया। रास्तों पर जो डाँके पडते थे उनका उसने बहुत ही बंदोबस्त किया। उसकी सवारी का ठाट बाट अवर्णनीय था।

अँगरेजों का हिंदुस्थान से पहले पहल संबंध जहांगीरही के जमाने में हुआ इसके पहले के सौ वर्षों में यूरोपियन लोगों को हिंदुस्थान का अच्छा ज्ञान हो गया था और हजारों लोग व्यापार के निमित्त से यहां आने लगे थे। हॉकिन्स (सन् १६०८) और सर टॉमस रो (सन् १६१५) ये दो इँगलैंड के वकील जहांगीर बादशाह के पास व्यापार के सुमीते मांगने के लिये आये थे। उन्हे विशेष सुभीत नहीं मिले, तथापि सूरत में कोठी बनाने की आज्ञा उन्हें मिल गई और अँगरेजों का हिंदुस्थान से व्यापार शुरू हुआ। उन दोनों ने अपने प्रवासवर्णन लिखे हैं, वे पढने योग्य हैं।

५. शाहजहां का शासनकालः—मुगल वंश का अत्यंत भाग्यशाली बादशाह शाहजहां है। राज्यपद प्राप्त करने के लिए उसे कितने ही बुरे काम

करने पडे, परंतु बाद को उसने सदाचरण का बर्तावा किया । वह विषयी था; तथापि उसने राजकारबार की ओर बेपरवाई नहीं की । आसिफखां और सादुल्लाखां उसके मुख्य वजीर थे । आसिफखां उसका श्वशुर था । वह राजकार्य में अत्यन्त दक्ष था । उसके मरने पर सादुल्लाखां वजीर हुआ । राजनीतिज्ञता में इन दोनों के नाम प्रसिद्ध हैं । शाहजहां ने तीस वर्ष राज्य किया । इतने समय में राज्य प्राप्ति के लिए आदि और अन्त में दो बडे युद्ध हुए । बीच का समय शांति और वैभव के साथ व्यतीत हुआ । इस काल में प्रजा के कल्याण के लिए उसने अनेक काम किये । खानजहां लोदी नामक एक अफगान सरदार दक्षिण में था, उसने अहमदनगर की निजामशाही के राजनीतिज्ञ मलिक-अम्बर को मिलाकर गदर शुरू किया । इस लिए बादशाह ने चढाई करके उसे जान से मार डाला; (सन् १६२९) । इसके बाद शाहजहां ने अहमदनगर पर दो चढाइयां कीं और वह राज्य जीत कर, हमेशा के लिए उसे अपने राज्य में मिला लिया, (सन् १६३७) । राजपूत राजाओं के साथ कुछ दिनोंतक शाहजहां के झगडे होते रहे; पर उनमें उसे विशेष कामयाबी न हुई और राजपूत लोग उत्तरोत्तर प्रबल होते गये । अफगानिस्तान में भी दस पांच वर्ष बादशाह की फौज भिडी हुई थी । कन्धार प्रान्त ईरान के शाह ने ले लिया और काबुल के आगे मुगलों की सत्ता नहीं रही । पोर्चुगीज लोग बंगाल के उपसागर में चोरी का व्यवसाय करके देश में विघ्न उपस्थित करते । इस कारण से तथा अन्य कारणों से भी शाहजहां और पोर्चुगालवालों में बिगाड हो गया । शाहजहां ने उनकी बंगाल की सब कोठियां लूट लीं; बहुत लोगों को कतल किया; और बहुतों को कैद करके वह दिल्ली ले आया, (सन् १६३२) ।

सन् १६५७ में शाहजहां बादशाह एकाएक बीमार पडा । उस समय राज्य प्राप्त करने के लिए उसके मुल्क में भयानक युद्ध शुरू हुआ और सारे देश में हलचल मच गई । उसके चार लडके और दो लडकियां थीं;-दारा, शुजा, औरंगजेब और मुराद । लडकियों में से बडी का नाम जहान्-आरा उर्फ बेगमसाहेब और छोटी का नाम रोशन-आरा । इस युद्ध में औरंगजेब ने कपट के जोर से बाप को कैद किया; अन्य भाइयों को जान से मार डाला, (सन १६५८) और स्वयं आलमगीर के नाम से राज्य करने लगा । शाह-[illegible] आठ वर्षतक कैद था । वह सन १६६६ में मरगया ।

६. शाहजहां की योग्यताः—शाहजहां के राज्यशासन का वर्णन अनेक पश्चिमी प्रवासियों ने किया है। वह सदा मद्य के रंग और विलास में निमग्न रहता। गाना बजाना, खाना पीना आदि ऐशआराम की बातों में उसके कई घंटे बीतते थे। वह धनका बडा लोभी था। उसका खजाना सदा भरा रहता। तथापि बचत निकाल कर उसने अनेक बडे खर्च के काम किये। धर्म के सम्बन्ध में वह आग्रही न था; तथापि स्वयं मुसलमानी आचार पालने में वह दक्ष था। उसने एक रत्नजडित मयूरासन, अर्थात् मोर की आकृति का सिंहासन तैयार किया। उसमें छे करोड से ऊपर खर्च लगा। शाहजहां के जमाने में जनानखाने का चलता बहुत बढा। योग्य हाकिम नियत करके उनको सब राज्य का कारबार उसने सौंप दिया। इस कारण उसे स्वयं आराम मिला और प्रजा भी सुखी रही। उसके दरबार का वैभव असीम था। कलाकौशल्य के कामों में उसने बहुत खर्च किया। दिल्ली, अगरा आदि शहरों में बडी बडी इमारतें बनवा कर उसने उनकी उन्नति की। बादशाह की प्यारी रानी मुम्ताज महल की कबर, जो आगरे में ताजमहल के नाम से मशहूर है, शाहजहां का मुख्य स्मारक है मुम्तामजमहल के नाम पर से इस इमारत को ताजमहल कहते हैं। यह इमारत यमुना नदी के पश्चिम किनारे पर, आगरे से डेढ कोस पर है। उसे बनवाने में तीस करोड रुपया लगा; और बीस हजार मनुष्य बाईस वर्ष तक उसमें लगे रहे। इतनी सुन्दर और मजबूत इमारत पृथ्वी पर दूसरी नहीं है। शाहजहां के राज्य में बाईस सूबे थे और उनकी आय छतीस करोड रुपये थी। अकबर ने जो पद्धति जारी की उसे शाहजहां ने दक्षिण में चलाया। मंडेल्स्लो, टॅवर्नियर और बर्नियर आदि प्रवासी शाहजहां के माने में भारत में आये।

पाठ आठवाँ।

औरंगजेब।

(सन् १६५८–१७०७)।

१. राज्यारोहण और राज्यशासन की नीति।। २. मीरजुम्ला।
३. बुन्देलखण्ड का राजा छत्रसाल। ४. राजपूतों से युद्ध।
५. दक्षिण की सवारी। ६. औरंगजेब की योग्यता।

१. राज्यारोहण और राज्यशासन की नीतिः—शाहजहां बादशाह के चार लडके थे; उन सब के स्वभाव आपस में बिलकुल भिन्न थे। दारा शूर

और उदार था; परंतु क्रोधी और उतावला था। मुसलल्मानी धर्म पर उसकी बहुत निष्ठा न थी। धर्म-संबंध में उसका मन कुछ कुछ अकबर से मिलता था। वह बापके पास रहकर कारबार देखता था। दूसरा लडका शुजा बंगाल के कारबार पर था। वह भी शूर और होशियार था; परन्तु रातदिन ऐश-आराम में निमग्न रहने के कारण उसकी बुद्धि मंद हो गई थी। तीसरा लडका औरंगजेब निर्व्यसनी, चतुर, कपटी और महत्त्वाकांक्षी था। वह मुसलमानी धर्म का कट्टा अभिमानी था। वह दक्षिण के नवीन जीते हुए मुल्क का कारबार देखता था। सब से छोटा मुराद गुजरात के बंदोबस्त पर था। वह शूर होने पर भी भोला और मूर्ख था। औरंगजेब ने पहले उसे अपनी ओर मिला लिया; और उसे यह वचन दिया कि 'दिल्ली की बादशाही तुझे दिलाये देता हूं।' इस प्रकार उसकी और अपनी फौज एकत्र कर के औरंगजेब ने दिल्ली पर हल्ला किया। अन्त में कपट से बाप को कैद में डाल कर उसने सब भाइयों का नाश किया और दिल्ली का राज्य स्वयं ले लिया। औरंगजेब का जन्म सन् १६१८ में हुआ।

औरंगजेब का शासन अनेक कारणों से बहुत महत्त्व का हुआ है। वास्तव में देखा जाय तो औरंगजेब के समान चतुरता, उद्योग, विद्वत्ता, दीर्घायु इत्यादि बातों से युक्त और दूसरा बादशाह मुगल वंश में नहीं हुआ। उन गुणों का सरल उपयोग करके यदि उसने राज्य किया होता, तो उसकी बहुत तरक्की होती और वह बहुत काल कायम रहता। परन्तु औरंगजेब के स्वभाव में कपट भरा हुआ था। उसने अपनी सारी अक्ल इसी विचार में खर्च की कि, दूसरों को धोका किस प्रकार दें। उसका विश्वास कभी किसी पर नहीं जमा। उसके प्राणप्यारे जो अनेक लोग थे। उन पर भी उसने कभी विश्वास नहीं रखा। इस दुर्गुण के कारण सारे राज्य की दुर्दशा हो गई। वृथाभिमान में आकर उसने खुद अपनी, अपने वंश की और राज्य की सदा के लिए हानि कर ली। आसन्न-मरण होनेपर उसे अपनी भूल मालूम हुई; और अत्यन्त निराशा तथा कष्ट भोगने के बाद उसे अपना इहलोकवास समाप्त करना पडा।

अकबर बादशाह ने राज्य की जड मजबूत करने के लिए जिन उपायों की योजना की थी उन्हें औरंगजेब ने बदल डाला। अकबर ने हिंदू मुसलमानों की एकता करने का प्रयत्न किया। औरंगजेब, मुसलमानी धर्म का व्यर्थ अभिमान रख कर, हिंदु लोगों को जुल्म से मुसलमान बनाने लगा। जजिया

नाम का एक कर मुसलमानों ने सब परधर्मी लोगोंपर लगाया था। उसे अकबर ने हिंदुओं के लिए माफ कर दिया था; परन्तु औरंगजेब ने उसे फिर जारी किया; हिन्दुओं को नोकरी देना बंद किया; और राजपूत राजाओं का दिल दुखा कर उनके साथ युद्ध शुरू किया। अकबर ने सौरमान की वर्ष-गणना शुरू की थी। उसे बंद कर के औरंगजेब ने चांद्रमान की गणना शुरू की। यह सोच कर कि अपने बुरे कर्म लिखे जायँगे, उसने बादशाही तवारीख बंद कर दी। उसने हिंदुओं की पाठशालाएं, मठ, देवालय आदि मिट्टी में मिला कर वहां मशजिदें बनवाई। उसने हिंदुओं के त्यौहार और यात्राएं बंद कर दीं; योगियों और संन्यासियों को कहीं भी सहारा नहि रहा। ऐसी दशामें जब संन्यासियों ने दंगे मचाये तब उन्हें शान्त करने में असंख्य लोगों के प्राण गये। इससे औरंगजेब के शासन की नीति ध्यान में आजायगी।

२. **मीरजुम्लाः**—मीरजुम्ला नाम का एक बलवान् और धनवान् ईरानी सरदार गोलकुंडा में कुतुबशाह के पास नोकर था। उसमें और दाराशिकोह में अनबन होने के कारण वह प्रारंभही में अपनी फौजसहित औरंगजेब से मिल गया और फिर उसी की सहायता से औरंगजेब को दिल्ली की बादशाही प्राप्त हुई। शुजा को जीत कर बंगालप्रांत उसीने जीता। इस कार्रवाई से वह औरंग-जेब को बहुत ही खलने लगा। इसलिए वह किसी न किसी युक्ति से उसका नाश करने का मौका ताकने लगा। औरंगजेब बादशाह के कृतघ्न स्वभाव का यह उत्तम उदाहरण है। एक बार बादशाह ने मीरजुम्ला को आसामप्रांत जीतने के लिए भेजा। उस प्रांत की हवा खराब होने के कारण, वह अनुभवी वृद्ध, पराक्रमी सरदार सन् १६६१ में वहीं बीमार होकर मर गया।

३. **बुन्देलखण्ड का राजा छत्रसालः**—(सन् १६५०–१७२६)—बुंदे-लखंड प्रांत मुगलो की सत्ता में सदा के लिए नहीं आगया था। आजतक के बादशाहों ने अनेक युद्ध करके वहां के राजपूत राजाओं को अपने अधीन कर लिया था; पर मौका देखतेही वे स्वतन्त्र हो जाते थे। बुंदेलखण्ड के वीरसिंह देव नामक राजा ने ही सलीम के कहने से सन् १६०२ में अबुल फजल का खून करवाया था। औरंगजेब के जमाने में वीरसिंहदेव का चचेरा भाई चंपत-राय बुंदेलखण्ड प्रांत के महोबा शहर में राज्य करता था। राज्य प्राप्त करने-के लिए जब औरंगजेब अपने भाइयों से लड रहा था, तब चंपतराय ने उसे

अच्छी सहायता दी । पर पीछे से, मामूली स्वभाव के अनुसार बादशाह चंपतराय का नाश करने के लिए प्रवृत्त-हुआ । दोनों का युद्ध शुरू हुआ और सन् १६६४ में चंपतराय मारा गया । उसके छत्रसाल नाम का एक चौदह वर्ष का लडका था । उस अल्पवयी बालक ने बडी हिम्मत से बहुत वर्षों तक बादशहा के साथ बडी तेजी से युद्ध किया और अपने देश की स्वतन्त्रता कायम रखी ।

४. राजपूतों से युद्ध (सन् १६६९-१६८१)—यह युद्ध शुरू होने के पहले मूगल बादशाही की सत्ता पराकाष्ठा को पहुँच गयी थी । सन् १६६६ में औरंगजेब के अधिकार में जितना प्रदेश था, उतना पहले कभी न था । इतने पर ही औरंगजेब यदि तृप्त रहाता तो उसे दीनावस्था न प्राप्त होती । पर जब उसे मालूम हो गया कि अब मैं निर्भय हो गया तब उसने हिन्दुओं को कष्ट देने का अपना बहुत दिन का गुप्त उद्देश प्रकट किया उसमें से पहला काम राजपूत राजाओं को जीतना है । अकबर की डाली हुई पद्धति के अनुसार राजपुत राजा अपने अपने राज्य संभालकर बादशाही फौज में नौकरी करते थे । वास्तव में राज्य के आधारस्तम्भ वही थे । पहले पहल बादशाह ने यह सख्त हुक्म फरमाया कि वे राजपूत राजा जजियाकर दिया करे । यह हुक्म सुनते ही चारों ओर अस्वस्थता उत्पन्न हो गयी । यह कर ब्राह्मणों पर प्रतिवर्ष एक मोहर और गरीब लोगोंपर साढे तीन रुपये तक था ।

राजपूताने में उस समय तीन राजा प्रमुख थे । जयपुर का जयसिंह, जोधपुर का यशवंतसिंह और उदयपुर का राजसिंह । इनमें से राजसिंह बादशाही नौकरी में न था, बाकी दो सदा चढाई पर रहते थे । यशवंतसिंह सन् १६७८ में काबुल में मर गया, तब उसके लडके को राज्य नहीं दिया गया, इस लिए सब राजपूत शस्त्र बांध कर बादशाहपर उठे । बादशाह ने भी लडने की इतनी बडी तैयारी की मानो उसे सब पृथ्वी जीतनी थी । युद्ध का सब भार राजसिंह पर पडा । उसने चातुर्यपूर्ण पत्र लिखकर बादशाह की बहुत फजीहत की; पर व्यर्थ । राजपूत लोग सब देश उजाडते हुए चले । उधर औरंगजेब की कपट-विद्या अपना काम कर ही रही थी; पर उसमें वह स्वयं ही धोखा खा गया । राजपूतों ने औरंगजेब के लडके अकबर को उसके विरुद्ध करके अपनी ओर ... लिया और बादशाह को पदच्युत करके अकबर को तख्त पर बैठाने का

स्वांग रचा । परन्तु यह विचार खुल गया और अकबर भगा । वह दक्षिण में छत्रपति संभाजी भोसले के आश्रयमें जाकर रहने लगा । चार वर्ष राजपूतों से युद्ध कर के बादशाह बिलकुल घबडा गया । अन्त में औरंगजेब के मन में आय कि यह युद्ध एक बार खतम हो जाय तो अच्छा, इसलिए सन् १६८१ में सरदार दिलेरखां की मार्फत अपमानकारक शर्तें कबूल करके बादशाह औरंगजेब ने राजपूतों से सुलह कर ली । उस सुलह की शर्तें इस प्रकार थीः— १. बादशाह ने राजपूतों का जो मुल्क ले लिया है वह लौटा दे । २. जाजिया कर बन्द करके धर्म के विषय में बादशाह हाथ न डाले । ३. यशवंतसिंह का राज्य उसके लडके को मिलना चाहिए । ४. राजपूत पूर्ववत् बादशाही नोकरी करें ।

यहीं से मुगल बादशाही की उतरती कला प्रारम्भ हुई ।

५. दक्षिण की सवारी (सन् १६८३–१७०७):—राजपूताने में जो नाकामयाबी प्राप्त हुई उसकी पूर्ति करने के लिये बादशाह ने बडी भारी फौज लेकर, दक्षिण पर सवारी की और दक्षिण में ही उसने अपने अगले पच्चीस वर्ष बिताये । फिर उसके पैर राजधानी में नहीं लगे । अकबर के समय से, दक्षिण देश जीत कर मुगल बादशाहत में मिलाने के प्रयत्न जारी थे । औरंगजेब के समय में एक निराला ही प्रकार दक्षिण में शुरू हुआ. अहमदनगर का राज्य जब शाहजहां ने जीत लिया तब बुरहानपुर में मुगलों का सूबा नियत हुआ था । पर गोलकुंडा की कुतुबशाही और बीजापुर की आदिलशाही कायम थी । अंतःकलहाग्नि से और मराठों के त्रास से वे राज्य बहुत कुछ शिकस्त हो चुके थे । महाराष्ट्र के मूलनिवासी मराठे सह्याद्रि के पहाडी मुल्कमें स्वतन्त्रता से रहकर बहमनी राज्य की फौज में बहुत ही उन्नस्थिति को प्राप्त हो चुके थे । पर औरंगजेब के समय में उन मराठों में नवीन जोश पैदा हुआ । उनके पराक्रमी पुरुष शिवाजी ने मराठों का स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया । शिवाजी का देहान्त होने पर उसका लडका संभाजी राज्य करने लगा । वह बदचलन था । औरंगजेब के लडके अकबर को सम्भाजी नें आश्रय दिया था । इस कारण से, महाराष्ट्र देश जीत कर, वहां मुसल्मानी धर्म का विस्तार करने के हेतुसे औरंगजेब स्वयं बडी भारी फौज लेकर सन् १६८३ में दक्षिण प्रान्त पर चढ आया । उसकी सवारी क्या थी; एक बडा चलता फिरता हुआ शहरही था । सन्१६८६में

बीजापुर का राज्य जीत कर उसने अपनी सत्तामें मिलाया । उसी प्रकार सन् १६८७ में उसने गोलकुंडा का राज्य भी डुबाया । ये राज्य जीत लेने पर वह मराठों का पराभव करने में लगा । सम्भाजी को पकड कर उसने मार डाला, और उसकी राजधानी पर कब्जा करके दूसरे बहुतसे किलों पर भी अपना अधिकार जमा लिया । इस काम में झुल्फिकारखां गाजि–उद्दीन और उसका लडका चिंकिलीजखां आदि सरदार मुख्य थे । मराठे, महाराष्ट्रदेश छोड कर, कुछ दिनों के लिए, अपनी गद्दी जिंजी को ले गये और बराबर बादशाह से लड कर अन्त में जय प्राप्त कर लिया । उन्होंने अपने बहुत से किले बादशाह से लौटा लिये । औरंगजेब पच्चीस वर्ष तक अपनी छावनी बारंबार घुमाता था । बुरहानपुर, अहमदनगर, ब्रह्मपुरी इत्यादि जगहों में उसके कितने ही वर्ष व्यतीत हुए । अन्तकाल में उसे अत्यन्त यातनाएं हुईं । उसका लडका अकबर हिन्दुस्थान छोड कर ईरान चला गया और वहीं उसकी मृत्यु हुई । उसके बाकी तीन लडके मुअज्जम, अजीम और कामबक्ष आपस में लडकर राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे । बादशाह को यह दहशत हुई कि हमने जैसी दशा अपने बाप और भाइयों की की थी, वैसी ही दशा ये हमारे लडके हमारी करेंगे । इसी कारण, अन्तकाल में उसने अपने लडकों को पास नहीं आने दिया । उसके इहलोक के सारे मनोरथ निष्फल हुए । उसके हाथों से घोर पातक होने के कारण उसे परलोक की भी आशा नहीं रही । उसके मन में जब ये विचार आये कि हमारा राज्य अब शीघ्रही नष्ट होगा. और पिछली भूलें दुरुस्त करने के लिए अब समय नहीं है तब उसे महा कष्ट हुआ । अन्त में बुढापे के कारण वह मराठों के हम्लों से बहुत त्रस्त हो गया था । सन् १७०७ में यह अन्तिम बडा मुगल बादशाह अहमदनगर में मृत्यु को प्राप्त हुआ । उसकी कबर उसके बसाये हुए औरंगाबाद शहर के पास 'रोजा' नाम से प्रसिद्ध है ।

६. औरंगजेब की योग्यता:—यहां तक के वर्णन से औरंगजेब का कर्तृत्व सहज में मालूम हो जायगा । ऐतिहासिक दृष्टि से इस राज्य का महत्व बडा है ।

इतने बडे प्रबल और विस्तृत राज्य की शक्ति उसने हिन्दू धर्म का सत्यानाश करने के वृथा मनोरथमें खर्च की । जुल्म, दुराग्रह, अविश्वास और कपटी बर्तावसे उसने अपना राज्य अपने शासन के अन्त में शिकस्त कर दिया । औरंजेब निर्जी बर्ताव आदर्श योग्य था । उसकी रहनसहन बिलकुल सादी थी ।

अपने हाथ से लिखी हुई कुरान की प्रतियां बेंच कर उसने अपनी अन्त्यविधि के लिए धन एकत्र कर रखा था । उसके समान दृढ उद्योगी पुरुष मिलना कठिन है। राज्यकारबार की तुच्छ से भी तुच्छ बातें वह स्वयं करता। लोगों में एकता फेलाना अकबर की मुख्य नीति थी और लोगों में फूट डाल कर स्वयं सुरक्षित रहना औरंगजेब की नीति थी । औरंगजेब के शासन-काल में अंगरेज, फ्रेंच आदि व्यापारियों की सत्ता बहुत ही बढ गई। औरंगजेब के राज्य की आय तेंतालीस करोड रुपये थी । धर्म के विषय में छोड कर दूसरे विषयों में बादशाह जो न्याय करता वह निष्पक्षपात युक्त और उचित होता था। कर्मचारी लोग यदि अन्याय करते थे तो उन्हें कभी क्षमा न मिलती थी। औरंगजेब के बाद राज्य में फूटफाट होकर मुसलमानों के अनेक छोटे छोटे राज्य हो गये। बहुत करके उन राज्यों के संस्थापक औरंगजेब के ही अखाडे में तैयार हुए थे। वजीर असदखां और उसका लडका जुल्फिकारखां, अयोध्या के वजीर का मूल पुरुष सादतखां, हैदराबाद के निजाम का मूल पुरुष गाजिउद्दीन, और उसका प्रसिद्ध लडका चिंकिलीजखां उर्फ निजामुलमुल्क, बंगाल के सूबेदार का मूल पुरुष मुर्शीद कुलीखां, दक्षिण का प्रसिद्ध दाऊदखां पन्नी, और अनेक राजपूत तथा बुंदेले सरदार औरंगजेब की नौकरी में पहले उन्नति को प्राप्त हुए और उन्होंने पीछे से बडे बडे परिवर्तन किये।

पाठ नववाँ।

मुंगलवंश,—ऱ्हासकाल ।

सन् १७०७–१७४८ ईसवी।

१. बहादुरशाह । २. सिक्ख लोगों से झगडे ।
३. जहांदारशाह और फर्रुखशीयर । ४. मुहम्मदशाह और निजामुलमुल्क
५. नादिरशाह की सवारी । ६. राज्य के टुकडे ।

१. बहादुरशाह, (सन् १७०७–१७१२):—जिस समय औरंगजेब मरा उस समय उसका बडा लडका मुअज्जम काबुल में था । दूसरा लडका अजीम अहमदनगर में और तीसरा कामबख्श बीजापुर में था । बाप के पीछे

प्रत्येक ने राज्यपद प्राप्त करने का प्रयत्न शुरू किया । अजीम को फौज के मुखिया जुल्फिकारखां की मदद थी । वे दोनों बडे जमाव के साथ दिल्ली की ओर चले । यह सुनकर मुअज्जम भी काबुल से बडी तैयारी के साथ आया। उसे राजपूत राजाओं की मदद थी । आगरे के पास दोनों का मुकाबिला हुआ । उस लडाई में अजीम मारा गया और मुअज्जम बहादुरशाह के नाम से तख्तनशीन हुआ । इसके बाद उसने दाक्षिण पर चढाई की और हैदराबाद के पास लडाई मे कामबख्श को मार कर निर्भय हो गया । उसने मराठों के राजा शाहू की स्वतन्त्रता कबूल करके उसके साथ मित्रता कर ली और दाऊदखां पन्नी को दाक्षिण का सूबा नियत करके, जुल्फिकारखां को दरबार में रख लिया।

२. सिक्ख लोगों से झगडे:—सिक्ख लोगों से झगडे होना बहादुरशाह के शासन-काल की मुख्य बात है। अकबर के समय से लेकर, हिन्दू और मुसल्मानी धर्म में एकता करके दोनों के झगडे मिटाने का प्रयत्न बहुत लोग कर रहे थे । अनेक साधु-संत उपदेश करके दोनों में एकता स्थापित करने में लगे थे । इसी प्रकार का गुरु नानक नाम का एक साधु पंजाब में उत्पन्न हुआ (सन १४६९) । उसने इक नवीन पन्थ स्थापित करके लोगों को उपदेश किया । उसमें उसने हिन्दू और मुसल्मानी धर्म के उच्च तत्त्व चुन लिये । नानक के उपदेश का मुख्य उद्देश यह था कि धर्म के काम में आग्रह न होना चाहिए, मनोभाव से की हुई सेवा ईश्वर को पसन्द है; फिर वह चाहे जिसने की हो । उसके जो चेले बने, उन्हें सिक्ख अर्थात् शिष्य कहने लगे । धीरे धीरे यह पन्थ बढता गया । उसके धर्म ग्रन्थों को आदिग्रन्थ कहते हैं । वह पंजाबी भाषा में लिखा हुआ है । नानक के बाद इस पन्थ के दस गुरु हुए । पहले के तीन गुरुओं ने धर्मोपदेश का काम शान्त-वृत्ति से किया । फिर यह क्रम बदल गया । उन्हें ऐहिक बडप्पन की इच्छा उत्पन्न हुई । उनके शिष्य हथियारबन्द होकर फौजी बाना से रहने लगे । इस कारण उनसे दूसरे लोगों को और विशेषकर मुसल्मानों को तकलीफ होनें लगी । यह हाल औरंगजेब से नहीं सहा गया । नववें गुरु तेगबहादुर को वह दिल्ली पकड लाया और उसे कैद में डालकर मार डाला । इस कारण सब सिक्ख लोग चिढ गये ! तेगबहादुर का लडका गुरु गोविन्दसिंह सिक्खों का दसवां गुरु । वह बडा पराक्रमी हुआ । उसने सिक्खों में नवीन वीर्य-तेज उत्पन्न करके, धर्म में भी वैसे

ही फेरफार किये, (सन् १६७५) और अमृतसर में उनका फौजी प्रजासत्ताक राज्य स्थापित किया। उसने गोवध की मनाई करके हिन्दुओं की प्रीति सम्पादन की। औरंगजेब ने गुरु गोविन्द का पीछा करके उसे जङ्गल पहाडों में भटकया। उसके दो छोटे लडकों को दीवाल में चुनकर सरहिन्द में मरवा डाला। उसके बडे दो लडके पहले ही लडाई में मारे जा चुके थे। अन्त में सन १७०८ में गुरु गोविन्द का खून हुआ। इस असह्य जुल्म के कारण सिक्खों की पूर्ववृत्ति बिलकुल बदल गई। औरंगजेब को राज्य में पहले ही से अनेक अडचनें थीं, उनमें यह सिक्खों की अडचण और भी बढ गई। औरंगजेब ने उन्हें सताया, उन्हों ने उसका बदला लिया। बन्दा नामक गुरु गोविन्द का एक मुख्य शिष्य था; उसको मुखिया बना कर सिक्ख लोग आवेश के साथ, मुगलों के राज्य पर टूट पडे। उन्होंने मशाजिदे तोडीं। कुछ भी दया माया मन में न लाकर शहर के शहर खाली कर दिये। मुर्दे जमा करके पशुओं को खाने के लिए दिये। यह हाल खास कर सरहिन्द में हुआ। अन्त में बहादुरशाह ने उन पर चढाई की। परन्तु उनका बन्दोबस्त होने के पहलेही वह सन १७१२ में मर गया। इसके बाद सन १७१३ में फर्रुखशियर बादशाह ने सिक्खों पर बडी भारी फौज भेजी। उसने भयंकर रीति से सिक्ख लोगों को कतल किया। बन्दा और उसके साथियों को दिल्ली में लाकर, अत्यन्त क्रूरता के साथ उनका वध किया। इसके बाद तीस वर्ष तक सिक्ख लोग शान्त थे। उस अवधि में मुगल सत्ता का बहुत ह्रास हुआ। नादिरशाह और अहमदशाह दुर्रानी की सवारियां सिक्खों के लाभदायक हुईं। उनमें देशाभिमान उत्पन्न हुआ। उनकी नवीन राज्यव्यवस्था से अनेक छोटे छोटे राज्य उत्पन्न हुए। अन्त में रणजीतसिंह ने उन्हें एक छत्र के नीचे किया।

बहादुरशाह के विषय में विशेष कुछ कहने योग्य नहीं है। उसमें हिम्मत अथवा साहस कुछ विशेष न था। परन्तु वह विचारवान् और मनमिलाऊ था। राज्य पर बैठने के समय वह वृद्ध था। यदि वह अधिक दिन रहता तो मुगल बादशाही को उसने बहुत कुछ संभाल लिया होता।

६. जहांदारशाह (सन् १७१२–१९):—यह बहादुरशाह का बडा लडका जुल्फिकारखां की मदद से तख्त पर बैठा। वह अत्यन्त क्रूर और दुर्व्यसनी था, इस कारण उसने अपने पास के लोगों का दिल इतना दुखाया कि, उसका

भतीजा फर्रुखशियर बंगाल में गदर करके दिल्ली पर चढ आया और जहांदार-शाह तथा जुल्फिकारखां का खून करके तख्त पर बैठ गया ।

३. फर्रुखशियर, (सन् १७१४–१७१९):—विहार प्रांत के सूबेदार सैय्यद हुसेनअली और इलाहाबाद के सूबेदार सैय्यद अब्दुल्ला की मदद से फर्रुख-शियर को बादशाहत मिली थी । वे दोनों सगे भाई थे । उसने अब्दुल्ला को अपना वजीर नियत करके हुसेन को सेनापति बनाया । यह बादशाहत 'सैय्यद बंधुओं की कार्रवाइयां' के नाम से प्रसिद्ध है । कुछ दिन बाद बादशाह को उनका अधिकार दुस्सह हो गया और वह उनके नाश करने का प्रयत्न करने लगा । इतने ही में राजपूत राजा एकचित्त होकर मुगलों की सत्ता से एकदम स्वतन्त्र हो गये । इस बादशाह ने ईस्ट इंडिया कम्पनी को बंगाल में बहुत सा मुल्क दिया । अन्त में सैय्यदों से बादशाह की बहुत ही अनबन हो गई । परन्तु उनके नाश के लिए जो जो उपाय बादशाह ने किये वे सब उसी के विरुद्ध हुए । हुसेनअली को उसने दक्षिण की सुबेदारी पर भेजा । उधर हुसेन ने मराठों से दोस्ती करके उनकी फौज लेकर दिल्ली पर चढ आया । उन दोनों सैय्यदों ने बादशाह को पदच्युत करके जान से मार डाला । उसके बाद सैय्यदों ने तुरन्त ही दो व्यक्तियों को तख्त पर बैठाया । सैयदों के इन कृत्यों से उन्हें 'किंग मेकर्स' अर्थात् 'राजा बनानेवाले' कहते हैं । अन्त में सन् १७१९ में मुहम्मदशाह नाम का एक राजपुत्र सैय्यदों ने गद्दी पर बैठाया ।

४. मुहम्मदशाह (सन् १७१९–१७४८):—मुहम्मदशाह ने शीघ्रही बडी युक्ति से सैय्यदों का पराभव किया और वे दोनों मृत्युमुख में पडे । मुहम्मद में कर्तृत्व-शक्ति न थी । राजकारबार में उसने बहुत ध्यान नहीं दिया । वह ऐश आराम में गर्क रहता । मुगल बादशाही के टुकडे उसके समय में होने लगे । दक्षिण हैदराबाद में निजामुल्मुल्क ने स्वतन्त्र राज्य स्थापन किया । निजा-मुल्मुल्क औरंगजेब के अखाडे का था । उसका असली नाम कमरुद्दीनखां था । औरंगजेब ने उसे चिकिलीजखां की पदवी दी । जुल्फिकारखां की लड़ाई में उसने सैय्यदों को मदद दी, इस लिए उसे असोफजा और निजामुल्मुल्क के खिताब मिले । अन्त के नाम से ही वह इतिहास में प्रसिद्ध है । मुगल बाद-शाही के डूबते समय इसके समान धूर्त, चतुर और कारबारी राजनी-तिज्ञ कोई न था । दिल्ली का राज्य कायम रखने के लिये उसने बहुत

सा प्रयत्न किया; पर जब उसे विश्वास हो गया कि मुहम्मदशाह में पानी नहीं है और बादशाही अब नहीं बच सकती, तब वह यह सोचकर दक्षिण और गुजरात की सूबेदारी पर चला आया कि यदि हो सके तो अपना ही कल्याण कर लेना चाहिए । बादशाह उसका नाश करना चाहता था; पर उसका वह विचार नहीं चला और निजाम ने सन् १७२३ से हैदराबाद में स्वतन्त्र कारबार शुरू कर दिया । उसका विचार था कि मालवा और गुजरात प्रांत भी अपने राज्य में मिला लें; पर उसका यह विचार सिद्ध नहीं हुआ । मराठे निजाम के लिए जबरदस्त शत्रु उत्पन्न हुए । उस धूर्त पुरुष ने ताड लिये कि मराठे सारे हिंदुस्थान देश का आक्रमण करनेवाले हैं और उसी समय से वह उनका बंदोबस्त करने के उद्योग में लगा । इस कारण निजाम और मराठों में बडा झगडा उपस्थित हुआ । यह झगडा करीब सौ वर्ष तक जारी था । उस झगडे की हकीकत मराठों के भाग में दी है । गुजरात, मालवा, बरार आदि प्रदेशों को जीत कर मराठे दिल्ली पर चढाई करने लगे । बादशाह उन लोगों को रोक न सका; इस लिये उनकी शर्तें कबूल करके उनको शान्त करने के सिवा अन्य कोई मार्ग ही न था ।

५. नादिरशाह की सवारी, (सन् १७३८):—जब आपदाएं घेरती है तब चारों ओरसे एकदम आती हैं । मुहम्मदशाह दिल्ली में जी बचाये बैठा था, इतने ही में राजधानी पर बिजली टूट पडने के समान जबरदस्त आघात हुआ । ईरान देश में नादिरशाह नाम का एक पराक्रमी सुन्नीशाह राज्य करता था । उसने स्वपराक्रम से अपने राज्य की सीमा हिंदुस्थान में मिला ली । इसके बाद सन् १७३८ में कुछ न कुछ झगडा निकालकर उसने बडी भारी फौज लेकर दिल्लीपर चढाई की; और बादशाह का पराभव करके उसे कैद किया, और स्वयं राजमहल में रहा । जब उसने देखा कि दिल्ली के लोग हमको नहीं चाहते तब उसने अपनी फौज को शहर के लूटने का हुक्म दिया। उस समय शहर पर भयंकर अनर्थ टूट पडे । मुर्दों के ढेरों और रक्त के नालों से सब रास्ते भर गये । तीस हजार से भी अधिक मनुष्य मार डाले गये । मुहम्मदशाह हाथ जोड कर और आंखों में आंसू लाकर नादिरशाह के सामने गया और कतल बंद करने के लिए विनती की । तब नादिरशाह ने यह कह कर कतल बंद कर दी कि—“ हिंदुस्थान के बादशाह की मँगनी विफल न होगी ।” कुल

अट्ठावन दिन तक नादिरशाह दिल्ली में रहा। बादशाह से लेकर छोटे से झोंपडीवाले तक, कोई भी, उसके पंजे से नहीं बचा। इस लूट का अनुमान नव कोटि से ३० कोटि तक किया जाता है। मयूरासन और कोहनूर हीरा, जो मुगल बादशाही के वैभव के चिन्ह थे, नादिरशाह ईरान को ले गया। ईरान में लौट जाने पर सन् १७४७ में उसका खून हुआ।

६. राज्य के टुकडेः—इस प्रलय से मुगल बादशाही का सिर ऊपर नहीं उठा। सिंधु नदी के पश्चिम ओर का सारा मुल्क नादिरशाह ने ले लिया। रजपूत राजा लोग तो पहले ही स्वतन्त्र हो गये थे। पंजाब प्रांत सिक्खों ने ले लिया। बंगाल प्रांत का कारबार, सन् १७०२ से १७२६ तक, मुर्शिदकुलीखां नाम के सरदार ने बडी होशियारी के साथ किया। उसके बाद उसके दामाद शुजाखां ने सन् १७३९ तक काम किया। तत्पश्चात् उस प्रान्त पर मुहम्मदशाह ने अलीवर्दीखां नामक सरदार को नियत किया। यह अलीवर्दीखां आगे चलकर, अँगरेजों के सम्बन्ध में प्रसिद्ध हुआ। उसने बंगाल का काम सन् १७५६ तक स्वतन्त्रता से ही किया, उसके पीछे बंगाल की सूबेदारी सिराजुद्दौला के हाथ में गई। उसका हाल अँगरेजों के भागमें आवेगा।

बंगाल प्रान्त की तरह अवध प्रान्त भी स्वतन्त्र हो गया। अवध की सूबेदारी शहाजतखां नामक सर्दार के पास थी। सन् १७३९ में उसके मरने पर उसका लडका सफदरजंग अवध का सूबेदार हुआ। उसने और उसके वंश के कुछ पुरुषों ने दिल्ली की वजीरी का काम किया था, इस कारण अवध के सूबेदारों को कागज-पत्रों में वजीर की संज्ञा रहती थी। सन् १७५४ में सफदरजंग का देहान्त होने पर, उसका लडका शुजाउद्दौला सुबेदार हुआ। तब से अवध का राज्य बिलकुल स्वतन्त्र हो गया।

सारांश, मुसलमानी राज्य का यह क्रम सदा से चला आता था कि पराक्रमी पुरुष राज्य कमावे और फिर, कुछ काल बाद, उसके हिस्से हो जाँय; वही क्रम मुगल बादशाही में भी जारी रहा और उसके जो अनेक टुकडे हुए वहीं फिर अँगरेजी राज्य के नीचे एकत्र हुए हैं। मुहम्मदशाह सन १७४८ में मर गया।

पाठ दसवाँ।

मुगल राज्य का अन्त।

सन् १७४८–सन् १८०३ ईसवी।

१. अहमदशाह और दूसरा आलमगीर।

२. शाहआलम, (सन् १७६१–१८०३)। ३. शेष मुगल घराना।

४. मुगलों के समय की सामान्य स्थिति। ५. राज्य नष्ट होने के कारण।

१. अहमदशाह, (सन् १७४८–५४):—मुहम्मदशाह के मरने पर उसका लडका अहमदशाह गद्दी पर बैठा। चारों ओर शत्रु पैदा हो जाने पर भी वह ऐश–आराम में ही निमग्न रहा, इसी लिये उसका नाश हुआ। उसके जमाने में अफगानिस्तान के बादशाह अहमदशाह दुर्रानी ने हिन्दुस्थान पर दो चढाइयां कीं। यह अहमदशाह पहले नादिरशाह के पास नौकर था। नादिर-शाह के मरने पर उसने अफगानिस्तान में स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। उसने सन् १७४८ में हिंदुस्थान पर पहली सवारी की। उसमें अह-मदशाह ने सरहिन्द में उसका पराजय किया। उसने सन् १७५१ में फिर पंजाब प्रान्त पर धावा किया। तब लाहोर और मुलतान ये दो परगने देकर बादशाह ने उसे लौटा दिया। इसके बाद सफदरजंग और निजामुल्मुल्क के ज्ञाती गाजिउद्दीन में झगडे लगे। उन्हींके सम्बन्ध में गाजिउद्दीन ने सन् १७५४ में बादशाह का खून किया और एक शाहजादे को आलमगीर के नाम से तख्तपर बैठा कर स्वयं कारबार देखने लगा।

यह बादशाह **दूसरा आलमगीर** के नाम से प्रसिद्ध है। उसके हाथ में रत्ती भर भी सत्ता न थी। सारा कारबार गाजिउद्दीन, स्वतन्त्रता से करता था। इसी कारण दोनों में शीघ्र ही बिगाड हो गया। गाजीउद्दीन, को मराठों की सहायता रहती थी। वे दिल्ली में डेरा डाले बैठे थे। इतना ही नहीं किन्तु पर्याय से गाजिउद्दीन के नाम से बादशाहत का सब कारबार मराठे ही करते थे। धीरे धीरे बादशाही पद वे स्वयं ही लेना चाहते थे। ऐसी दशा में दिल्ली में दो पक्ष हो गये। एक गाजिउद्दीन और मराठों का; और दूसरा रुहेला अहमदशाह दुर्रानी तथा दूसरे मुसल्मानों का। पंजाब प्रान्त पर दुर्रानी ने सन्

१७५७ में चढाई की । रुहेला अफगान सरदार नजीबखां बादशाही में प्रमुख था। वह भीतर भीतर दुर्रानी से मिला हुआ था; परन्तु बहार से वजीर की ओर रहता था। दुर्रानी ने चढाई करके दिल्ली और मथुरा शहर लूट लिये और हजारों लोगों को कत्तल किया । वह दिल्ली का कारबार नजीबखां को सौंप कर और पंजाब प्रान्त पर अपने लडके तैमूरशाह को रख कर लौट गया। दिल्ली का तख्त एक प्रकार से उसने छीन ही लिया था। इस कारण दुर्रानी से बदला ले कर दिल्ली पर कब्जा करना मराठों को आवश्यक जान पडा। अफगानों का शासन न चाहनेवाले गाजिउद्दीन के समान मुसल्मान सरदार मराठों में मिल गये । नजीबखां और अन्य मुसल्मान दुर्रानी में मिल गये। मराठों ने पंजाब प्रान्त पर फिर कब्जा कर लिया । इस कारण दुर्रानी ने सन् १७५९ में फिर हिन्दुस्थान पर धावा किया। उस समय पानीपत के मैदान में दुर्रानी और मराठों में भयंकर युद्ध हुआ (सन् १७६१) । उसे पानीपत की तीसरी लढाई कहते हैं। इसी लढाई की धूमधाम में आलमगीर का खून हुआ।

२. शाहआलम, (सन् १७६१-१८०३ ईसवी):—जिन दिनों दिल्ली में उपर्युक्त धूमधाम मची हुई थी, उन्हीं दिनों आलमगीर का एक लडका शाहजादा अलीगोहर बंगाल प्रान्त में भग गया था, और वहां अँगरेजों के आश्रय में रहने लगा था । बाप के मरने का हाल सुन कर वह वहीं शाहआलम के नाम से गद्दी पर बैठ गया । वह बंगाल और अवध प्रान्तों में रहता था । अँगरेज; अवध का नबाब और मराठे ये तीनों उसे अपने अपने कब्जे में लाने को यत्न कर रहे थे। पर वह यह आग्रह करता था कि जो मुझे दिल्ली पहुंचा देगा उसीके आश्रय में मैं रहूंगा। अन्त में मराठों की मदद से वह सन् १७७० में दिल्ली आया । उस समय कुल राज्य में अनेक घटनाएं हुई । रुहेलों का महत्व बहुत बढा था। रुहेले अफगानिस्थान के मूल निवासी हैं। बाबर बादशाह को उन्होंने मदद दी थी; इस लिए उसने गंगा के पूर्व ओर हिमालय से मिला हुआ मुल्क उनको अलग कर दिया था; वह प्रदेश रुहेलखण्ड नाम से अब भी प्रसिद्ध है। ये लोग बादशाही फौज में नौकरी कर लेते थे। उन्हीं में से नजीबखां नामक सर्दार इधर २० वर्ष से दिल्ली की कारवाइयों में प्रमुख था । अहमदशाह दुर्रानी को हिन्दुस्थान में बुला कर मराठों की बढती

 शक्ति को रोकना वह अपना कर्तव्य समझता था । उसने वह

अपना कर्तव्य अधिकांश में पूरा भी कर लिया। सन् १७७० में उसके मरने पर उसका लडका जाबिताखां बादशाही कारबार देखने लगा। जाबिता का लडका गुलाम कादिर बादशाह से बिगड उठा और उस पुरातन पवित्र राजधानी में उसने भयंकर अनुचित कृत्य किये। उसने बादशाह और उसके कुटुम्ब के स्त्री बच्चों तक सब मनुष्यों को लातों और चाबुकों से बेदम करके मारा और उस दुष्ट तथा क्रूर पुरुष ने वृद्ध और गरीब बादशाह की आंखें निकाल लीं, तथा उसके सिंहासनकी अप्रतिष्ठा की। अंत में बादशाह ने मराठों के शूर सरदार महादजी सेंधिया की मदद लेकर उस गुलाम का क्रूरता के साथ वध किया। उस समय से बादशाह मराठों के कब्जे में रहा। सन् १८०३ में मराठों और अँगरेजों में युद्ध हुआ। दिल्ली शहर मराठों से अंगरेजों ने ले लिया, तब वह वृद्ध और अभागी बादशाह अँगरेजों के अधिकार में गया। अँगरेजों ने बादशाह को अलग पेंशन नियत कर दी और उसका मुल्क अपने अधिकार में कर लिया। इस प्रकार मुगल बादशाही का अन्त हुआ। शाहआलम सन १८०६ में ९२ वर्षों का होकर मर गया। वह सज्जन और पापभीरु था।

३. **शेष मुगल घराना**:—शाहआलम का लडका अकबर अँगरेजों से पेंशन लेकर 'बादशाह' नाम से दिल्ली में रहता था। सन १८३७ में उसके मरने पर उसका लडका मुहम्मद बहादुरशाह पेंशन पाता था। वह अपने लडकों के साथ सन १८५७ में, अँगरेजों के विरुद्ध, बलवे में शामिल हुआ, इस लिए अँगरेजों ने दिल्ली शहर पर अधिकार करके, बादशाह के लडके और नातियों को मरवा डाला और बादशाह को ब्रह्मा के मुल्क में काले पानी पर भेज दिया। इस प्रकार मुगल घराने का अन्त हुआ।

४ **मुगलों के समय की सामान्य स्थिती**:—(१) सांपत्तिकः-मुगलों के जमाने में अनेक पश्चिमी प्रवासी हिन्दुस्थान में आये। यद्यपि उनके लेख एकदेशीय हैं; तथापि उनसे बहुत सा हाल मालूम होता है। सब प्रकार के अनाज, कपास, नील, ऊन, रेशम, आदि उस समय के व्यापार के मुख्य पदार्थ हैं। कपास, रेशम और ऊन से उत्तम प्रकार के वस्त्र यहां तैयार होते थे। धन धान्य की विपुलता होने के कारण सारी आवश्यकताएं यहां की यहीं दूर हो जातीं; परदेशी व्यापारी नकद पैसा दे कर यहां का माल मोल ले जाते। हिन्दुस्थान का पैसा बाहर ले जाना बडा भारी अपराध समझा जाता।

टेरी, डिलावेल, टैवर्नियर, थिवेनॉट, फ्रायर, हैमिल्टन आदि प्रवासियों ने लिखा है कि,–' उस समय पश्चिमी देशों की अपेक्षा हिन्दुस्थान की दशा बहुत अच्छी थी। ' टेरी कहता है कि, हिंदुस्थान के नौकर अत्यन्त ईमानदार रह कर सिर्फ ढाई रुपये मासिक तनखाह में सन्तुष्ट रहते थे। मुगलों की सत्ता बहुत विस्तृत होने के कारण, राज्य में बहुत बेइन्तिजामी रहती। गलफांस, शिरच्छेद, हाथी के पैरतले दबाना, सूली पर चढाना, हिंस्र पशुओं को दे देना इत्यादि प्राणदण्ड की रीतियां जारी थीं। तथापि, सारांश में, राज्य का बन्दोबस्त अच्छा था; टैवर्नियर कहता है–' हिन्दुस्थान का प्रवास जितना सुभीते का और सुलभ है उतना यूरप में फ्रांस अथवा इटली देश का नहीं है। '

मुगलों की आय खास कर जमीन और कर की थी। अतिवृष्टि अथवा अनावृष्टि के योग से जब कभी फसल नष्ट हो जाती थी तब किसानों को सब छूट मिलती थी। इसके सिवाय बादशाह के मामूली बहुत से हक थे। जब कोई जमीदार अथवा जागीरदार मरता तब उसके वारिस यदि मिलकियत रखना चाहते तो उन्हें सरकार में नजराना देना पडता। इसके सिवाय बादशाह से भेट करनेवालों को भी नजराना देना पडता। इससे भी बहुत आय होती थी।

(२) ग्रंथसंग्रह—संस्कृत तथा दूसरी भाषाओं में व्याकरण, अलंकार वेदान्त, धर्मशास्त्र आदि विषयों पर उस समय बहुत से ग्रंथ निर्माण हुए। नैषधकार कवि श्रीहर्ष, प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ, गंगेश आदि नैयायिक, जगन्नाथ पंडितराज, कुवलयानन्दकार अप्पय्या दीक्षित, काव्यप्रकाशकर्ता मम्मट, गीतगोविन्दकर्ता जयदेव तथा और भी बहुत से संस्कृत कवि मुसल्मानी जमाने में हुए। यद्यपि ये पण्डित उत्पन्न हुए तथापि वह काल संस्कृत भाषा का गिरता हुआ ही समय है। पहले की प्राकृत भाषाओं का प्रचार नष्ट हुआ और उनकी जगह में मराठी, बंगाली, हिंदी आदि वर्तमान भाषाएं सन् ११०० से बनने लगीं।

मुसल्मान ग्रंथकारों को अच्छा उत्तेजन मिलता था। उनके भी बहुत से ग्रंथ बने। पहले की असल मुसलमानी भाषाएं तीन थीं, अरबी, फारसी और तुर्की। हिंदुस्थान में आये हुए बहुत से मुसल्मान तुर्की भाषा बोलते थे। यहां आने पर जब हिंदुस्थानी भाषाओं से उनका संबंध हुवा तब ' उर्दू ' अर्थात् तुर्की शब्द ' लश्कर ' से मुसलमानों की लश्कर (छावनी) की नवीन भाषा

का प्रचार हुआ। उसीको उर्दू कहते हैं। वही राजकर्ताओं की भाषा थी। सरकारी काम इसी भाषा में होते रहते। अँगरेजी शब्द होर्ड (Horde) अर्थात् फौज का जमाव 'उर्दू' शब्द का ही अपभ्रंश है। हिंदू लोगों ने भी उर्दू भाषा में ग्रंथ लिखे हैं।

(३) **लोकोपयोगी कामः**—१ डाँक का सुभीता था, इसके लिए डाँकवाले और सवार रखे गये थे। २ सूरत, मछलीपट्टन आदि व्यापार के बडे बडे बंदर थे। ३ सारे राज्य में बडे बडे मुख्य रास्ते थे, उन पर गाडियों का चलना जारी रहता था। ४ रास्ते में धर्मशाला, कुआं, तालाब और कितने ही स्थानों में अन्नक्षेत्र थे। मुख्य रास्ते इस प्रकार थेः—१ काबुल, लाहोर, आगरा, इलाहाबाद, ढाका; २ आगरा, अहमदाबाद, सूरत; ३ आगरा, बुरहानपुर, गोलकुंडा, मछलीपट्टन; ४ सूरत, बुरहानपुर, इत्यादि।

(४) **सामाजिक बातेंः**—१ सती जाने के समारम्भ बहुत जारी होते रहते। २ बडे लोगों की इमारतें आलीशान और चौकदार होतीं तथा उन पर सुन्दर नक्काशी का काम किया रहता। ३ विशेष कर्तृत्व कर दिखानेवालों को सर्कार से बहुमान पूर्ण पदवी देने की चाल थी। ४ कलाकौशल्य की उन्नति थी। उसके नमूने यूरोपियन लोग स्वदेश को ले जाते। ५ देश में विपुल सम्पत्ति थी। ६ घोडों पर से 'पोलो, नाम का जो खेल खेला जाता है वह मूल का मुसल्मानी है और उसे बादशाहों के समय में स्त्रियां जनानखाने के अहाते में खेलती रहतीं।

(५) **मुगल बादशाही के नाश के कारणः**—१ औरंगजेब की जुल्मी राज्य-व्यवस्था और परधर्म को सताना। २ वारिस का निर्बन्ध न होने के कारण पैदा हुए गृह-कलह। ३ नादिरशाह, अहमदशाह दुर्रानी आदि परदेशी शत्रुओं की चढाइयां। ४ मुल्क जीतने के लिए मराठों, सिक्खों, रुहेलों, जाटों आदि के लिये हुए प्रयत्न। ५ दक्षिण के मुसल्मानी राज्य का मुगलों द्वारा किया हुआ अन्त। ६ औरंगजेब के बाद राजकर्त्ताओं की दुर्बलता।

भाग तीसरा।

मराठी रियासत।

सन् १६६४ ई० से सन १८१८ ईसवी तक।

पाठ पहला।

स्वराज्य-स्थापना की तैयारी।

१. महाराष्ट्र का पूर्व इतिहास। २. बहमनी राज्य की अन्तःस्थिति। ३. मराठों के उदय के कारण।

१. महाराष्ट्र का पूर्व इतिहासः—महाराष्ट्र का सिलसिलेवार प्राचीन इतिहास अब तक उपलब्ध नहीं। प्राचीन काल के ताम्रपट, शिलालेख, सिक्के आदि साधनों से कितने ही विद्वानों ने प्राचीन राजवंशों का कुछ हाल प्रसिद्ध किया है। उससे महाराष्ट्र की पूर्व स्थिति थोडी बहुत समझ पडती है। महाराष्ट्र देश को पहले दक्षिणापथ और दक्खन कहते थे। दक्खन शब्द दक्षिण को अपभ्रंश है। नर्मदा के दक्षिण के सारे प्रदेश के लिए इस शब्द का उपयोग होता है। परन्तु तापी और तुंगभद्रा के बीच के प्रदेश को महाराष्ट्र कहते हैं। ईसा के अडाई सो वर्ष पहले इस प्रदेश में राष्ट्रिक किंवा रट्ठे नाम के लोग रहते थे। वे आगे प्रबल होने पर, अपने को महाराष्ट्रिक अथवा महारट्ठे कहने लगे। यह राष्ट्रिक शब्द का अपभ्रंश है। उनके नाम से इस प्रदेश का नाम भी महाराष्ट्र पडा। लोनावली के पास 'भाजा' और 'कार्ला' में जो गुफाएं हैं उनके लेखों में 'महारट्ठा' शब्द का उपयोग किया गया है।

ईसा के ७३ वर्ष पहले से सन् २१८ ईसवी तक इस प्रदेश पर सातवाहन उर्फ 'शालिवाहन' नाम के राजाओं का राज्य था। तथापि बीच में दस बीस वर्ष 'शक' नाम के यवन राजा यहां राज्य करते थे। उन्होंने अपनी कालगणना शुरू की। वही शालिवाहनों ने आगे ग्रहण की, इस कारण 'शालिवाहन शक' कहलाया। शक पराजित होकर चले गये, तथापि उनकी वर्ष-गणना कायम

रही। शालिवाहनों के समय में महाराष्ट्र में बौद्ध धर्म जारी था। उस समय के राजा, व्यापारी और दूसरे लोग बौद्ध धर्मानुयायी लोगों के लिए अरण्य में गुहा आदि तैयार करते थे। उनमें भिक्षु, अर्थात् भिक्षा मांगनेवाले साधू वसांत में आकर रहते थे। बौद्धों की तरह ब्राह्मणों को भी दान दिया जाता था। परदेशों के साथ बडा व्यापार जारी था। भडोच व्यापार का बडा बन्दर था। शालिवाहनों की राजधानी पैठन शहर बहुत तरक्की पर था। लोगों में स्वस्थता थी और वे सधन थे।

यह निश्चित नहीं कि सन २१८ से ६०० तक कौन राजा हुए। इसके बाद सन ६०० ईसवी से ७४७ तक महाराष्ट्र में चालुक्य वंश का राज्य था। कलादगी जिले के बादामी शहर में उनकी राजधानी थी। उसे वातापीपुर कहते थे। चालुक्यों के समय में बौद्ध धर्म की उतरती कला लग गई थी। जैन और वैदिक धर्मों का उत्कर्ष हो रहा था। चालुक्यों के बाद राष्ट्रकूट नाम के राजा हुए। असली मराठों के पहला वंश यही है। इसका राज्य सन् ७४८ से सन ९७३ तक था। उसकी राजधानी, मान्यखेट अर्थात् निजामशाही के मालखेड में थी। उसका वैभव भारी था। वेरूल की अप्रतिम गुफाएं उन्ही समय में बनी। राष्ट्रकूट वंश के राजाओं ने विद्या को अच्छा उत्तेजन दिया।

सन् ९७३ से सन् ११८९ तक फिर चालुक्य वंश की सत्ता जारी हुई। कल्याण उसकी राजधानी थी 'मिताक्षरा' का कर्ता विज्ञानेश्वर विक्रमादित्य चालुक्य का दीवान था। इसके बाद महाराष्ट्र में यादववंश की सत्ता प्रस्थापित हुई। यह करीब सन् १२९८ तक अर्थात् मुसल्मानी बादशाहत के शुरू होने तक, जारी रही। उस वंश की राजधानी देवगिरि; अर्थात् दौलताबाद शहर में थी। यादववंश के कितने ही राजा बडे पराक्रमी हो गये। सिंघण यादव नामक एक पराक्रमी राजा था। उसने सन् १२१० से लेकर सन् १२४७ तक राज्य किया। मालवा, गुजरात, दक्षिण-महाराष्ट्र आदि प्रान्त जीत कर उसने उन्हें अपने राज्य में मिला लिया। सितारा जिले में सिंगणापुर नामक गांव उसीका बसाया हुआ है। उसके दरबार में ज्योतिषी आदि बहुत थे। जिस समय सिंघण का नाती रामचंद्र उर्फ रामदेवराव देवगिरि में राज्य करता था, उस समय अलाउद्दीन ने दक्षिण पर चढाई की। उस लडाई में

रामदेवराव का पराभव हुआ और उसे दिल्ली के बादशाह की अधीनता स्वीकार करनी पडी। रामदेव के बाद उसका राज्य मुसलमानों ने ले लिया, (सन् १३१८)। हेमाद्रि नामक एक विद्वान् पुरुष रामदेवराव के पास था। उसे लोग हेमाडपंत कहते। हेमाडपंती मोडी लिपि* और हेमाडपंती इमारतें अबतक प्रसिद्ध हैं। 'चतुर्वर्ग चिन्तामणि' नामक संस्कृत का धार्मिक ग्रंथ उसीने बनाया। अन्य पंडितों को हेमाद्रि का बडा आश्रय रहता था। वोपदेव नाम का एक प्रसिद्ध व्याकरणकार हेमाद्रि के पास था। रामदेव के ही जमाने में प्रसिद्ध साधु ज्ञानेश्वर का जन्म हुआ। यादवों के समयमें मराठी भाषा का उदय होने लगा।

२. बहमनी राज्य की अन्तःस्थितिः—सन् १३१८ से लेकर सन् १३४७ तक महाराष्ट्र पर दिल्ली के सुलतानों की अमलदारी थी। सन् १३४७ में यहां बहमनी नामक एक स्वतन्त्र मुसल्मानी राज्य स्थापित हुआ। इस राज्य का विस्तार सारे महाराष्ट्र में था। दक्षिण में तुंगभद्रा नदी के किनारे वि यनगर में, उन्हीं दिनों, एक प्रबल हिन्दू राज्य की स्थापना हुई। इसके बाद े सौ वर्ष तक उपर्युक्त दो भिन्नधर्मी राज्यों में बराबर झगडे हो रहे थ। धीरे धीरे बहमनी राज्य की सीमा बढ गई और उसमें, नर्मदा से लेकर तुंगभद्रा तथा कोंकण तक का प्रदेश शामिल हो गया। उस समय बहमनी राज्य ऐश्वर्य और बल में दिल्ली के राज्य के समान किंबहुना उससे भी अधिक था। अन्त में उन सुलतानों नें जब अपने सूबेदारों को बडे बडे अधिकार दिये, तब वे स्वतन्त्र हो गये और जिस समय दिल्ली में बाबर ने मुगल बादशाहत कायम की उन्हीं दिनों बहमनी राज्य टूट गया और उसकी जगह पांच भिन्न भिन्न राज्य हो गये। बहमनी राज्य में हिन्दू और मुसल्मानों के बाहरी व्यवहारों तथा अनेक विषयों में सम्बंध था। विदेशियों को, यश और सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए, हिन्दुस्थान एक अच्छा स्थान हो गया था। तथापि यादवों के समय से, मराठा के जो असल घराने इधर थे वे थोडे बहुत जागृत थे। यद्यपि मुसल्मानों ने उन्हें पराभूत किया तथापि वे जी बचाये

---

* वह लिपि जिसमें प्राचीन समय में मराठी भाषा लिखी जाती थी और अब भी जारी है।

थे। आदिलशाही और निजामशाही की फौजों में वडे वडे मराठे सरदारों की ही अधिक भरती थी।

१. मराठों के उदय के कारणः—(१) यद्यपि मुसल्मानों ने हिन्दुओं को जीत लिया तथापि मुसल्मानों का असली बाना हिन्दुस्थान में कायम नहीं रहा। दक्षिण में तो वह बहुत ही कम हो गया। हिन्दू स्त्रियों से विवाह होने पर और हिन्दुओं से भ्रष्ट होने पर जो मुसल्मानों की संख्या बढी, उसमें असल मुसल्मानों का पानी न था। (२) महाराष्ट्र के समान औघड पहाडी मुल्क में मुसल्मानों का प्रवेश न हो सकता था। (३) ग्रामसंस्था के कारण प्रत्येक गांव अपनी अपनी सीमा में एक प्रकार से स्वतन्त्र रहता। वह स्वतन्त्रता राजकर्ताओं ने नष्ट नहीं की। (४) उत्तर—हिन्दुस्थान में जैसा मुसल्मानों का अमल जम गया वैसा महाराष्ट्र में नहीं जमा। फौज, व्यापार आदि अनेक बातों में मराठों के बिना मुसल्मानों का काम नहीं चल सकता था। अनेक मराठे सरदार और राजनीतिज्ञ मुसल्मानों के राज्य में उदय हुए। कम्बरसेन नामक ब्राह्मण राजनीतिज्ञ निजामशाही का दीवान था। उसी प्रकार मुरार जगदेव नाम का एक होशियार आदमी आदिलशाही में था। मदनपंत (मादराणा) और एकनाथपंत (आकन्ना) नाम के दो राजनीतिज्ञ पुरुष कुतुबशाही में थे। उसी प्रकार कदमराव, रामराव, जगदेवराव आदि मराठे सरदार फौज में थे। महाराष्ट्र में भी मराठों के बडे बडे घराने प्रमुसतों के साथ कारबार करते थे। जावली के मोरे, कोंकण के शिर्के, फलटन के निंबालकर, खटाव और नलवडी के देशमुख घाटगे, तथा घोरपडे, माने, डफळे, गुजर आदि घरानों के मराठे सरदारों की भरती मुसल्मानी फौज में बहुत थी। निज़ामशाही में लखूजी जाधवराव नाम का एक प्रभावशाली सरदार था। भोसलों का घराना भी उस समय के प्रमुख घरानों में से था। (५) इसके सिवा महाराष्ट्र के उदय का एक बहुत बडा कारण उस समय उपस्थित था। पीछे बतलाही चुके हैं कि दो चार सौ वर्ष हिन्दुस्थान में धर्म—जागृति की विलक्षण हलचल मच गई थी। चारों ओर साधु सन्तों का उदय होगया था; और वे लोगों को उपदेश करने लगे थे। मुकुन्दराज, ज्ञानदेव, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, रामदास आदि सन्त—मण्डली ने अपने पवित्र आचरण से और उपदेशसे महाराष्ट्र में स्वदेश, स्वभाषा और स्वधर्म के सम्बध में लोगों के मन में अतिशय अभि-

मान उत्पन्न किया । मुसल्मानों का आपस का कलह, उनकी राज्यविषयक अव्यवस्था, हिन्दुओं को सताने से उत्पन्न हुआ आवेश और सास्कर सन्त मंडली द्वारा, धर्म-सुधार के बल पर लोगों में उत्पन्न किया हुआ स्वाभिमान; इत्यादि कारणों से महाराष्ट्र के लोग स्वराज्य स्थापन के उद्योग में लगे; और शिवाजी के समान योग्य अगुआ उन्हें मिलतेही उनका काम पूर्ण होगया ।

पाठ दूसरा ।

मराठेशाही का उदय ।

शिवाजी का पूर्वचरित्र ।

सन १६२७, सन १६६२ ।

१. शहाजी भोसला । २. शिवाजी का बालपन ।
३. राज्यस्थापना की नींव । ४. बीजापुरवालों से पहला युद्ध ।

१. शहाजी भोसला, (सन् १५९४-१६६४):—भोसले क्षत्रिय हैं । सैंकडों वर्षों से वे सितारा की ओर हिंगणी, बेरडी, देउलगाँव आदि स्थानों की पटेली लेकर रहा करते थे । कालान्तर में उन्होंने दौलताबाद के पास येरूल गाव की पटेली प्राप्त की । इस कुल में सम्भाजी भोसले नाम का एक पुरुष था । उसका लडका बाबजी भोसले सन् १५३३ में पैदा हुआ । बाबजी के दो लडके थे; मालोजी (जन्म सन् १५५०) और विठोजी (जन्म सन् १५५३)। इन दोनों भाइयों ने निजामशाही के प्रमुख सरदार लखूजी जाधवराव के यहां नौकरी करली । मालोजी का विवाह फलटनवाले जगपालराव निंबालकर की बहिन दीपाबाई के साथ हुआ । उसके दो लडके हुए । बडा शहाजी, (जन्म सन् १५९४) और छोटा शरीफजी, (जन्म सन् १५९७)।

लखूजी जाधवराव की शिफारिस से निजामशाही दरबार में मालोजी की बढती होती गई । एक दिन मालोजी अपने लडके शहाजी को साथ लेकर, १५९५ के घर, रंगपंचमी के उत्सव पर गया था । जाधवराव के जिजाबाई

नाम की एक छोटी लडकी थी; उसे वह अपने साथ उत्सव में लाया था। वहां शहाजी और जिजाबाई परस्पर रंगगुलाल उडा कर खेलने लगे। यह देख-कर जाधवराव बोला,–'यह जुगलजोडी कैसी अच्छी शोभती है!' यह सुन-कर मालोजी ने उठ कर सब लोगों से निवेदन किया कि 'जाधवराव आज से हमारे संबंधी हुए।' हंसी में कही हुई बात की यहां तक नौबत पहुंचना जाधवराव को नहीं रुचा। कुछ भी हुआ; तथापि मालोजी उसका छोटासा नौकर ही तो था! उसका लडका जाधवराव का दामाद होना कैसे शोभा दे सकता है! इस कारण दोनों में बिगाड हो गया। बाद मालोजी ने अनेक उद्योग करके धन और जागीर प्राप्त की, और निजामशाह की मध्यस्थी से जाधवराव की लडकी जिजाबाई का विवाह शहाजी के साथ हो गया। विवाह बडे समारोह के साथ हुआ, (सन् १६०४)।

शहाजी देखने में बहुत सुन्दर और बुद्धिमान् था। बडा होने पर निजाम-शाही दरबार में उसका प्रभाव बहुत बढ गया। निजामशाही के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ मलिक–अम्बर के साथ रहकर शहाजी राज्य का कारबार करना सीख गया। मलिक–अम्बर के मरने पर राज्य का सारा कामकाज शहाजी को ही करना पडा। उसका यह उदय लखूजी जाधवराव को सहन नहीं हो सका। बाद को सन १६३० के करीब शाहजहां बादशाह ने अहमदनगर पर चढाई की, उस समय शहाजी ने पांचसात वर्ष बादशाही फौज से टक्कर मार कर निजामशाही की आयु थोडी बढाई। परन्तु जाधवराव आदि सरदार बादशाह में जा मिले, इस कारण शहाजी लाचार हो गया। अन्त में जब मुगलों ने सन १६३७ में अहमदनगर जीत लिया तब शहाजी अलग होगया। बाद को उसने बीजापुर की आदिलशाही में नौकरी करली। मुरारपंत, रणदुल्लाखां आणि बीजापुर के कारबारी शहाजी की कर्तृत्वशक्ति पहले ही से जानते थे; इस लिये उन्होंने शहाजी को बडी खुशी से बीजापुर में ले लिया। जाधवराव के झगडे के कारण शहाजी और जिजाबाई में बहुत नहीं बनी। उसके दो लडके हुए; बडा सम्भाजी (जन्म सन १६२३) और छोटा शिवाजी, (जन्म ता. १० एप्रिल, सन १६२७)। शहाजी ने फिर दूसरा विवाह किया। उस स्त्री का नाम तुकाबाई था। वह मोहिते की कन्या थी। इससे शहाजी के व्यंकोजी नाम का पुत्र हुआ। शहाजी के कर्तृत्व का पहला भाग यहीं समाप्त

हुआ । बाद को उसने कर्नाटक में नवीन राज्य प्राप्त किया । वह फिर उसके लडके व्यंकोजी के वंश में रहा । शहाजी को पूना और सूपा नाम के दो परगनों की जागीर, शिवनेरी तथा चाकन नाम के दो किले और उन किलों के अधीन जो प्रान्त था उसकी तहसीलदारी निजामशाही में ही मिली थी । वह बीजापुर के दरबार ने कायम रखी; उसका लडका शिवाजी अपनी माता जिजाबाई के साथ शिवनेरी किले में रहता था ।

२. शिवाजीका बालपनः—शिवाजी का जन्म पूना जिले में शिवनेरी किले में हुआ । उस समय चारों ओर धूमधाम मची हुई थी । माता का लाड प्यार उस पर विशेष था । उसने और शहाजी के कारकुन दादाजी कोंडदेव ने लडकपन में शिवाजीको शिक्षा दी । दोनों ने राजकीय परिवर्तन देखे थे । जिजाबाई ने अपने पूर्वजों के शौर्य और वैभव की बातें बतला कर उसके मन में बडे बडे साहस के काम करने का उत्साह उत्पन्न कर दिया । दादाजी ने रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों की कथाएं बतला कर उसका मन सुसंस्कृत किया । जीजाबाई ने उसे तत्कालीन देशदशा का अच्छा परिचय करा दिया । वह स्त्री स्वयं महा मानी और महत्वाकांक्षी थी । दूसरे के कब्जे में रहना उसे दुःसह जान पडता था । विपन्नावस्था में उसे स्वावलम्बनपूर्वक रहना पडा और यही गुण उसके लडके में उतर आया ।

दादाजी कोंडदेव ने पूना में महल बनवा कर वहीं शिवाजी के रहने का सुभीता कर दिया, उसने शिवाजी को जागीर का इन्तिजाम करना सिखलाया । जमीन की देखरेख, वसूल, हिसाब रखना, खेती को उत्तेजन देकर लोगों की स्थिति सुधारना, इत्यादि बातें, दादाजी के साथ गांव गांव घूमकर शीवाजी ने सीख लीं । उसी प्रकार घोडे पर बैठना, निशाना मारना, पटेबाजी आदि मर्दूमी के काम उसने शिवाजी को सिखलाये । दादाजी कोंडदेव ने परगने के बन्दोबस्त के लिए छोटीसी फौज रखी; भेडिया आदि दुष्ट जानवर मारकर खेती का उपद्रव कम किया और लगान की माफी देकर लोगों से खेत सुधरवाये । शिवाजी ने, आगे चलकर, जो राज्य-प्रबन्ध किया उसकी नींव इसी समय में उसके मन में जम गई थी । शिवाजी ज्यों ज्यों बडा होता गया त्यों त्यों वह साहस और मेहनत के काम करने लगा । गांव खेडों के अपनेही समान साथी इकट्ठे करके सख्त धूप और गर्मी में शिकार

करता; पहाडी मुल्क में फिरता; किले आदि के गुप्त मार्ग देखता; सधन और शूर पुरुषों की जांच करता और जगह जगह की दशा देखता था । सह्याद्रि के पूर्व–उतार पर के पहाडी मुल्क को मावल कहते हैं । उस प्रान्त के लोग जंगली जरूर थे; परन्तु अत्यन्त विश्वसनीय और अपने स्वामी के लिए प्राणार्पण करनें वाले थे । उन लोगों को शिवाजी ने अपने वश कर लिया । येसाजी कंक, तान्हाजी मालुसरे और बाजी फसलकर शिवाजी के प्राणप्रिय मित्र थे । इसी प्रकार दादाजी के नीचे के कितनेही कारकून कारिन्दे और आबाजी सोनदेव, रघुनाथ बल्लाल कोरडे, बालकृष्णपंत मुजूमदार और गोमाजी नाईक पानसंबल आदि जिजाबाई के मैहर के लोग सब शिवाजी को सहायता करने लगे । शिवाजी ने अपने विलक्षण साहस और कर्तृत्वशक्ति से उन लोगों पर अच्छा प्रभाव जमाया । सन् १६४७ के करीब दादाजी कोंडदेव के मरने पर जागीर का इन्तिजाम शिवाजी खुद करने लगा ।

३. राज्यस्थापना की नींवः—शिवाजी ने पहले पहल अपनी जागीर का बन्दोबस्त किया । आसपास के बलवाई किलेदारों को अपने कब्जे में करके चारों ओर के मराठे सरदारों को उस ने वश में कर लिया । (१) सन् १६४६ के करीब शिवाजी ने तोरणा किला लिया, जो पूने के नैर्ऋत्य ओर है। वहां उसे बहुतसा द्रव्य प्राप्त हुआ । (२) शीघ्रही शिवाजी ने मोरोपंत पिंगले की सहायता से रायगड नाम का किला बनवाया । (३) शहाजी की दूसरी स्त्री का भाई बाजी मोहिते सूपा में रहता था । वह शिवाजी की परवा न करता था । इस लिए एक दिन आधी रात के समय उस पर छापा डाल कर शिवाजी ने उसे कैद किया और शहाजी के पास भेज दिया । (४) चाकण के किलेदार फिरंगोजी नरसाला को वश में करके चाकण का किला लिया । (५) कोंढाणा किला एक मुसल्मान किलेदार के कब्जे में था, उसे जीत कर उसका नाम सिंहगड रखा । (६) पुरंदर का किला एक ब्राह्मण किलेदार के अधीन था; वहां झगडे मचे थे; शिवाजी ने वह किला प्राप्त करके झगडा तय किया । (७) कल्याण प्रान्त पर मौलाना अहमद नाम का सरदार राज्य करता था, उसे आबाजी सोनदेव के द्वारा पकड कर उक्त प्रान्त और सारा खजाना शिवाजी ने ले लिया । (८) कोंकण में पश्चिमी किनारे पर जंजीरा में सीदी जाति का बीजापूर का एक हाकिम जहाज पर मुखिया था । ये सीदी

अबिसिनिया प्रान्त के निवासी थे; इसी लिए उन्हें हबशी कहते थे। जलमार्ग से होनेवाले व्यापार पर देखरेख करने और मक्के के यात्रियों को चढाने उतारने का काम उन्हें सौंपा गया था। शिवाजी नें सीद्दीयों के मुल्क पर चढाई की और कोंकण के कई किले जीत लिये। इधर रायगड किला हस्तगत करके उसका पक्का बन्दोबस्त किया। शिवाजी ने अपनी मुख्य गद्दी वहीं मुकर्रर की। (९) कोंकण के समुद्री किनारे का बहुतसा मुल्क शिवाजी ने जीत लिया और राजापुर नामक बन्दर पर चढाई करके उसे भी अपने अधिकार में कर लिया। इस चढाई में बालाजी आवजी और उसके दो भाई शिवाजी के पास आ गये। बालाजी को शिवाजी ने अपना चिटनवीस बनाया। चिटनवीसी का काम अन्त तक इसी घराने में रहा। मराठी इतिहास की बहुतसी बखरें (प्राचीन ऐतिहासिक लेख) इसी चिटनविस घराने के पुरुषों की लिखी हुई हैं। बालाजी ने अपना काम बडे विश्वास से किया।

इस प्रकार कल्याण से लेकर राजापुर तक कोंकण और घाटमाथा का मुल्क शिवाजी ने हस्तगत किया। बडे बडे किले उसके अधिकार में आ गये, और चारों ओर उसकी धाक बैठ गई। द्रव्यसंचय हुआ; और फौज बढी। अच्छे अच्छे लायक हाकिम मुकर्रर करके उसने जीते हुए प्रदेश का इन्तिजाम किया। बडे बडे कर्तृत्ववान् पुरुष उसके यहां जमा हुए। 'आज्ञानुसार चलने वालों का पालन और बिगड कर चलने वालों का नाश करना' शिवाजी ने शुरू किया।

४. बीजापुरवालों से पहला युद्ध, (सन् १६५९-सन् १६६२):— ऊपर बतलाए हुए सब काम शिवाजी ने सन् १६४५ १६५२ तक की अवधी में किये। परन्तु इसी कारण से बीजापुर दरबार को उसपर क्रोध आया। दरबार ने समझा कि इन कामों में, भीतर भीतर शहाजी की सम्मति होगी। इस लिए दरबार ने बाजी घोरपडे नाम के सरदार को हुक्म देकर शहाजी को अपने यहां पकड मंगाया और उसे कैद कर दिया। (सन् १६४९)। यह हाल जब शिवाजी को मालूम हुआ तब वह जरा अडचन में पडा। अन्त में उसने एक उत्तम युक्ति भिडाई। उस समय औरंगजेब दक्षिण का कारबार देखता था। उसकी सहायता से शिवाजी ने शहाजी को छुडाया (सन् १६५३)। सितारा के पश्चिम ओर जावली में चन्द्रराव मोरे नाम का बीजापूर का एक

जागीरदार शिवाजी के साथ उपद्रव लगाये रहता था; उस पर छापा डालकर शिवाजी ने उसे मार डाला और जावली का प्रदेश हस्तगत करके उसका बन्दोबस्त करने के लिए प्रतापगढ नाम का एक मजबूत किला बनवाया। बाद को शिवाजी ने हिरडस के देशमुखों से रोहिडा नामक किला ले लिया। यह हाल देखकर बीजापुर के सुलतानअलि आदिलशाह ने अफजलखां नामक एक शूर और पराक्रमी सरदार को सन् १६५९ में शिवाजी पर चढाई करने को भेजा। चूंकि अफजलखां दस वर्ष से सह्याद्रि के पहाडी मुल्क का प्रबन्ध करता था; इस लिए उसे उधर का अच्छा ज्ञान था। वह फौज लेकर वाई शहर के पास आया। उस समय शिवाजी प्रतापगढ पर था। अफजलखां से मुकाबिला करने का सामर्थ्य शिवाजी में न था। इस लिए अपने वकील के द्वारा उसने खान से कहला भेजा कि 'आपसे मिल कर सुलह करने के लिए मैं तैयार हूं; भेट एकान्त में हो।' इसी के अनुसार प्रतापगढ के नीचे एक बडे मण्डप में दोनों की भेट हुई। भेटमें जब खान ने शिवाजी को पकडने का प्रयत्न किया तब शिवाजी ने अपने हाथ का बघनखा तडाक से खान के पेट में भोंक दिया। इस प्रकार उसका वध करके शिवाजी ने उसकी फौज को भी भगा दिया।

अफजलखां के समान पराक्रमी और प्रभावशाली सरदार के मारे जाने से बिजापुर दरबार की कमर टूट गई। शिवाजी का वैभव बडा और सब पर उसकी धाक बैठ गई। दूसरे वर्ष अफजलखां के लडके फजलखां ने और सीदी जौहर नामक सरदार ने शिवाजी को पन्हाले के किले पर घेर लिया। पर एक दिन रात में शिवाजी शत्रु का गोल फोड कर विशालगढ के किले पर चला गया। फजलखां ने उसका पीछा किया। विशालगढ की घाटी में फजलखां और शिवाजी के सर्दार बाजी देशपान्डे में बडी लडाई हो गयी। उसने फजलखां को आगे नहीं आने दिया। पर वैसा करने में वह शूर सरदार समरांगण ही में काम आया। सन् १६६१ में मुधोल के बाजी घोरपडे पर छापा डालकर शिवाजी ने उसका वध किया। बादको उसने वाडी के सावंत का भी पराभव किया। सन् १६६२ में जंजीरा के सीदी का पराभव हुआ। उसने शिवाजी के साथ सुलह करली। इस प्रकार बीजापूर की तरफ से लडनेवाले सारे सरदार पराभूत हुए। तब लाचार होकर बीजापुर के बादशाह ने शिवाजी से सुलाह करने के लिए शहाजी को भेजा। जब वह पूने में आया

तब पिता पुत्र की भेट बडे प्रेम से हुई। शहाजी ने अपने प्रिय पुत्र शिवाजी से यह कबूल करा लिया कि, जबतक मैं जीता हूं तबतक बीजापुर राज्य को तुम मत सताओ। इस प्रकार बात चीत करके शहाजी कर्नाटक को लौट गया। जंजीरा के सीदी के बन्दोबस्त के लिए शिवाजी ने दंडराजपुरी में एक जहाज तैयार कराया और उस पर दर्याखां तथा मायनाक भण्डारी नाम के दो सर्दारों को मुखिया नियत किया। इस युद्ध से शिवाजी को अनेक फायदे हुए, सब मराठे सरदार उस के अनुकूल हो गये और उसने अपने राज्य की स्थापना की।

पाठ तीसरा।

राज्य-स्थापना।

सन् १६६२ ई. से सन् १६८० ई. तक।

१. मुगलों से पहला युद्ध। २. शहाजी की मृत्यु और राज्य की स्थापना।
३. दिल्ली को प्रयाण। ४. बीजापुरवालों से दूसरा युद्ध.
५. राज्याभिषेक। ६. कर्नाटक पर चढाई और अन्त।

१. मुगलों से पहला युद्ध, (सन् १६६२-१६७२):—बीजापुरवालों से सुलह हो जाने पर सन् १६६२ में मोरोपंत पिंगले और नेताजी पालकर नाम के दो सर्दारों ने मुगलों के मुल्क पर चढाई कर के बहुत सा कर वसूल किया और किले भी ले लिये। यह हाल जब औरंगजेब को मालूम हुआ तब उसने शिवाजी का बन्दोबस्त करने के लिए शाइस्ताखां के पास सँदेशा भेजा। यह सरदार औरंगजेब का मामा और उसका अत्यन्त विश्वासपात्र था। वह दक्षिण के सूबे पर मुगलों की ओर से नियत था। शाइस्ताखां ने शिवाजी का चाकणें नाम का किला ले लिया और पूने में आकर शिवाजी के महल में रहने लगा। एक दिन रात में शिवाजी ने एकाएक उस पर छापा मारा और उसके लडके को मार डाला। शाइस्ताखां खिडकी से कूद कर भगा जाता था; इतनेही में शिवाजी ने तलवार से उसके हाथ की उंगलियां काट डालीं। यह सुन कर औरंगजेब ने यशवंतसिंह और अपने

लडके मुअज्जम को शिवाजी पर रवाना किया। सन् १६६४ ई. में शिवाजी ने मुगलों के धनाढ्य शहर सूरत को लूट लिया। तब औरंगजेब ने जयसिंह और दिलेरखां नामक सरदारों को शिवाजी पर रवाना किया। दिलेरखां ने पुरन्दर किले को और जयसिंह ने सिंहगढ को घेर लिया। पुरन्दर के युद्ध में शिवाजी का शूर सरदार मुरार बाजी काम आया। तब शिवाजी ने जयसिंह और दिलेरखां से सुलह की बातचीत शुरू की। वह उनको पसन्द पडी और निश्चय हुआ कि शिवाजी बादशाह से भेट करने के लिए दिल्ली जावे। इसी समय बादशाह ने शिवाजी को बीजापूर-राज्य में चौथाई और सरदेशमुखी के हक़ दिये। मालगुजारी के चौथे हिस्से को 'चौथाई' और दसवें हिस्से को 'सरदेशमुखी' कहते थे। इन्हीं हकों के आधार पर मराठों ने फिर अपना राज्य बढाया।

२. शहाजी की मृत्य और राज्य की स्थापना:—सन् १६६४ में शहाजी घोडे पर से गिरकर अकस्मात् कर्नाटक में मर गया। शिवाजी ने राज्य स्थापन किया; इस लिए उसकी योग्यता यद्यपि भारी है तथापि शहाजी की योग्यता कुछ कम नहीं है। निजामशाही का कारबार उसने दस पन्द्रह वर्ष चलाया और प्रत्यक्ष बादशाह की भी परवा नहीं की। उसी प्रकार आदिलशाही में भी उसने बहुत से परिवर्तन किये। शौर्य, उत्साह और साहस के सिवाय उसमें स्वामिभक्ति का गुण भी विलक्षण था। उसका पराक्रम देखकर उसे इतिहास में 'राज्य परिवर्तन करनेवाला' यह पदवी मिली है। शहाजी के मरने पर शिवाजी ने खुल्लमखुल्ला राज्य स्थापन करके अपने नाम का सिक्का चलाया। शिवाजी के राज्य का सच्चा प्रारम्भ यही है (सन् १६६४)। परन्तु विधिपूर्वक राज्याभिषेक कुछ काल बाद हुआ।

३. दिल्ली को प्रयाण (सन् १६६६ ई.):—दिल्ली जाते समय शिवाजी ने जयसिंह से वचन ले लिया था कि हमारे जी पर कोई जोखीम न आवे। जयसिंह दक्षिण में था; परन्तु उसने अपने लडके रामसिंह के द्वारा दिल्ली पत्र भेज कर बादशाह से कहला भेजा कि शिवाजी का सब प्रबन्ध उत्तम रखा जाय। शिवाजी के दिल्ली पहुंचने पर बादशाह औरंगजेब से उसकी भेट हुई। उस समय शिवाजी का कुछ अपमान हो गया, इस कारण दोनों कुछ चिड गये। बाद को बादशाह ने शिवाजी को नजरकैद में रखा। तब शिवाजी

अमीर-उमरावों तथा ब्राह्मणों के पास मिठाई की डलियां भेजने की चाल डाली और एक दिन स्वयं एक डलियों में बैठ कर उसने अपना छुटकारा कर लिया। शिवाजी बैरागी के वेष से मथुरा, काशी, प्रयाग होते हुए कुशल पूर्वक रायगढ आगया। दिल्ली जाने से वहां की भीतरी दशा का शिवाजी को अच्छा ज्ञान हो गया और उसे उस ज्ञान का अत्यन्त उपयोग हुआ।

दिल्ली से लौट कर उसने फिर अपने बहुत से किले जीत लिये और मुगलों के राज्य में उपद्रव मचाना शुरू किया। सन् १६७० में शिवाजी ने तानाजी मालुसरे को भेज कर, सुलह में मुगलों के हाथ गया हुआ सिंहगढ किला फिर लौटा लिया। उस मौके में तानाजी ने अद्वितीय पराक्रम दिखलाया, परन्तु उसमें तानाजी खेत रहा। इससे 'गढ आया; पर सिंह गया' ऐसा कहकर सिवाजी ने उस किले का 'कोंडाणा' नाम बदलकर सिंहगढ नाम रखा। सन् १६७० में शिवाजी ने सूरत पर दूसरी चढाई की और वहांसे अपार सम्पत्ति प्राप्त की। वहां से लौटते समय चांदगढ में मराठों और मुगलों में संग्राम हुआ और मुगलों का पराभव हुआ। सन् १६७१-७२ में मराठे ने खानदेश पर सवारी की, उसमें सालेर मुकाम में घनघोर युद्ध हुआ और मुगलों का पूर्ण पराजय हुआ। अन्त में वही सुलह कायम रही, जो पुरन्दर में हुई थी और शिवाजी ने औरंगजेब से यह स्वीकार करा लिया कि हम पूर्ण स्वतन्त्र हैं।

४. बीजापुरवालों से दूसरा युद्ध (सन् १६७२-७३):—सन् १६७२ में बीजापूर का अली आदिलशाह मर गया। तब दरबार में फूट पैदा होगई और शिवाजी से फिर युद्ध शुरू हुआ। शिवाजी ने बीजापूर का पन्हाला किला ले लिया और हुबली शहर को लूटा। उंबरानी और जेसरी में दो बडी लडाइयां हुई, और बीजापूर की फौज का सत्यानाश हुआ; पर उसमें शिवाजी का शूर सेनापति प्रतापराव गुजर काम आया। हंबीरराव मोहिते, संताजी घोरपडे, धनाजी जाधव नाम के सरदार इसी लढाई में पहले पहल प्रसिद्ध हुए। बाद को जब बीजापूर दरबार पर औरंगजेब की फौज का धावा हुआ तब दरबार ने शिवाजी से सुलह कर ली। शिवाजी ने उस राज्य को मदद दी; इसी लिए वह आगे कुछ दिन तक और टिका।

५. राज्याभिषेक,—(ता. ६ जून १६७४)। इस प्रकार तीस वर्ष महान् उद्योग कर के शिवाजी ने स्वराज्य की स्थापना की। बीजापुरवालों को

और मुगलों को हैरान कर के मराठा-मण्डल में ऐक्य स्थापित किया और उन पर अपना अधिकार जमाया। तब राज्य की सांगोपांग स्थापना हुई, यह बात सब लोगों पर प्रकट करने के लिए, प्रधान और मंत्रियों की अनुमति से, यथाविधि अभिषेक-समारंभ करना शिवाजी ने निश्चित किया।

इस अभिषेक-समारम्भ में दो बातों का समावेश होता है। (१) सारा महाराष्ट्र-मण्डल जमा कर के धार्मिक और लौकिक उत्साह, बडे ठाटबाट के साथ करना; और (२) सदा के लिए राज्य का प्रबन्ध निश्चित कर देना।

काशी से गागाभट्ट नाम का एक विद्वान् पंडित बुलाया गया और उसके द्वारा राज्याभिषेक की सब तैयारी कराई गई। राजेरजवाडे, पर-राष्ट्रों के वकील, बडे बडे शास्त्री, सरदार, पंडित और साधु इत्यादिकों का भारी जमाव रायगड पर हुआ। सन् १६७४ की वर्षा का आरम्भही इस राजसमारंभ का मुहूर्त निश्चित किया गया था। उस दिन शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ और वह यथाविधि सिंहासनारूढ हुआ। यह समारंभ सारे राज्य में प्रकट होने के लिए ये बातें की गईः—(१) राज्याभिषेक के दिन सुवर्णतुला चढाई गई; तोपों की फैरें की गई, दानधर्म किया गया, पोशाकें बाँटी गई और जागीरों की मुकर्री हुई। पश्चात् शिवाजी ने राजचिन्ह धारण किये; (२) राज्याभिषेक का एक नवीन शक शुरू किया गया; (३) 'क्षत्रियकुलावतंस शिवछत्रपति महाराज सिंहासनाधीश्वर' ऐसा अपने कुल का किताब कागज पत्रों में लिखना निश्चय किया; (४) रायगढ राजधानी नियत की; (५) अष्ट प्रधानों को नियत कर के राज्यका सुप्रबन्ध किया; (६) रामदासस्वामी का शिष्यत्व दिखाने के लिए यह निश्चय किया कि, हमारे राज्य का निशान भगवाँ रहे, और मराठे लोग 'राम राम' कर के एक दूसरे की वन्दना किया करें।

अभिषेक के अवसर पर अँगरेजों के वकील रायगढ आये थे, उसी समय ईस्ट इंडिया कंपनी ने शिवाजी से सुलह की। अँगरेजों और पोर्तुगीजों से नौकानयन का ज्ञान प्राप्त कर के शिवाजी ने अपने जहाज तैयार कराये। सब पाश्चात्य लोगों पर और सीदियों पर दबाव रखने के लिए उसने अपनी राजधानी दूसरे प्रान्त में न रख कर खास कोंकण में रखी।

६. **कर्नाटक पर चढाई और अंतः**—शिवाजी ने राज्य–प्रबन्ध में दो तीन वर्ष लगाये । इसके बाद रघुनाथ नारायण हनुमंते को मदद के लिए लेकर सन् १६७१–७८ के सालों में शिवाजी कर्नाटक की चढाई में लगा हुआ था । गोलकुंडा के राज्य से कर वसूल कर कें, ठेट मद्रास तक कर्नाटक का मुल्क उसने जीत लिया और जिंजी का किला मजबूत करकें उसने वहां अपना स्थायी अधिकार जमाया । उसका सौतेला भाई व्यंकोजी तंजोर में रहता था । उससे भेट की, और उससे अपना हिस्सा कबूल करा कर तंजोर का सारा राज्य उस को सौंप दिया । तंजोर का राज्य आगे बहुत दिन तक टिका । जब शिवाजी कर्नाटक में था तब औरंगजेब ने दिलेरखां के अधिकार में बडी भारी फौज दे कर बीजापुर जीतने के लिए भेजा (सन् १६७७)। बीजापुरवालों को शिवाजी ने मदद दी । तब मुगलों के साथ दूसरा युद्ध शुरू हुआ, यह युद्ध औरंगजेब की मृत्यु तक जारी था । उन्हीं दिनों शिवाजी की प्रकृति बिगड गई और थोडेही दिनों में इस महापुरुष का देहान्त हो गया, (५ एप्रिल १६८०)। उस समय उसका वय ५३ वर्ष का था । उसकी मा का सन् १६७७ में स्वर्गवास हुआ । उस की पहली स्त्री सईबाई, जो संभाजी की मा थी, पहले ही मर गई थी । सोयराबाई नाम की दूसरी स्त्री से राजाराम नाम का शिवाजी के दूसरा पुत्र भी हुआ था ।

पाठ चौथा ।

—:0:—

शिवाजी की योग्यता और राज्य-प्रबन्ध ।

१. शिवाजी की योग्यता ।	२. राज्य-प्रबन्ध और प्रधान-मंडल ।
३. किले ।	४. फौज और जहाज ।
५. मुल्की इन्तिजाम ।	६. उपसंहार ।

१. **शिवाजी की योग्यताः**—शिवाजी असाधारण पुरुष था । सामान्य दशा में होने पर भी दो बलाढ्य शत्रुओं से टक्कर मारकर उसने मराठों का स्वतंत्र राज्य स्थापित किया । महाराष्ट्र के लोग देव के समान उसे भजने लगे। निजी व्यवहारों में वह अत्यन्त मनमिलाऊ और स्वार्थत्यागी था । सब प्रकार

के लोगों की संगति में और नानाप्रकार की दशा में उसकी अवस्था व्यतीत होने के कारण उसे जग का अच्छा अनुभव प्राप्त हुआ था। मधुर भाषण-द्वारा वह चाहे जिस पर बात की बात में अपनी छाप बैठा लेता। प्रत्येक बात का ज्ञान होने के कारण वह कभी धोखे में न आता। वह साहसप्रिय था; इस लिए विश्वास हो जाने पर संकट में कूदने के लिए वह कच्चा न खाता। लोगों पर हुकूमत चलाने के लिए वह स्वयं अपने नियम पालने में चौकस रहता। उसके मित्र प्राणों पर प्राण देनेवाले थे। वह सदा शांत और गंभीर रह कर अपने मन के विचार, आवश्यकता के बिना, किसी पर प्रगट न होने देता। दुःख और संकट सहने में वह अत्यन्त दृढ था। स्वधर्म पर शिवाजी की पूर्ण निष्ठा थी और कथा कीर्तन सुनने में वह सदा तत्पर रहता था। यद्यपि उसे विशेष लिखना पढना न आता था तथापि विद्वानों और महापुरुषों की संगति से वह बहुश्रुत हो गया था। उसकी रहन सहन सादी थी। तथापि खर्च करने में वह कंजूस न था। उसकी सेवा करते समय सब को यह विश्वास रहता कि, अगर हमारे प्राण गये तो शिवाजी हमारे लडके बच्चों के लिए कभी कमी न करेगा; और इसी कारण लोग उसके लिए प्राण देने को तयार रहते। उसका बहुत सा धन किले बनवाने और राज्य को दृढ करने में खर्च होता। मुल्क किंवा जागीरें राज्य से अलग कर देने की चाल उसे न पसंन्द थी। वह फौज को तथा दूसरे लोगों को ठीक समय पर वेतन देता। उसकी सच्ची कर्तृत्व-शक्ति उसके राज्यप्रबन्ध से जानी जाती है।

२. राज्य-प्रबन्ध और प्रधान-मंडलः—शिवाजी ने राज्य-प्रबन्ध की जो पद्धति डाल दी उससे उसकी पटुता मालूम होती है। उसने जो चार मुख्य संस्थाएं नियत कीं वे ध्यान में रखने योग्य हैः—१ अष्टप्रधान-मंडल; २ फौज और जहाज; ३ किले; ४ भूमिकर की पद्धति।

राज्यरक्षा और राज्यवृद्धि के उद्देश ध्यान में लाकर शिवाजी ने प्रधान-मंडल रचा था। राज्य के भिन्न भिन्न काम भिन्न भिन्न अधिकारियों के सिपुर्द कर दिये थे। ऐसे अधिकारी आठ थे। वही आठ अधिकारी, राजा की देखरेख में, राज्य का सब प्रबन्ध करते थे। कहते हैं कि यह व्यवस्था शिवाजी ने महामात्यों से ली थी। शुरू शुरू में इन अधिकारियों के नाम मुसलमानी थे; पर फिर शिवाजी ने उनके संस्कृत नाम रखे। वे अधिकारी इस प्रकार के हैंः—

संस्कृत नाम.	फारसी नाम.	काम.	व्यक्ति का नाम.	वेतन.
१ पंतप्रधान.	पेशवा.	मुख्य प्रधान.	मोरो त्रिमल पिंगले.	सालाना १५००० होन.
२ पंतअमात्य.	मुजूमदार.	राज्यका वसूल और हिसाब.	आबाजी और निलो सोनदेव.	सालाना १२००० होन.
३ पंतसचिव.	सुरनीस.	राज्य के दफ़्तरका संभाल.	अण्णाजी दत्तो.	सालाना १०००० होन.
४ मंत्री.	वाकनीस.	राजानिजी कारबार.	दत्ताजीपंत त्रोकील.	,, ,,
५ सुमंत.	डबीर.	परराज्य से व्यवहार रखना.	सोमनाथपंत.	,, ,,
६ सेनापति.	सरनोबत.	सब फौज का मुखिया.	प्रतापरावगुजर और हंबीरराव मोहिते.	,, ,,
७ न्यायाधीश.	....	न्यायविभाग का मुखिया.	बालाजीपंत और निराजी रावजी.	,, ,,
८ पंडितराव.	....	धर्मविभाग का मुखिया.	रघुनाथपंत उपाध्ये.	,, ,,

इन सब प्रधानों के नीचे मददगार रहते थे। जो मुखियों की गैरहाजिरी में सब काम देखते थे। ये प्रधान नियत कर के उनके कामों के नियम शिवाजी ने निश्चित कर दिये। शिवाजी ने इन कामों पर योग्य पुरुषों को नियत किया था। ये सब पुरुष राज्य के आधारस्तंभ थे, और प्रसंग आ पड़ने पर प्राण देने के लिए भी तैयार थे।

३. किले:—सह्याद्री के पहाडी प्रदेशों में, कोंकण में समुद्र के किनारे और पूर्व और मैदान में अनेक शिकस्त किले पाये जाते हैं। उनमें से करीब तीन चार सौ किले शिवाजी के बनाये हुए अथवा दुरुस्त किये हुए हैं। इन किलें पर अनाज, गोलाबारूद आदि सामान काफी तौर पर भरा रहता। किले पर जाने के मार्ग बहुत ही अवघड रहते थे। इस लिए भारी फौज का उसमें प्रवेश नहीं होता था। चाहे किला वर्षों शत्रु सेना से घिरा रहे, तौभीतर के थोडे से लोग बाहर की असंख्य सेना की परवा न करते और यदि संकट का समय आ ही गया तो भीतर से बाहर जाने के लिए गुप्त मार्ग रहते। इस लिए थोडी फौज से राज्य बचाने की युक्ति किलों के योग से सध गई थी। बाद को राज्य पर आये हुए अनेक संकट इन्हीं किलों के योग से दूर हुए।

प्रत्येक गढ पर एक मराठा हवलदार रहता, उसके नीचे ब्राह्मण सबनीस और परभू कारखाननीस का काम करते। उन तीनों की ओर किला और उसके नीचे के प्रदेश की रखवाली का काम, वसूल, गोलाबारूद और मरम्मत करके सामान पहूँचाने का काम, अलग अलग बँटा हुआ था। इस कारण सब अपना अपना काम मन से करते।

९. फौज और जहाजः—शिवाजी की फौज दो प्रकार की थी। घोडे सवार और पैदल। पैदल की भरती अधिक थी। दस पैदल सिपाहियों पर एक नायक, पाँच नायको पर एक हवालदार, दो हवालदारों पर एक जुमलेदार और दस जुमलों पर अर्थात् एक हजार सिपाहियों पर 'एक हजारी' नामका कामदार रहता। इस प्रकार की पाँच हजार फौज पर सरनोबत मुखिया रहता। पैदल के सिपाही मालवे और कोंकण में रहनेवाले हेटकरी जाति के होते थे: ये विश्वासू थे और अवघड जगहों में चढजाने में पटु थे। जुमलेदारों को सालाना सौ होन और 'एक हजारी' को सालाना पांच सौ होन वेतन मिलता। होन ३॥ रुपये का होता था। 'पांच हजारी' को अडाई हजार रुपये वेतन मिलता इसके सिवाय कितनीही के लिए पालकी आदि नियत थी।

घुडसवारोंका भी प्रबन्ध ऐसाही था। पच्चीस सवारों पर एक हवलदार, पांच हवलदारों पर एक जुमलेदार, दस जुम्लों पर एक सूबेदार और दस सूबों पर एक पांच हजारी रहता। प्रति पच्चीस घोडों को लिए एक नालबन्द और भिस्ती रहता। घुडसवारों में शिलेदार और बारगीर नाम के दो वर्ग रहते थे। शिलेदार बहुतही ऊंचे दरजे के थे और उनको सरकार से नियत रहतीं; घोडे और हथियार वे अपने ही रखते थे। बारगीर सरकार के खास नौकर थे। उन्हें घोडे और हथियार सरकारही से मिलते। ढाल, तलवार, भाला और बन्दूक यही फौज के हथियार थे। शिलेदारों का वेतन प्रतिमास छे होन से लेकर बारह होन तक और बारगीरों का वेतन एक होन से लेकर पांच होन तक रहता। फौज में, खुफिया सिपाही; सबनीस, कारखाननीस आदि रहते। बहीरजी नाईक नामका होशियार मराठा सरदार खुफिया सिपाहियों का मुखिया था।

फौज का वेतन ठीक समय पर दिया जाता। फौज में दासी, स्त्री, कलाल आदि लेने की सख्त मनाई थी। जब कोई नवीन आदमी नौकर रखा जाता

तब पुराने लोगों में से उसकी जमानत ली जाती । कर वसूल करने के नियम सख्त थे । लूट का सब माल सरकार में जमा करना पडता । विलक्षण पराक्रम करनेवाले को बहुमान का सिताब देने की चाल थी । स्थलसेना की तरह शिवाजी ने जलसेना का प्रबन्ध भी अच्छा रखा था । जहाजों की सहायता से स्वदेशरक्षा करने का सुभीता उसे अत्यन्त आवश्यक मालूम हुआ । सीदियों को पादाक्रान्त करके पश्चिमी किनारे पर उसने अनेक किले बनवाये, और जगह जगह जहाज रख दिये । कुलावा नामका अलीबाग का किला जलसेना का मुख्य स्थान था । सन् १६६५ के करीब उसके पास ३० से लेकर १५० टन आकार के छोटे बडे ८५ जहाज थे; उनमें तीन बडे डोल काठियों के थे । बाद को छे वर्षों में उसकी जलसेना में १६० जहाज होगये । नाविकता में आगे प्रसिद्धि पाया हुआ कान्होजी आंगरे शिवाजी की जलसेना का मुख्य सरदार था । इसके सिवाय दर्यासागर, इब्राहीमखां और मायनाक भण्डारी शिवाजी की जलसेना में समय समय पर काम करते थे ।

५. **मुल्की इन्तिजाम**:—शिवाजी ने पहले के इन्तिजाम में दो फेरफार किये । एक जमीन का कर फसल के रूप में न लेकर रुपये के रूप में लेना और दूसरा वह जमीनदारों की मार्फत न लेकर प्रत्यक्ष वसूल करना । इसके लिए **कमाविसदार, महालकरी, सूबेदार** आदि अधिकारी उसने नियत किये । फसलका दो-पंचमांश वसूल करने की रीति थी । इन्ही अधिकारियों को फौजदारी का भी अधिकार सौंपा गया था । बहुतेक न्याय गाँव की पंचायतों द्वारा होता था । शिवाजी के राज्य के-स्वराज्य और मुगलाई-ए दो भाग थे । अपने राज्य में पूर्णतया मिलनेवाला प्रदेश 'स्वराज्य' और परकीयों के कब्जे में रहकर कर आदि देनेवाला प्रदेश 'मुगलाई' कहलाता था । स्वराज्य के कुल बारह सुबे थे । प्रत्येक सूबे के दो अथवा तीन अन्तर्भाग थे । उन्हें महल कहते थे । शिवाजी के कुल राज्य का उत्पन्न पचास लाख तक था । इसके सिवाय कर और लूट आदि की आमदनी अलगही थी । सूबेदारों का सालीना वेतन ४०० होन था । किलों की रक्षा के लिए, देवस्थानों के लिए और लढाई में पराक्रम करनेवालों के लिए शिवाजी की ओर से इनाम में जमीन कभी कभी मिलती थी । मुसलमान या हिन्दू देवालयों की आय उसने बन्द नहीं की ।

६. **उपसंहार**.—ऐसा प्रबन्ध कर के भी, भिन्न भिन्न मार्गों से राष्ट्र की उन्नति करने के लिए शिवाजी ने और भी अनेक उपायों की योजना की ।

उसने व्यापार, विद्या और संस्कृत तथा मराठी भाषाओं को उत्तेजन दिया; परन्तु उस धूमधाम के समय में ऐसे शान्ति के विषयों की ओर ध्यान देने का उसे बहुत सा अवसर नहीं मिला । राज्य–व्यवहार–कोश नामक एक कोश उसने तैयार कराया । परराष्ट्रों से उसका जो व्यवहार हुआ है उससे जान पड़ता है कि राज्य की साम्पत्तिक दशा का ज्ञान भी उसे अच्छा था ।

शिवाजी ने जो कर्तृत्व कर दिखाया उसका श्रेय मुख्यतः उसी को है । तथापि उसे और भी बहुत से लोगों की सहायता थी । रामदास स्वामी, जिजाबाई, दादोजी कोंडदेव, कंक, मालुसरे, फसलकर, पिंगले, निलो सोनदेव, हणमंते, निराजी रावजी, अण्णाजी दत्तो, दत्ताजीपंत वोकील, मुरार बाजी, बाजी देशपांडे, बालाजी आवजी चिटणीस, फिरंगोजी नरसाला, नेताजी पालकर, प्रतापराव गुजर, हंबीरराव मोहिते आदि उसके साथियों के नाम ध्यान में रखने योग्य हैं ।

पाठ पांचवाँ ।

छत्रपति संभाजी ।

(सन् १६८०–१६८९ इसवी) ।

१. राज्यारोहण और राज्य–प्रबन्ध । २. संभाजी के युद्ध–प्रसंग । ३. वध ।

१. राज्यारोहण और राज्य–प्रबन्धः—संभाजी का जन्म सन् १६५९ में हुआ । पराक्रम में वह बाप के समानही किंबहुना उससे भी अधिक शूर था । बाप के साथ अनेक चढाइयों में घूमने से उसके शरीर में दृढता और साहस के गुण आगये थे । पर उसके दूसरे गुण अच्छे न थे । शीघ्रही वह व्यसनी बन गया; इस लिए उसका स्वभाव कठोर और क्रूर हो गया; इसी कारण वह किसी की परवा न करने लगा । सन् १६७८ में औरंगजेब के सरदार दिलेरखां ने शिवाजी पर चढाई की. उस समय संभाजी बाप से बिगड कर दिलेरखां में जा मिला । पर उसे दिलेरखां ने आश्रय नहीं दिया । बाद को शिवाजी उसे समझा कर ले आया, और पन्हाला में कैद कर रखा । उस पर देखरेख करने के लिए उसने जनार्दनपंत हणमंते को नियत कर दिया । शिवाजी के मरण समय

में संभाजी पन्हाले में ही था। शिवाजी की उत्तर-क्रिया राजाराम ने रायगढ़ पर की। वह संभाजी से दो वर्ष छोटा था।

अण्णाजी दत्तो और मोरोपंत पिंगले से मसलहत करके राजाराम की मा सोयराबाई ने शिवाजी की मृत्युवार्ता संभाजी को न मालूम होने दी और राजाराम को गद्दी पर बिठाकर राजकारबार शुरू किया। पर यह खबर ज्योंही संभाजी को मालूम हुई, त्योंही वह रायगढ़ पर आया। उसने राजाराम और अण्णाजी दत्तो को कैद कर दिया; तथा सोयराबाई को दीवाल में चुनकर मरवा डाला। बादको उसने अपना राज्याभिषेक कर लिया। रायगढ़ का बन्दोबस्त करके संभाजी पन्हाले को ओर चला गया। इतने ही में औरंगजेब का पुत्र अकबर, बापके विरुद्ध बलवा करके, संभाजी से मदद मांगने के लिये रायगढ पर आया। शाहजादा के रायगढ़ मे रहने पर प्रबन्धकर्ता लोगों ने उससे संभाजी के विरुद्ध गुप्त कारखाई करना शुरू किया। कुछ दिन बाद यह बात जब संभाजी को मालूम होगई, तब तो उसे अनिवार्य क्रोध आया। उसे जान पडा कि बापके समय के सारे मनुष्य हमारे विरुद्ध हैं, इस लिए उन सबोंका इन्तिजाम किये बिना हमको निश्चिन्तता प्राप्त नहीं हो सकती। उसका यह दुराग्रह जन्मभर कायम रहा। इस कारण स्वयं उसका और सारे राज्य का बहुतही नुकसान हुआ। विरुद्ध मंडली की ओर से उसके कल्याण की भी यदि कोई बात कही जाती तौभी उस पर उसका विश्वास न जमता और इसके विरुद्ध वह सदा यही समझता कि वह हमारे लिए धोखा है। इस भयंकर दुराग्रह के आवेश में अनेक बहुमोल नररत्नों की बलि दी गई।

अण्णाजी दत्तो, सोयराबाई के आप्त और पक्षपाती सरदार, बालाजी आवजी चिटणीस, उसका भाई श्यामजी और लडका आवजी, तथा हिरोजी फर्जन्द आदि लोगों को संभाजी ने हाथी के पैर के नीचे डलवाकर मार डाला। शिरके नामक घराने के सरदारों का तो उसने समूल नाश कर दिया। संभाजी की स्त्री येसूबाई चतुर थी; उसने संभाजी से कह कर बालाजी आवजी के दूसरे लडके खंडो बल्लाल को काम पर लेलिया। यह पुरुष आगे चलकर राज्य के लिए बहुत उपयोगी हुआ। संभाजी ने शिवाजी के समय के सारे अधिकारियों को दूर किया। कविकुलेश उर्फ कलुशा नामका एक कनोजिया ब्राह्मण संभाजी की ...चान का था। वह मंत्र, तंत्र आदि के कामों में बहुत होशियार था। उसने

मृदु भाषण से संभाजी की कृपा प्राप्त कर ली थी। पहले तो संभाजी ने कलुशाको पंडितराव का पद दिया, और फिर कुछ दिनों बाद उसे अपना मुख्य मंत्री बनाया, और दूसरे प्रधानों के सब काम उसी को सौंप दिये।

२. संभाजी के युद्ध-प्रसंगः—जब शाहजादा अकबर का संभाजी ने आश्रय दिया तब, औरंजेब बादशाह स्वयं बडी भारी फौज लेकर सन् १६८३ में दाक्षिण देश जीतने के लिए चढ आया। वह समझता था कि शिवाजी की मृत्यु हो गई है; संभाजी बदचलन है; इस लिए अब मराठों का राज्य मैं बात की बात में जीत लूंगा। इधर जंजीरावाले सीदी और पुर्तुगीज आदि संभाजी के शत्रुओं ने भी सिर उठाया। ऐसी अडचन के समय संभाजी ने भारी भारी हिम्मत दिखलाई। गोवा के पास फोंडा नामक मुकाम में पुर्तुगीज लोगों का थाना था; उस जगह मराठों ने घोर संग्राम किया और पुर्तुगीज लोगों के २०० योरोपियन और एक हजार देशी लोगों को उन्होंने काट डाला, तथा वसई की तरफ उनका सारा मुल्क मराठों ने अपने कब्जे में कर लिया।

इतने में उत्तर की ओरसे औरंगजेब की फौज बागलाणे में उतरी। उस जगह मराठों ने मुगलों को बिलकुल हैरान कर डाला। अगले दो तीन वर्षों में बादशाह ने संभाजी की धुन छोडदी, और बीजापुर तथा गोलकुंडा के राज्यों पर अधिकार कर लिया। संभाजी ने इस फुरसत का उपयोग अच्छा नहीं किया। राज्य का बँधा हुआ प्रबन्ध बंद हो गया और चारों ओर अंधाधुधी शुरू हो गई; खजाना खाली पडगया; सरकारी वसूल कुछ भी न आने लगा; शिवाजी के नियम बंद हो गये, शूरता के सिवाय संभाजी में दूसरा कोई गुण न था। ऐसी दशा में मराठी राज्य बिलकुल हीनावस्था को आ पहुँचा।

३. संभाजी का वध, (सन् १६८९ ई.),—सन् १६८७ में औरंगजेब ने संभाजी के साथ फिर युद्ध किया। शाहजादा अकबर संभाजी को छोड कर ईरान चला गया। वाई के पास बादशाह के सरदार सर्जेखां और हंबिरराव मोहिते का युद्ध हुआ। इस लडाई में संभाजी को जय तो मिला, पर हंबीरराव गोली लग कर मारा गया। उसकी मृत्यु से संभाजी का पक्ष बिलकुल बैठ गया। बाद को मुगलों ने संभाजी को चारों ओर से घेर लिया। उसी समय वह कोंकण में संगमेश्वर में बेहोश पडा था। इतनेही में कोल्हापुर के मुसलमान अधिकारी तकरीबखां ने एकाएक उस पर छापा डाला और संभाजी

तथा कलुशा दोनों को पकड कर वह तुलापुर में बादशाह की छावनी में ले आया, (जून स. १६८९) । उस जगह बादशाह ने संभाजी से मुसल्मान होने के लिए कहा। तब संभाजी ने मुसल्मानी धर्म की निंदा करके तेजी के साथ यह जवाब दिया कि " अपनी लडकी के साथ तू मेरा विवाह कर दे तो मैं मुसलमान होता हूं। " बादशाह को मुसलमानी धर्म की निंदा न सहन हुई। उसने संभाजी की जिव्हा छेदकर क्रूरता के साथ उसका वध किया। (अगस्त सन् १६८९)। व्यसनाधीन होने के कारण संभाजी का नाश हुआ। तथापि वह शूर और कर्तृत्ववान् था । जिस समय संभाजी का वध हुआ उस समय उसकी स्त्री येसूबाई और नव वर्ष का लडका शिवाजी रायगढ पर थे। उस समय एतकादखां ने (जो आगे चलकर जुल्फिकारखां के नाम से प्रसिद्ध हुआ) किले को घेर लिया और वह येसूबाई और शिवाजी को कैद करके बादशाह के पास ले गया। वहां वे दोनो १७ वर्ष तक कैद में रहे। संभाजी के हृदय-द्रावक वध से सारा देश थरथरा उठा और मराठों में मुगलों से बदला लेने का नवीन जोश पैदा हुआ।

पाठ छठवाँ.

छत्रपति राजाराम और दूसरा शिवाजी ।

सन् १६८९-१७०८ ।

१. मराठों पर भयंकर संकट । २. संताजी घोरपडे और धनाजी जाधव । ३. राजाराम की मृत्यु । ४. ताराबाई और शिवाजी । ५. शाहू की मुक्तता ।

१. मराठों पर भयंकर संकटः—मराठेशाही के समय में जो अनेक संकट महाराष्ट्र पर आ पडे उनमें से वर्तमान संकट बहुतही भयंकर था। संभाजी के वध के बाद मराठों ने उसके लडके को गद्दी पर बिठाकर राज्य की व्यवस्था शुरू की। राजाराम, प्रल्हाद, निराजी, रामचंद्र नीळकंठ अमात्य, संताजी घोरपडे, खंडो बल्लाल, धनाजी जाधव आदि लोग पहलेही किले से बहार निकल जाने के कारण शत्रुओं के हाथ से बच गये। एक के बाद एक मराठों के लिए

और प्रान्त मुगलों ने छीन लिये। इससे क्षणभर तो ऐसा जान पडा, कि अब मराठाशाही डूबी। मराठों के वीर्यतेज की, इस संकट के समय, अच्छी ही परीक्षा हुई। राजाराम का स्वभाव संभाजी से बिलकुल भिन्न था। वह निर्व्यसनी, स्वार्थत्यागी और मनमिलाऊ था। रायगढ मुगलों के हाथ में आते ही यह विचार निश्चित कर के शीघ्रही अमल में लाया गया कि रामचंद्रपंत को विशालगढ और पन्हाला के मध्य में रहकर महाराष्ट्र का बचाव करना चाहिए; राजाराम को जिंजी में रहना चाहिए, और संताजी घोरपडे तथा धनाजी जाधव जिंजी और महाराष्ट्र के दरमियान घूमते रहकर बादशाह को अटकाये रहें। राजाराम ने जिंजी में गद्दी की स्थापना करके अष्ट प्रधान नियत किये और शिवाजी के कायदे चारों ओर जारी किये। इसके सिवाय राष्ट्र को बचाने के लिये उसे एक और युक्ति सूझी। वह यह कि, उसने यह बात सब पर प्रगट कर दी कि जो पराक्रम करके शत्रुओं को शिकस्त करेगा उसे जागीर, पदवी और बख्शीश आदि देकर सन्तुष्ट किया जायगा। इसके अनुसार उसने अनेक लोगों को देनगी दी। इस लालच से बहुत लोग आगे आये। वे पदवियां आज तक मराठे सरदारों में चली आती हैं। इधर येसूबाई और शिवाजी बादशाह के यहां कैद थे। बादशाह की बडी लडकी जेबुन्निसा की उनपर प्रीति हो गई, और उसने अछी तरह उनको संभाला तथा किसी बात की कमी नहीं होने दी। अंतस्थ रीतिसे येसूबाई और राजाराम के संदेशे एक दूसरे के पास आते जाते रहते। बादशाह की छावनी में रह कर येसूबाई राजाराम के विषय में अपना पक्षपात कभी न दिखलाती।

२. संताजी घोरपडे और धनाजी जाधवः—ये दो पराक्रमी सरदार पहले शिवाजी के जमाने में फौज में नौकर थे। उन्होंने धीरे धीरे बहुत बडी योग्यता प्राप्त की। वे शूर थे। मुसलमान इतिहासकार खफीखा कहता है, "संताजी ने मुगल सरदारों को शिकस्त दी। उस सामने जो कोई आता वह जीता लौटकर न जाता। बडे बडे अहम्मन्य मुसल्मान योद्धा उसके सामने जाने में कांपते थे। उसके सामने टिकनेवाला एक भी वीर मुगलों की ओर न था।" धनाजी जाधव भी वैसाही शूर था! मुगल लोग उसे इतना डरते कि उनका घोडा जब कभी पानी न पीता तब वे उससे पूछते, "क्यों रे! पानी क्यों नहीं पीता। तुझे पानी में धनाजी

तो नहीं देख पडता ! ” संताजी ने एक बार स्वयं बादशाह के तंबू पर हल्ला किया और उसके सोने के कलस काट लाया । उस समय बादशाह तम्बू में न था, इस लिए बच गया । बादशाह की छावनी फिर भीमा के किनारे ब्रह्मपुरी में चली गई । मराठों ने कर्नाटक से ले कर खानदेश की उत्तरी हद तक मुल्क में बैठ कर बडी धूमधाम मचा दी । बादको बादशाह का पाकर जुल्फिकारखां ने जिंजी को घेर लिया । यह घेरा पांच वर्ष तक जारी था । राजाराम आदि सब लोग भीतर धंधे हुए थे । अंत में बादशाह ने जुल्फिकारखां को सख्ती का हुक्म भेजकर जिंजी का किला अपने अधिकार में कर लिया; पर उसके पहले ही राजाराम–सहित सब लोग बाहर निकल गये थे, (स. १६९८) ।

३. राजाराम की मृत्यु (१७००)—जिंजी से लौट कर राजाराम ने सितारा में अपनी गद्दी स्थापित की । मराठाशाही की यह गद्दी अखीर तक सितारे में थी । इसके बाद राजाराम ने सब सरदारों की अनुमति से मुगलों पर धावा किया । स्वयं साथ में फौज लेकर वह मुगलों के राज्य में चौथाई और **सरदेशमुखी** के हक वसूल करता रहा । खानदेश तक चढाई करके राजाराम सिंहगढ पर आया और एकाएक ज्वर से पीडित होकर वह २९ वर्ष की अवस्था में मर गया (स. १७०० ई.) । राजाराम में विशेष प्रखर कोई गुण न थे, तथापि दुर्गुण भी उसमें न थे । इस कारण उसके हाथ से राज्य का बहुत कल्याण हुआ । राजाराम के ताराबाई और राजसबाई नामकी दो स्त्रियां थी । पहली के शिवाजी और दूसरी के संभाजी नाम के पुत्र थे ।

४. ताराबाई और शिवाजी, (सन् १७००–१७०८):—राजाराम की अकालिक मृत्यु से बादशाही फौज को अत्यानन्द हुआ, परन्तु वह क्षणिक था । रामचन्द्रपंत, ताराबाई, धनाजी आदि लोगों ने अपने आदमियों को योग्य उपदेश दे कर मुसल्मानों से लडने का और भी अधिक क्रम जारी रखा । रामचन्द्रपंत के मन में था कि संभाजी के लडके शिवाजी को छुडाकर गद्दी पर बैठावें । पर ताराबाई को यह विचार नहीं रुचा । उसने यह आग्रह किया कि आज तक राज्य बचाने का प्रयत्न राजाराम ने किया है; इस लिए गद्दी उसी के वंश में रहना ठीक है । इसी विचार से उसने अपने लडके को गद्दी पर बैठाया । उस समय उसकी उम्र १० वर्ष की थी । परशुराम त्रिंबक को ताराबाई ने प्रतिनिधि नियत किया । प्रतिनिधि का पद राजाराम ने जिंजी में नवीन निर्माण

किया था। प्रल्हाद निराजी पहला प्रतिनिधि जिंजी में मर गया। उसके बाद ताराबाई ने वह पद परशुरामपंत को दिया। वह उसी के घराने में चल रहा है। मुगलों के साथ का युद्ध खतम न हुआ था। सन् १६९९ में ब्रह्मपुरी की छावनी तोडकर बादशाह स्वयं फौज का आधिपत्य ग्रहण करके मराठों पर चढ आया। उसने एकके पीछे एक मराठोंके किले हस्तगत करनेका क्रम जारी किया। सितारे का अजीमतारा, परली, चंदनवंदन, पन्हाला, विशालगढ, इत्यादि किले लेकर वह ज्योंही लौटने लगा त्योंही मराठों ने एक के पीछे एक अपने सब किले जीत लिये। मराठे दिन पर दिन बलवान् होते चले। अन्त में उन्होंने इतना जोर पकडा कि बादशाह को यह भय होने लगा कि अब मैं इन के हाथ से जीता कैसे बचूं। उसे जान पडा कि अब ९० वर्ष की अवस्था होने पर मेरा अन्त आ गया। उसका खजाना खाली हो गया और फौज ने अपनी तनखाह के लिए उसे हैरान कर रखा। अन्त में सन् १७०७ के फरवरी महीने में, अहमदनगर में आकर औरंगजेब मर गया। उसके मरने से मराठे लोग मुगलों के कष्ट से सदा के लिये छूट गये। यहां से फिर मराठों की ही धाक मुगलों पर बैठ गई।

५. शाहू की मुक्तता:—संभाजी के पुत्र शिवाजी उर्फ शाहू पर औरंगजेब की बहुत कृपा हो गई थी। उसे छुडाने के कितने ही प्रयत्न मराठे सरदारों ने किये; पर वे सिद्ध नहीं हुए। बादशाह के जनानखाने में करीब १८ वर्ष वह रहा; इस कारण अनुभव द्वारा प्राप्त होनेवाला जग का ज्ञान और शौर्य उसमें उत्पन्न नहीं हुआ था।

औरंगजेब के मरते ही उसके लडकों में झगडे लगे। अजीम ने जुल्फिकारखांकी मदद से शाहू सहित दिल्ली की ओर कूच किया। यह सरदार दक्षिण में नवीन राज्य स्थापन करना चाहता था, इस कारण वह मराठों से सदा स्नेह भाव रखता। उसकी सलाह से अजीमशाह ने शाहू को मुक्त करके दक्षिण को भेज दिया। उस समय शाहू ने मुगलों की ताबेदारी कबूल की। येसूबाई दिल्ली जाकर फिर दक्षिण को नहीं लौटी। खानदेश के बरार और बागलाण नामक प्रान्तों के सरदार शाहू से मिल गये। गोदावरी नदी पार करने के बाद शाहू ने ताराबाई से कहला भेजा कि 'मैं आता हूं, आप राज्य मेरे अधीन कर दें।' यह बात ताराबाई को नहीं पसन्द आई। उसने धनाजी जाधव, खंडो बल्लाल

और परशुराम त्रिम्बक को शाहू से लडने के लिए भेजा। उनमें से पहले दो पुरुष ताराबाई का पक्ष छोडकर शाहू में मिल गये। इस लिए परशुरामपंत हारकर सितारे को लौट आया। शाहू ने सितारे पर धांवा किया और परशुरामपंत को कैद करके सितारे का किला ले लिया। ताराबाई अपने साथियों सहित भग गई। तब सन १७०७ के जनवरी महीने में शाहू ने अपना राज्याभिषेक कर लिया।

पाठ सातवाँ।

छत्रपति शाहू।

सन १७०८-१७४९।

१. स्वकीयों से युद्ध। २. बालाजी विश्वनाथ का उदय।
३. बालाजी का कर्तृत्व। ४. बालाजी विश्वनाथ का शासन-काल।

१. स्वकीयों से युद्ध, (१७०८-१७१२):—यद्यपि शाहू का राजधानी में प्रवेश होगया था, तथापि उसकी दशा बहुत भयंकर थी। बडे बडे प्रमुख मराठे सरदार ताराबाई के पक्ष के थे। वे भिन्न भिन्न प्रान्तों से ताराबाई की तरफ से लडकर शाहू के साथ उपद्रव मचाते थे। उनका बन्दोबस्त करने में शाहू को चार पांच वर्ष लगे। उस समय जो युद्धप्रसंग उपस्थित हुए उन्हें 'स्वकीयों से युद्ध' कहा गया है। हैबतराव निंबालकर सरलश्कर, खंडेराव दाभाडे, मानसिंह मोरे, परसोजी भोसले, चिमणाजी दामोदर और उसका स्वामी बहिरोजीपंत पिंगले, खंडो बल्लाल आदि लोग शाहू की ओर थे। आपाजी और दामाजी थोरात, शहाजी निंबालकर, संताजी पांढरे, रामचन्द्र नीलकंठ अमात्य, वाडीकर खेम सावंत, उदाजी चौहान, कान्होजी आंगरे, शंकराजी नारायण सचिव और परशुरामपंत प्रतिनिधि आदि पुरुष ताराबाई के पक्ष के थे। शाहू के शासन का प्रथम समय ये आपस के दंगे मिटाने में ही व्यतीत हुआ। इस काम में बालाजी विश्वनाथ भट श्रीवर्धनकर की उसे अच्छी मदद मिली।

२. बालाजी विश्वनाथ का उदय:—बालाजी विश्वनाथ कोंकण में श्रीवर्धन गाँव में सीदियों के राज्य में रहता था। उसका और सीदियों का बिगाड

हो गया। सीदियों ने बालाजी के भाई जानोजी को गोन में डालकर समुद्र में डुबा दिया। तब बालाजी भी डरा और कुटुंबसहित अपना गाँव छोड कर बाहर निकला। रास्ते में वेलास गाँव में भानुवंश के तीन भाइयों को उसने अपने साथ ले लिया। इन भानुओं के हाथ में आगे चलकर फडनवीसी का काम आया। और उन्हीं के घराने में प्रसिद्ध नाना फडनवीस का उदय हुआ। बालाजी सितारे में आकर शंकराजी नारायण सचिव के यहां कारकुन का काम करने लगा। सन् १६०६ के करीब बालाजी और आबाजीपंत पुरन्दरे ने धनाजी जाधव के पास वसूली के कामपर नोकरी कर ली। बालाजी की होशियारी देख कर धनाजी की उसपर बहुत प्रीति हो गई। इस प्रकार बालाजी का मराठ-शाही में प्रवेश हुआ।

सन् १७१० में जब धनाजी जाधव की मृत्यु हुई तब शाहू बडी भारी विपत्तिमें फँसा। उसकी तरफ के पुरुष उसे छोडकर ताराबाई की तरफ जाने लगे। ऐसी अडचन के मौके पर बालाजी ने केवल अपनी अक्ल और कारवाई से तथा प्राणपण से परिश्रम करके, शाहू का पक्ष सम्हाल लिया; और अन्त में उसी की जीत हुई। इस कर्तव्य को देख कर शाहू ने उसे अपना पेशवा नियत किया।

६. बालाजी का कर्तृत्वः—१ उसने अपने पासके दो हजार लोग और शाहू की कुछ फौज इकट्ठी करके विरुद्ध पक्ष से लडने की तैयारी की। यह फौज तैयार कर ने के बदले में शाहू ने उसे 'सेनाकर्ता' का पद दिया। २. उसने और खंडो बल्लाल ने परशुराम त्रिम्बक प्रतिनिधि का मन शाहू के पक्ष की ओर फेर कर उसे बंध-मुक्त किया ३. सचिव शंकराजी नारायण के मरने पर उसके लडके को उसने शाहूके पक्ष की ओर खींच लिया। ४. दमाजी थोरात और कृष्णराव खटावकर ने शाहू के विरुद्ध जो दंगे किये उन्हें बड़े धैर्य और चतुरता के साथ शान्त किया। ५. कुलाबा के आंगरे उस समय बहुत जोर पर थे। कान्होजी आंगरे ताराबाई की तरफ से लडता था, वह शाहू का मुल्क जीतता हुआ शीघ्रता के साथ सितारे पर आने लगा। उस पर शाहू ने अपने पेशवा बहिरोपन्त पिंगले को भेजा। परन्तु आंगरे ने बहिरोपन्त का पराभव करके उसे कैद कर लिया। तब शाहू ने बालाजी को आंगरे पर भेजा। बालाजी ने आंगरे का जोर देख कर उससे सुलह करली; और कोंकण के कुछ किले देकर उसे शाहू की तरफ मिला लिया, (सन्

१७१३) यद्यपि बालाजी ने उपर्युक्त बातें कीं; तथापि एक बात भाग्य से शाहू के अनुकूल हो गई, इस लिए उसका पक्ष बच गया । ताराबाई का लड़का शिवाजी सन् १७१२ में चल बसा । तब राजसबाई और संभाजी उस पक्ष के मुखिया हुए । परन्तु लोग ताराबाई को जितना चाहते थे उतना राजसबाई को नहीं; इस कारण लोग शाहू के पक्ष में मिल गये । राजसबाई और संभाजी कोल्हापुर में रहने लगे । कुछ दिन बाद शाहू ने उन्हें कुछ राज्य अलग कर दिया । वह अबतक उन्हींके वंश में चला आता है । उपर्युक्त कर्त्तव्यपूर्ण करने के बदले में बालाजी को शाहूने अपना पेशवा बनाया, (नवंबर ता. ६ सन् १७१३) और अन्य अष्ट प्रधानों की मुकर्रीरी बालाजी की अनुमति से की ।

४. बालाजी विश्वनाथ का शासन-काल, (स. १७१३-२०):— बालाजी विश्वनाथ ने पुना प्रान्त मुगलों से ले लिया और उसका अच्छा बन्दोबस्त किया । दिल्ली में बादशाह और सैयद बन्धुओं में बिगाड हुआ और बादशाह ने सन् १७१६ के आरम्भ में सैयद हुसेनअली को दक्षिण की सूबेदारी पर भेज दिया और गुप्त रीति से गुजरात के सूबेदार दाऊदखां को उसे मार डालने के लिए लिखा । बाद को उन दोनों में लड़ाई हुई, उसमें दाऊदखां मारा गया । परन्तु मराठा ने हुसेनअली को शिकस्त कर दिया था और दिल्ली में उसके नाश के लिए मसलहतें हो रही थीं । ऐसे कठिन प्रसंग में हुसेन ने शाहू राजा से सुलह कर ली । उसमें उसने मराठों को दक्षिण के छे सूबे और तंजौर तथा मैसूर आदि प्रान्तो की चौथाई, सरदेशमुखी और स्वराज्य की सनद देना कबूल किया, (सन् १७१७) । तब बालाजी और खंडेराव दाभाडे दस हजार फौज लेकर सैयदों की मदद के लिए दिल्ली गये । मराठों की मदद से सैयदों का उत्कर्ष हुआ । इसके बदले उन्होंने चौथाई, सरदेशमुखी और स्वराज्य के हक्क बादशाह की ओर से बालाजी को दिलाये । इसके बाद बालाजी सितारे को लौट आया, (१७१९) बाद को उसने राज्य की जमाबन्दी का प्रबन्ध किया । उस परिश्रम से क्षीण होकर सन १७२० में उसका देहान्त हो गया । बालाजी बड़ा बुद्धिमान्, राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी था ।

पाठ आठवाँ ।

छत्रपति शाहू और पेशवा बाजीराव ।

सन् १७२० से १७४० तक ।

१. मराठों का अगला कर्तव्य । २. मराठशाही का रूपान्तर ।
३. अगले युद्धों की उपपत्ति । ४. बाजीराव पेशवा
५. निज़ामुल्मुल्क । ६. अन्य चढाइयां और मृत्यु ।

१. मराठों का अगला कर्तव्यः—मुसल्मानों से लड़कर उन्हें शिकस्त करने के लिए मराठों ने आजतक बहुत श्रम किये थे । स्वदेश के लिए स्वार्थत्याग करने में उन्हों से आगा पीछा नहीं विचारा । इस प्रकार पचास वर्ष तक किये हुए श्रमों के सफल होने का अवसर शाहू के जमाने में प्राप्त हुआ । अर्थात् महाराष्ट्र मंडल के सामने उस समय यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि अब इसके बाद मराठशाही का प्रबन्ध कैसा रखा जाय । शिवाजी ने जो पद्धति डाल दी थी उसका उपयोग आज तक हुआ । परन्तु गत पचीस वर्षों में मुसल्मानों के साथ मराठों ने जो टक्कर लगाई उससे एक यह बात प्रगट हुई कि शिवाजी का काम पूर्णता को पहुँचाने के लिए मराठों को केवल महाराष्ट्रही में रहना उपयोगी नहीं । मुसल्मानों की राजधानी दिल्ली को अपने अधिकार में लिये बिना मुसल्मानों का पराभव नहीं हो सकता, और मराठों को शान्ति नहीं मिल सकती । मुख्य बादशाही का शीघ्रता से ह्रास हो रहा था । तथापि उस बादशाही की अनेक शाखाएं हिन्दुस्थान के भिन्न भिन्न भागों में फैली हुई थी और वे सब जानते थे कि हम बादशाही के ही अवयव हैं, बादशाह को हिन्दुस्थान पर राज्य करने का जो अधिकार था वही हमको भी है, यदि बादशाही टूट ही गई तो भी हम अपने पराक्रम से हिन्दुस्थान के भिन्न भिन्न भागों पर मुसल्मानों की सत्ता कायम रखेंगे । इधर मराठों के मन में ऐसे विचार आने लगे कि, बादशाही टूटने से हिन्दुस्थान के राज्य का अब कोई धनी नहीं, इस लिए ऐसी दशा में हम यह राज्य छीन लें । इसके सिवाय मराठे आज तक केवल महाराष्ट्रही में बैठे न थे । किन्तु हिन्दुस्थान के दाक्षिणी किनारे तक उन्हों ने

पहले ही आक्रमण किया था। अब, इसके बाद नर्मदा नदी पार करके उन्होंने दिल्ली की कारवाइयों में हाथ डालना आरम्भ किया। पहला पेशवा बालाजी विश्वनाथ अत्यन्त चतुर और चाणाक्ष था। उपर्युक्त सब बातों का विचार करके उसने यह निश्चित किया कि मराठों में पराक्रम और शक्ति बहुत है; उसका उपयोग करने से हिन्दुस्थान का राज्य सहजही प्राप्त किया जा सकता है; इससे मराठे वीरों को नवीन काम करने को मिलेगा, और इस प्रकार दूसरी ओर ध्यान जाने से महाराष्ट्र का गृहकलह आपही आप मिट जायगा। बालाजीकी यह विचार-श्रेणी उसके लडकों में और नातियों में पूर्ण रीति से भरी हुई थी। पहले के तीन पेशवाओं का बर्ताव उसी पद्धति पर था। वे इस उद्देशको पूर्ण करने के लिए बराबर पचास वर्ष तक, अर्थात् पानीपत के घनघोर युद्ध तक, जुटे हुये थे। उन्होंने इस काम में सहायता देनेवाली नवीन मंडली तैयार की। प्रतिनिधि आदि कई सरदार लोग इस मत के विरुद्ध थे। परन्तु पेशवाओंके कर्तृत्व के आगे उन लोगों की कुछ नहीं चली।

२. मराठशाही का रूपान्तरः—मराठा वीरोंने अपना यह कर्तव्य निश्चय कर लिया कि हिन्दुस्थान का स्वामित्व हमे लेना है, साथ ही साथ इस काम के पूर्ण करने के साधनों की योजना भी उन्हें करनी पडी। शाहू बुद्धिमान् था। उसे पेशवाओं की विचारपद्धति पसन्द पडी। बालाजी विश्वनाथ का लडका बाजीराव शूर और कर्तृत्ववान् था, इस कारण शाहू ने बालाजी के बाद पेशवाई उसीको दी। वह मराठामंडल का नायक हुआ। कुछ मराठा सरदार बाजीराव के प्रतिकूल थे। इस लिए बाजीराव ने नवीन सरदार नियत किये। तथापि मराठा सरदारों में फूट बनी हुई थी। ऐसी दशामें पेशवा को मुख्यतः ये दो काम करने थे कि विरुद्ध पक्ष का बन्दोबस्त किया जाय और सारे देशभर में मराठों की सत्ता विस्तृत की जाय।

नवीन सरदार नियत करने का दूसरा एक यह कारण था कि, दिल्ली, मध्य-हिन्दुस्थान, मालवा, बंगाल, गुजरात, कोंकण, दक्षिण और कर्नाटक इत्यादि प्रान्तो में मुसलमानों के शेष घराने थोडे बहुत स्वतन्त्र राज्य का अनुभव करते थे। उन सबों का बन्दोबस्त किये बिना मराठाशाही का काम पूर्ण न हो सकता था। ऐसी दशामें प्रत्येक जगह के मुसलमान सरदारों पर अपना दबाव रखने के लिए पेशवा को पृथक् सरदारों की योजना करनी पडी। मध्य हिन्दु

स्थान में सेंधिया की स्थापना हुई। मालवे में पवार और होलकर रखे गये। बंगाल प्रान्त पर दबदबा रखने के लिए नागपुर में भोंसलों की योजना हुई। गुजरात में सेनापति दाभाडे और गायकवाड रहे। कोंकण में पश्चिमी देशों से आनेवाले नवीन साहसी लोगों और सीदियों का बन्दोबस्त आंगरे करते थे। निजाम का बन्दोबस्त पेशवा ने स्वयं अपनी ओर लिया। ठेठ दक्षिण में कुछ दिन भोंसलों की, बीच में घोरपडे की और अन्त में पटवर्धन की योजना हुई। इस प्रकार सारे हिन्दुस्थान पर मराठाशाही का राज्य स्थापन करने की नवीन युक्ति पेशवा ने निकाली। ग्वालियर, धार, इन्दोर, बडोदा, नागपुर, पूना, कुलाबा, सांगली, मिरज आदि जगहों में मराठाशाही की नवीन और भव्य राजधानियां उत्पन्न हुई। यह एक प्रकार का नवीन महाराष्ट्रमण्डल तैयार हुआ। इसके चालक पेशवा थे। कितनेही सरदारों पर पेशवाओंका प्रभाव नहीं जमा, और मराठामंडल में अन्तःकलहाग्नि आरंभ ही से जागृत थी।

२. अगले युद्धों की उपपत्तिः—उपर्युक्त विवेचन से यह मालूम हो जायगा कि मराठे सरदार इसके बाद किस हेतु से चले। कर्नाटक की चढाइयां, मालवा-बंगाल की चढाइयां, गुजरात कोंकण की चढाइयां, इन सबोंका हेतु एकही था। अगले पचास वर्षों में, और आगे भी, बंगाल, मालवा, अयोध्या, रुहेलखण्ड इत्यादि जगहों के मुसलमान अमलदारों से मराठे सरदार बराबर लड रहे थे। मुगल सूबेदारों के सिवा दूसरे कितनेही लोग भी मराठों के शत्रुवर्ग में शामिल हो गये थे। कोल्हापुरवाला संभाजी और सेनापति दाभाडे आदि लोग, शाहू अथवा पेशवाओं की शत्रुता के कारण, कभी कभी मराठामंडल के शत्रुओंसे जा मिलते। गोवावाले पोर्चुगीज समुद्र किनारे से मराठों की सत्ता में विघ्न उपस्थित करते। हिन्दुस्थानकी मिल्कियत और अपार सम्पत्ति के लोभ से तैमूर और बाबर की तरह नादिरशाह और अहमदशाह दुर्रानी आदि परदेश के साहसी राजपुरुष इस देश पर चढाइयां करते, उनका भी बन्दोबस्त मराठे लोगों को करना पडा। अर्थात् पेशवाओंको और मराठामंडल को ऐसा जान पडा कि गृहकलह, पाश्चात्य लोग, मुगल सूबेदार और वायव्यकी ओर से आनेवाले परदेशी लुटेरे राजा आदि सबोंसे बराबर टक्कर लगाये बिना हमारा हेतु पूर्ण नहीं होगा। यही उद्देश उन्हें अखीर तक बस हुआ। हिन्दुस्थान के और बहार के मुसल्मानों ने जब

यह देखा कि पचास वर्षों में मराठामंडल ने अपना अधिकांश उद्देश सिद्ध कर लिया तब उन सबों ने एकमत करके मराठों से एक बडा घनघोर और भयंकर संग्राम किया और मराठों की चढती हुई शक्ति को रोका। वही पानीपत का युद्ध है। पर इस एक युद्ध से मुसल्मानों की आशा सफल नहीं हुई।

४. बाजीराव पेशवा, (स. १७२०—१७४० ई.) बालाजी को दो लडके थे। बडा बाजीराव और छोटा चिमणाजी आप्पा । दोनों ने लडपन से अनेक युद्धप्रसंग देखे थे, और तत्कालीन राजनीति का उन्हें अच्छा ज्ञान हो गया था। वे स्वयं शूर और साहसी थे, इस कारण उन्हें सहायता करने के लिए नवीन सरदार आगे बढे राणोजी सेंधिया, मल्हारराव होलकर, उदाजी पवार, कंठाजी कदम, पिलाजी और दमाजी गायकवाड, पटवर्धन सरदार आदि लोगों ने मराठों का वीर्य-तेज हिन्दुस्थान की चारों दिशाओं में फैलाया।

तीन पक्षों के साथ बाजीराव को युद्ध करना पडा। एक स्वकीय मंडली अर्थात् कोल्हापुरवाले भोसले और दाभाडे का पक्ष; दूसरा निजाम और अन्य प्रान्तों के मुगल सूबेदारों का पक्ष; और तीसरा पोर्चुगीज आदि परकीय शत्रुओं का पक्ष। कोल्हापुरवालों में विशेष दम न रहा था, और उनका कोई अगुआ भी न था। परन्तु निजाम आदि से मिलकर वे शाहू और बाजीराव को सताया करते थे। अन्त में सन् १७३१ ई. में कोल्हापुरवालों से सदा के लिए शाहू की सुलह होगई और वह त्रास बन्द हुआ । कोल्हापुर राज्य के अधिकार और उसकी सीमा शाहू ने स्वतंत्र रीतिसे अलग कर दी।

सन् १७२९ में सेनापति खण्डेराव दाभाडे के मरनेपर उसका लडका त्रिम्बकराव बाजीराव के विरुद्ध चलने लगा। कभी कभी तो वह मराठों के शत्रु निजाम से संधान लगाता । इस कारण बाजीराव को उसका पराभव करना पडा। त्रिम्बकराव गुजरात में था। उस पर बाजीराव ने चढाई की। सन् १७३१ में डभई नामक मुकाम में घोर लडाई हुई। उसमें त्रिम्बकराव मारा गया। और उसके साथही सेनापति का माहात्म्य समाप्त हुआ । इसके बाद गुजरात में गायकवाड आगे बढे।

५. निजामुलमुल्क:—दूसरा पक्ष मुसलमान शत्रुओं का था । उनमें औरंगजेब के अखाडे में तैयार हुआ निजाम प्रमुख था । मुगलों के गिरते समय में राज्य का गूढ नीति जाननेवाला वही एक पुरुष था । औरंगजेब के

मरने पर दस पन्द्रह वर्ष तक मुगल बादशाही में अपने हाथ का जोर लगाकर उसे तारने का उसने बहुत ही प्रयत्न किया। दिल्लीमें सैयदों की प्रबलता तोडने के लिए निजाम ने दक्षिण में एक बडी फौज तयार की। सैयदों की तरफ से आलम अली नामक सर्दार उस पर चढ आया। बालाजी विश्वनाथ की सुलहसे सैयदों को मराठों की सहायता मिली। खंडेराव दाभाडे आलमअली की सहायता करने गया। बरार प्रान्त के बालापुर नामक मुकाम में निजाम और आलमअली का युद्ध हुआ। आलमअली मारा गया (सन् १७२० ई.)। मराठों की फौज में दमाजी गायकवाड नाम के सरदार ने विशेष पराक्रम दिखलाया; इस कारण सैयदों का पक्ष बहुत बचा। इस कर्तृत्व के बदले में शाहू ने दमाजी को दाभाडे का मददगार नियत करके 'समशेर बहादुर' का किताब दिया। दमाजीही गायकवाड घराने का संस्थापक है। बादको दमाजी शीघ्रही चलबसा और उसका काम उसका लडका पिलाजी करने लगा।

बालापुर की लडाई के बाद शीघ्रही सैयदों का खून हुआ और कुछ दिन तक निजाम दिल्ली में प्रमुख हो गया। जब उसे यह विश्वास हो गया कि अब बादशाही डूब जायगी तब वह इस इरादे से हैदराबाद की सूबेदारी पर, दिल्ली से दक्षिण में चला आया कि अन्य सरदारों की तरह अब मुझे भी स्वयं अपना कल्याण कर लेना चाहिए। इस विचार से उसने हैदराबादही में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया, (१७२२)।

चूंकि निजाम और मराठे दोनों अपने तौर पर राज्य कमाने की कोशिश में लगे हुए थे; इस लिए दोनों में गहरी दुश्मनी हो गई। यह दुश्मनी ठीक पौन सौ वर्ष तक बराबर जारी थी। मराठों के जमाने में इन युद्धों में उन्हीं को कामयाबी मिली। बाजीराव ने तो निजाम का अनेक बार अच्छी तरह पराभव किया। सन् १७२८ में पालखेड नामके मुकाम में निजाम का पराभव हुआ और मुंगी में सुलह ठहरी। सन् १७३१ में जब निजाम ने फिर भी दाभाडे से संधान लगाया तब उस पर मराठे सरदारों की चढाइयां शुरू हुईं और उन्हीं दिनों गुजरात, मालवा आदि प्रान्तों में सवारियां करके मराठे सरदार बादशाही का बहुतसा प्रान्त जीतते चले। तब बादशाह ने निजाम से प्रार्थना करके उसे मराठों का पराभव करने के लिए बुलाया। निजाम के लडके गाजिउद्दीन

को बादशाह ने मालवा और गुजरात की सूबेदारी दी, तब बाजीराव ने मराठे सरदारों को जमा करके भूपाल में निजाम का पूर्ण पराजय किया (१७३८)। तब से निजाम बिलकुलही हतवीर्य हो गया; और यद्यपि उसने मराठों की मित्रता नहीं सम्पादन की तथापि आगे फिर कई वर्ष तक उसने मराठों के कार्य में विघ्न उपस्थित नहीं किया । इसमें संदेह नहीं कि मराठे जब कित्ती संकट में पडते तब जरूर निजाम शिर उठाता । यह निजामुल्मुल्क सन् १८४८ में १०४ वर्ष का होकर परलोक सिधार । पश्चात् उसके लडकों में फूट होगई और अनेक झगडे हुए । उनका वर्णन आगे आवेगा ।

६. बाजीराव की अन्य चढाइयां और मृत्यु,-(सन् १७४०):— बाजीराव और उसके सरदारों ने मुगलों का बहुतसा राज्य जीत लिया । दिल्ली के बादशाह के दरबार में कुछ भी इन्तिजाम न था, इस कारण भिन्न भिन्न प्रान्तों के सूबेदारों का कोई उपाय न चलता था । बारबार उनकी बदलियां होतीं थीं । सर बुलन्दखां जोर मारवाड का राजा अभयसिंह एक के पीछे एक सूबेदार मुकर्रर होकर गुजरात में आये । दोनों का पराभव करके मराठों ने गुजरात प्रान्त जीत लिया। मालवे में राजा गिरिधर और मुहम्मदखां बंगश का पराभव हुआ और वह प्रान्त मराठों के कब्जे में आगया । बुन्देलखंड में छत्रसाल राजा को मदद करने के बदल में वहां भी बहुतसा राज्य बाजीराव को प्राप्त हुआ । कोंकण में आंगरे ने सीदियों को युद्ध में पराजित किया । सन् १७३९ में चिमणाजी आप्पाने पोर्चुगीजों से वसई ले लिया और उत्तरकोंकण जीत लिया । पूर्व में वरार और नागपुर के प्रान्त भोसलों ने ले लिये और बंगाल का बहुतसा प्रान्त अपने अधिकार में कर लिया । इन्हीं भोसलों ने कर्नाटक पर चढाई करके वह प्रान्त भी जीत लिया । सारांश, मुगलों की सत्ता का चारों ओर पराभव हुआ और मराठों की सर्वत्र जय हुई । बाजीराव को और उसके प्राणोंपर प्राण देनेवाले उसके अनेक साथियों को इस सारे पराक्रम का श्रेय देना चाहिये । सन १७३९ में जब नादिरशाह ने दिल्लीपर धावा किया तब उस का पराभव करने के लिये बाजीराव दक्षिण से निकला । इतनेही में उसने सुना की नादिरशहा लौट गया तब बाजीराव ने निजामुलमुल्क के लडके नासिरजंग पर चढाई की; पर उससे कुछ फायदा नहीं हुआ । उत्तर हिन्दुस्थान पर बहत बडी चढाई करके बहुत साधन लाने के उद्देश से बाजीराव ने एक बडी फौज जमा की । उस फौज के साथ जब कि वह उत्तर की ओर जा रहा

था तब मार्ग में सन् १७४० ईसवी के एप्रिल महीने में नर्मदा तीर पर, उसका अन्त हो गया।

बाजीराव की योग्यता उसके पराक्रम से देख पडती है। मराठाशाही में जो अनेक शूर पुरुष उपजे, उनमें बाजीराव प्रमुख है। वह अपने नीचे के सरदारों को बहुत चाहता था। और उन्हें उत्तेजन देकर आगे बढाता भी था। उनके शौर्य का वह मत्सर न करता; किन्तु गौरव करता था। सेंधिया, होलकर, गायकवाड, विन्चूरकर, पवार, कदम, बांडे इत्यादि प्रमुख मराठे सर्दारों का उदय बाजीराव के समय में हुआ। बाजीराव के समय से पूना पेशवाओं के रहने का मुकाम हुआ। शनिवार का वाडा (महल) बाजीराव ने ही बनवाया। लडाइयों के कारण बाजीराव कर्जदार हो गया था, इस लिए अन्त में वह बडी अडचण में पड गया था।

पाठ नववाँ।

छत्रपति शाहू और रामराजा।

पेशवा बालाजी बाजीराव।

सन् १७४०–१७६१।

१. बालाजी बाजीराव। २, अन्तःकलह और शाहू की मृत्यु।
३. मराठेशाही की पराकाष्ठा की उन्नति। ४. पानीपत का घनघोर युद्ध।

१. बालाजी बाजीराव, (सन् १७४०–१७६१):—बाजीराव के तीन लडके थे, बालाजी, रघुनाथराव और जनार्दनपन्त। इनमें से अन्त का बचपन ही में चल बसा। बाजीराव के मरने पर चिमणाजी आप्पा बालाजी को साथ लेकर सितारे गया। वहां नागपुरवाले रघुजी भोसले आदि कितने ही लोगों ने यह प्रयत्न किया कि पेशवाई पद बालाजी को न दिया जाय। किन्तु बारामतीवाले बाबूजी नाईक नामक श्रीमान् पुरुष को दिया जाय। पर उनका यह प्रयत्न सिद्ध नहीं हुआ, और शाहू ने पेशवाई के वस्त्र बालाजी ही को दिये। पेशवा बालाजीराव में पिता का शौर्य और आजा की गूढ राजनीतिज्ञता दोनों गुण थे। उन गुणों का उपयोग करके उसने अपने पुरुषों के चलाये हुए कार्यक्रम को आगे बढाया; तथा मराठाशाही का, पेशवाओं को और अपने

घराने का महत्त्व उसने बहुत बढाया । इस काम में उसे अपने भाई रघुनाथराव दादा और चिमणाजी आप्पा के पुत्र सदाशिवराव भाऊ से बहुत मदद मिली । उनमेंसे, रघुनाथराव भावी मराठशाही के इतिहास में प्रमुख पुरुष है । चिमणाजी आप्पा बाजीराव के बाद शीघ्रही परलोक सिधारा, (सन् १७४०) । उसका लडका सदाशिवराव भाऊ भी पराक्रमी था, और पानीपत के संग्राम से उसका नाम मराठों के इतिहास में चिरस्मरणीय हो गया है । बालाजी पेशवा को नाना साहब भी कहते थे । जिस समय बालाजी बाजीराव पेशवाई का कारबार करने लगा उस समय दिल्ली की बादशाही बहुत कुछ टूट आई थी । भरतपुर के जाट, पंजाब के सिक्ख, अफगान-सरदार रुहेले और रजपूत राजा न्यूनाधिक स्वतंत्र हुए थे । और उन सबों पर मराठे अपना प्रभाव जमा रहे थे । दक्षिण में तंजोरवाले घोरपडे, रघूजी भोसले इत्यादि मराठे सरदारों ने कर्नाटकका बहुत सा प्रान्त ले लिया था । रघूजी भोसला का बहुत सामर्थ्य बढ गया था, और उसने अपने दीवान भास्करपंत की मदद से बंगाल प्रान्त के सूबेदार अलीवर्दीखां से वह प्रान्त जीत लिया था । गुजरात में गायकवाड ने अपनी सत्ता बहुत बढा ली थी । ऐसी दशा में बालाजी को दो मुख्य काम करने थे । पहला, मराठों के पराक्रम की पराकाष्ठा करके मुसल्मानों की सत्ता को बिलकुल नष्ट करना; और दुसरा नागपुरवाले भोसलों के समान प्रबल होनेवाले सरदारों को अपने कबजेमें रख कर मराठा राज्य का सरल और सदा के लिए प्रबन्ध कर देना । इनमें से पहले काम में जोर पहुँचाने के प्रयत्न में ही पानीपत का संग्राम आ पडा और इसी कारण दूसरे काम में जोर लगाना कठिन हो गया ।

२. अंतःकलह और शाहू की मृत्यु, (सन् १७४९):—बालाजीराव पेशवा का पहला प्रतिपक्षी नागपुर का रघूजी भोसला था । वह सदा पेशवाओंके विरुद्ध वर्ताव करता था । सन् १७४२ ई. में पेशवा ने उत्तर हिन्दुस्थान में काशी तक चढाई की । उसी चढाई में उसने रघूजी के शत्रु अलीवर्दीखां की तरफ से भोसले पर धावा करा कर उसे शिकस्त किया । बादको शाहूने दोनों के हक्कों का बाँट करके आपस में मेल कर दिया ।

पेशवा के विरुद्ध पक्ष में दुसरे सरदार प्रतिनिधि, आंगरे और गायकवाड थे । ये भी नागपुरवाले भोसलों की तरह अपने को पेशवाओं से पुराने समझते । इस कारण वे कभी पेशवाओं के वश में नहीं हुए । शस्त्र के जोर से दब कर वे कभी पेशवाओं के शरण आते; पर मौका मिलने पर फिर विरुद्ध होकर

चलते। आंगरों के कुटुम्ब में गृहकलह होने के कारण, और प्रतिनिधि के हाथ में बहुतसा जोर न होने के कारण, उनकी ओर से पेशवाओं को विशेष अड़चन नहीं हुई। हां, गायकवाड ने जरूर बहुत सी कार्रवाइयां कीं। सन् १७४८ में शाहू छत्रपति बीमार पड़ा। उसके लड़का न होने के कारण अगली व्यवस्था के लिए गुप्त कार्रवाइयां शुरू हुई। अन्त में, सन् १७४९ ई. में, शाहू यह बन्दोबस्त कर के परलोक सिधारा कि ताराबाई के नाती रामराजा को दत्तक लेकर राज्य किया जाय, और लोकाचार में राजा का मान रख कर पेशवा राज्य का सब कारबार करें। ताराबाई चाहती थी कि रामराजा को अपने कब्जे में रखकर मैं सब कारबार करूं। पर रामराजा में कुछ भी कर्तृत्व शक्ति नहीं थी, इस लिए ताराबाई ने अपनी मदद के लिए गायकवाड को फौज सहित सितारे बुलाया। परन्तु गायकवाड के आते ही पेशवा ने उसे पराजित करके कैद कर लिया। दो वर्ष बाद, कुछ शर्तें कबूल करने पर, वहां से वह मुक्त हुआ। वृद्ध ताराबाई अनेक यत्न कर के और पानीपत में पेशवा का पराभव हो जाने पर सन् १७६१ में परलोक सिधारी। यह स्त्री होशियार, गूढ राजनीतिज्ञ और कर्तृत्ववाली थी। तथापि दुराग्रही होने के कारण सब को सन्तुष्ट रखकर वह राज काज नहीं कर सकी।

शाहू राजा की मृत्यु से मराठाशाही में बड़ा रूपान्तर होगया। राज्य की सब सत्ता और जबाबदारी पेशवाओं के हाथ में आगई। चूंकि पेशवा लोग पूना शहर में रहने लगे थे; इस लिए आगे से सब राजकाज वहीं होने लगा।

३. मराठेशाही की पराकाष्ठा की उन्नतिः—मुसल्मानों का पराभव करना बालाजी के शासन-काल की दूसरी मुख्य बात है। स्वयं बालाजी और उसके चचेरे भाई सदाशिवराव ने कर्नाटक, मैसूर आदि प्रदेशों में अनेक बार चढ़ाई करके ये प्रान्त जीत लिये। रघुनाथराव दादा; मल्हारराव होलकर जयाप्पा दत्ताजी आदि राणोजी सेंधिया के पराक्रमी लड़के; विट्ठल शिवदेव विंचूरकर, इत्यादि सरदारों ने नर्मदा के पार चढ़ाई करके ठेट हिमालय की तराई तक बहुत सा मुल्क ले लिया। निजामुल्मुल्क का बड़ा लड़का गाजिउद्दीन और गाजिउद्दीन का लड़का मीरशहाबुद्दीन (जो आगे चलकर अपने को गाजिउद्दीन ही कहलाने लगा) दिल्ली में बादशाह के मुख्य कारबारी थे। उन्हें मराठों का सहारा था। इन दोनों गाजिउद्दीनों की मार्फत उपर्युक्त मराठे सर-

दारों ने दिल्ली को हस्तगत करके बादशाही के सब सूत्र अपने हाथ में ले लिये । ऐसी कार्रवाइयों से दिल्ली में मराठाशाही स्थापन होने का अनुमान होने लगा । भरतपुर में जाट नाम के शूर हिन्दू लोगों का राज्य था । उनका राजा सूरजमल जाट बादशाही के उतरते काल में अच्छा सत्ताधीश हो गया था । मल्हारराव होलकर ने जाटों का बहुतसा मुल्क जीत लिया, वैसे ही सेंधियाने बहुत से राजपूत राज्य जीत लिये । बाद को रुहेलखंड और पंजाब प्रान्त भी मराठों के हाथ में आगये और रघुनाथराव ने मराठों का भगवाँ झंडा अटक पर जाकर खडा कर दिया ।

दक्षिण में निजाम से भी मराठों को कई बार युद्ध करना पडा; पर हर एक युद्ध में उसे मराठों के सामने हारही खानी पडी । सन् १७५२ में भालकी की लडाई में निजाम का पराभव हुआ । वैसे ही सन् १७६० में उदगीर की लडाई में सदाशिवराव ने निजाम का पूर्ण पराभव किया, और उसकी बहुतसी सत्ता कम कर दी ।

सारांश, बालाजीराव के बीस वर्षों के शासन में मराठों की सत्ता पराकाष्ठा को पहुँच गई ।

४. पानीपत का घनघोर युद्ध (सन् १७५९-१७६१ ईसवी):—मराठे सब देश को अपने अधिकार में करते चले, यह बात मुसल्मानों को नहीं रुची। तब उत्तर ओर के सब मुसल्मानों ने मराठों के विरुद्ध एक जबरदस्त मसलहत की । उस समय हिन्दु-मुसल्मानों का भारी झगडा शुरू हुआ । अफगानिस्तान का अहमदशाह दुर्रानी उन दिनों हिन्दुस्थान पर चढाइयां कर रहा था, उसमें रुहेलों का कर्तृत्वान् सर्दार नजीबखां शामिल हो गया । नजीबखां ने बहुत भारी प्रयत्न करके अहमदशाह और दूसरे मुसल्मानों को मराठों से लडने के लिए एकत्र किया । मराठे सर्दार उसी समय उनका बन्दोबस्त नहीं कर सके । सन् १७५९ में अहमदशाह हिन्दुस्थान पर आया । यमुना किनारे-दत्ताजी सेंधिया के साथ उसका युद्ध हुआ । उसमें दत्ताजी सेंधिया काम आया और उसकी बहुतसी फौज दुर्रानी ने काट डाली ।

यह हाल जब पूने में पेशवा को मालूम हुआ तब उसने मुसल्मानों से अन्तिम सामना करने के लिए तैयारी की, और दक्षिण के सब मराठे सर्दारों को युद्ध के लिए बुलाया । करीब दो लाख आदमी एकत्र हुए । अभी तक

उत्तर की ओर जितनी चढाइयां हुई थीं उनका आधिपत्य राघोबादादा की तरफ था । पर उन चढाइयों में राघोबा बहुत कर्जी होगया, इस कारण इस वार उसे लडाई पर न भेजकर पेशवा ने इस युद्ध पर सदाशिवराव की योजना की, और उसे उत्तर हिन्दुस्थान में दुर्रानी को पराजित करने के लिए रवाना कर दिया ।

सन् १७६० में उद्गीर की लडाई में निजाम का पराभव करने पर, सदाशिवराव भाऊ जंगी फोज और तोपखाना लेकर दुर्रानी को पराजित करने के लिए उत्तर हिन्दुस्थान को गया । वहां उसने अपने दुराग्रही वर्ताव से बहुत से सर्दारों का मन दुखाया । मुसल्मानों की अपेक्षा मराठों की तैयारी अच्छी थी । पर सदाशिवराव ने युद्धसम्बन्धी कई गलतियां कीं । दुर्रानी के लोगों को गिलजे अथवा अब्दाली कहते थे । सदाशिवराव ने गिलजों को रोका नहीं; किन्तु दक्षिण की ओर आने दिया, और स्वयं उनके उत्तर ओर जाकर पानीपत में, चारों ओर खन्दक खोदकर और वृक्षों आदि से आने की रस्ता बन्द कर के पडा रहा । यह बन्दोबस्त करने पर दूसरे सरदार कहते थे कि अब शत्रुओं पर एकदम हल्ला करना चाहिए; पर उसने उनकी यह सलाह नहीं मानी । दो लाख सेना बहुत दिनों तक एक जगह घिरी रहने के कारण अन्न का दुष्काल पड गया । तथापि सन् १७६० के अन्त में दो भारी लडाइयों में मुसल्मानों ही का पराभव हुआ । पर उससे कुछ लाभ नहीं हुआ । अन्न खतम होजाने के कारण ईश्वर पर भरोसा रखकर, शत्रुओं पर एकदम टूट पडने के शिवाय और कोई उपाय न था । अखीर में १४ जनवरी सन् १७६१ के दिन प्रातःकाल अन्तिम और घोर संग्राम शुरू हुआ । उसमें भी तीसरे प्रहर तक मराठों ही की जीत थी । पर ज्योंही यह समाचार सुना गया कि पेशवा का बडा लडका विश्वासराव गोली से मारा गया व त्योंही सदाशिवराव ने एक ऐसा बर्ताव किया कि जो सेनानायक के लिए बिलकुल अनुचित था । अर्थात् वह एकदम धैर्य छोडकर निराशा से लडाई की भीड में घुस गया । बाद को उसका पता नहीं लगा । सेनापति के अदृश्य होतेही अन्य लोग घवडा कर भगने लगे । पर भगने के लिए मार्ग न होनेके कारण वे तुरन्त ही मुसल्मानों के पंजे में फँस कर काट डाले गये । इस प्रकार अन्त के दिन में मुसल्मानों ही की जीत रही ।

हिन्दुस्थान के राष्ट्रीय इतिहास में पानीपत का यह युद्ध विशेष महत्त्व का है । मराठों की एक पीढी उसमें काट डाली गई । ऐसा एक भी घर दक्षिण में

नहीं रहा, जिसका कोई न कोई पुरुष लडाई में न काम आया हो । गोविन्दपंत बुन्देले, बलवन्तराव मेहँदले, इब्राहीमखां गारदी, जनकोजी सेंधिया आदि सब पराक्रमी सरदार मारे गये । दमाजी गायकवाड, मल्हारराव होलकर, विठ्ठल शिवदेव विंचूरकर, आदि बहुत ही थोडे सरदार जीते हुए वापस आये ।

बाद को बालाजीराव, इस धक्के के कारण, शीघ्रही परलोकवासी हुआ । मराठों की सत्ता की उतरती कला शुरू हुई । मुसल्मानों का भी इस जीत से कोई फायदा नहीं हुआ । दो वर्ष के घोर युद्धप्रसंगों में उनके भी बहुत से आदमी मारे गये । अहमदशाह फिर कभी हिंदुस्थान में आया भी नहीं ।

बालाजीराव ने राज्यकी अन्तर्व्यवस्था का बहुतसा काम किया । वसूल, न्याय, हिसाब इत्यादि खातों की व्यवस्था लगा कर सुधार किया । उसी प्रकार खेती आदि का सुधार कर के प्रजा का उत्कर्ष करने की तरफ पेशवा ने बहुत ध्यान दिया ।

पाठ दसवाँ.

छत्रपति रामराजा ।

पेशवा माधवराव और नारायणराव ।

सन् १७६१-१७७५ ।

१. बडा माधवराव पेशवा । २. माधवराव का कर्तृत्त्व ।
३. नारायणराव का वध । ४. मराठेशाही में अँगरेजों का प्रवेश ।

१. बडा माधवराव पेशवा (सन् १७६१-७२):—पानीपत के युद्ध से मराठेशाही का सौभाग्य-काल समाप्त हुआ । सन् १६७४ में शिवाजी ने राज्य स्थापित किया, तब से सन् १७६१ तक, करीब सौ वर्ष, मराठों ने स्वतन्त्रता का उपभोग करके मुसलमानों की सत्ता कम कर दी । इसके बाद मे स्वयं किस प्रकार हारे सो बतलाना है । आगे चलकर जो दो पुरुष बहुत प्रसिद्ध हुए वे पानीपत की कतल से बच आये थे । एक शूर सिपाही महादजी सेंधिया और दूसरा चतुर राजनीतिज्ञ नाना फडनवीस । इन्हों ने

पानीपत का बहुतसा नुकसान पूरा किया, और आगे तीस चालीस वर्ष तक मराठेशाही का संरक्षण किया।

बालाजीराव के तीन लडके थेः—विश्वासराव; माधवराव और नारायणराव। विश्वासराव पानीपत की लडाई में धाराशायी हुआ। इस लिए बालाजीराव के बाद पेशवाई की पोशाक माधवराव को मिली। उस समय उसकी उम्र १६ वर्ष की थी। इस लिए सब कारबार उसका चाचा राघोबादादा देखने लगा। नवीन पेशवा यद्यपि अल्पवयी था तथापि गत दस वर्षों में राज्य के बनावबिगाड उसने अच्छी तरह अवलोकन किये थे। उसकी बुद्धि सरल और तीव्र थी; इस कारण उसमें यह चतुरता थी कि, वह पानीपत के अरिष्ट के कारण ढूंढ निकाले और आजतक की गलतियों को सुधार कर मराठेशाही का अगला बन्दोबस्त निश्चित करे। परन्तु उसके आगे अडचनें बहुत थीं, राघोबादादा से उसकी बहुत दिन नहीं पटी। अपने चाचा राघोबा के हाथ में सारा कारबार सौंप कर स्वयं चुप के बैठना उसे पसन्द नहीं आया। इस कारण दरबार में दो पक्ष हो गये। चाचा के पक्ष की ओर सखाराम बापू बोकील होशियार राजनीतिज्ञ था। निजाम का दीवान विट्ठल सुन्दर, नागपुर वाले भोसलों का दीवान देवाजीपन्त चोरघोडे और सखाराम बापू ये तीन सयाने और नाना फडनवीस आधा सयाना—मिल कर पेशवाई के "साढे तीन सयाने" प्रसिद्ध हैं। परिणाम देख कर यदि फैसिला किया जाय तो उन सब में नाना फडनवीस ही श्रेष्ठ ठहरेगा। सखाराम बापू बडा धूर्त कर्तृत्ववान् था; पर वह पहले ही से राघोबा के पक्ष का था। राघोबादादा ने निजाम और भोसलों के साथ बडी भारी कारवाई शुरू की। अन्त में माधवराव पेशवा ने बडी युक्ति से उनका समाधान किया। तथापि अन्त में माधवराव राघोबादादा को प्रतिबन्ध में रखने के लिए लाचार हुआ। राघोबादादा शूर था। वह भतीजे की हुकूमत नहीं सह सका।

२. माधवराव का कर्तृत्वः—माधवराव ने अपने शासन-काल में तीन बडे काम किये। १ स्वकीय सर्दारों का बन्दोबस्त उदार अन्तःकरण से किया और उनमें एकता की; २ पानीपत के युद्ध के बाद मराठों के जिन शत्रुओं ने शिर उठाया था उनका पराभव कर के पानीपत का बहुतसा नुकसान

पूरा किया; और ३ राजकारबार का और भिन्न भिन्न विभागों का अच्छा प्रबन्ध कर दिया ।

स्वकीय सरदारों का बन्दोबस्त करने में, इस तरुण पेशवा ने उन्हें ऐसा विश्वास कर दिया कि यह राज्य सब का है; सब को एकता के साथ उसका संरक्षण करना चाहिए । सेंधिया की रियासत पर महादजी को नियत किया । मल्हारराव होलकर सन् १७६५ में मर गया, उसकी रियासत का कारबार मल्हारराव की पुतोहू अहल्याबाई को दिया गया । उसके मालेराव नाम का एक अप्रबुद्ध लडका था; वह शीघ्र ही मर गया । बाद को तुकोजी होलकर नाम के होलकरों के एक आप्त पुरुष की मदद से अहल्याबाई ने राज्य का कारबार किया; वह लोगों को इतना सुखदायक हुआ कि, अहल्याबाई का नाम सारे हिन्दुस्थान में आबालवृद्ध पुरुषों के मुख में रहने लगा । नागपुरवाले भोसलों से सुलह कर के पेशवाने उन्हें भी सन्तुष्ट किया । ये सब बातें करते हुए उसने सरदारों की रियासत की अभिलाषा नहीं रखी । जागीर की पद्धति तोडना असम्भव था; इस लिए जो पद्धति जारी थी उसमें उचित फेरफार करके उसने सब का स्नेह सम्पादन किया । हरिपंत फडके और नाना फडनवीस उसके दो मुख्य मन्त्री थे । दक्षिण–महाराष्ट्र में उसने पटवर्धन–मंडली की स्थापना की ।

दूसरा काम शत्रुओं के बन्दोबस्त का था । वह उसके सर्दारों ने अच्छी तरह पूर्ण किया । उसने सन् १७६३ में राक्षसभुवन में निजाम का पराभव किया । इस लढाई को तांदुलजा की लढाई कहते हैं । इसमें निजाम का दीवान विट्ठल सुन्दर मारा गया । यह लढाई मराठों ने स्वयं माधवराव के शौर्य से ही जीती । निजाम का बन्दोबस्त करके पेशवा ने कर्नाटक प्रान्त पर चढाइयां कीं और उसे हस्तगत कर लिया । उस समय विशेषतः मैसूर प्रान्त में हैदरअली नाम का मुसल्मान सरदार प्रबल हो गया था; उस पर दो तीन सवारियां कर के माधवराव ने उसका बन्दोबस्त किया । सन् १७६५ में रघुनाथराव ने उत्तर में चढाई कर के राजपूतों और जाठों से अपने हक्क वसूल किये । सन १७६९ में दूसरी बडी चढाई उत्तर हिन्दुस्थान पर हुई । उसमें सेंधिया, हुलकर और रामचन्द्र गणेश कानडे मुख्य सरदार थे । उन्होंनें रुहेलखण्ड जीत कर नजीबखाँ से बदला लिया; और दिल्ली पर अधिकार कर के शाहआलम बादशाह को

बंगाल से लाकर तख्त पर बैठाया। पानीपत में हारा हुआ कुछ माल असवाब उस समय मराठों ने लौटा लिया।

इतना सब हुआ तोभी मराठेशाही के ग्रह अच्छे न थे। दुर्दैव से माधवराव पेशवा क्षयरोग में बीमार पड़ा और नवम्बर सन् १७७२ में, अट्ठाईस वर्ष की अवस्था में, थेऊर नामक मुकाम में, परलोक सिधारा। उसकी पत्नी रमाबाई सती हो गई। यह पेशवा यदि अल्पायुषी न हुआ होता तो मराठेशाही बहुत ही चिरस्थायी हुई होती। माधवराव पेशवा अत्यन्त निष्पक्षपाती था। न्याय के काम में वह किसीकी परवा न करता। वह गर्म स्वभाव का था; इस कारण उसकी विलक्षण धाक थी। वैसे ही न्यायी और सच्चरित्र होने के कारण सब लोगों पर उसकी अच्छी धाक बैठ गई थी। जो कोई उसका हुक्म तोड़ता उसे बहुत कडी सजा दी जाती। नवीन नियम और कायदे बना कर उसने राज्य का अच्छा प्रबन्ध कर दिया। उसके दरबार में रामशास्त्री प्रभुणे मुख्य न्यायाधीश का काम करता था। रामशास्त्री का बर्ताव इतना चोखा था कि, उसके विषय में आज तक महाराष्ट्र में अत्यन्त पूज्यभाव कायम है।

माधवराव की अकालिक मृत्यु से राज्य में जो बखेडे हुए, उनके कारण, दस पन्द्रह वर्ष तक दिल्ली के कारबार में ध्यान देने का औसर मराठों को नहीं मिला।

३. नारायणराव पेशवा का वध, (अगस्त सन् १७७३):—माधवराव के लडका न था। इस लिए मरते समय उसने राघोबा दादा, नाना फडनवीस और सखाराम बापू आदि को बुला कर नम्रतापूर्वक कहा कि, नारायणराव को पेशवा बना कर, सब लोग मिल कर राज्य करें। यह बात राघोबा ने कबूल की थी। उसके अनुसार नारायणराव को पेशवाई के वस्त्र मिले। नारायणराव माधवराव के समान होशियार न था। वह हठी था और मन मिला कर न रहता था। जब राघोबा से उसकी अनबन हो गई तब उसने उसे प्रतिबन्ध में रखा। नारायणराव की मा गोपिकाबाई और राघोबा की स्त्री आनन्दीबाई में भी अनबन थी। ये दोनों स्त्रियां धूर्त थीं। उन्होंने महल में नाना प्रकार की कारंसाइयां शुरू कीं। उनमें आनन्दीबाई ने गारदियों की सहायता से सन् १७७३ के अगस्त महीने में, शनिवार वाडे में, नारायणराव का खून कराया। इस भयंकर अत्याचार से मराठेशाही की आयु पूर्ण हो गई।

बाद को राघोबादादा पेशवा हुआ । पर दरबारी लोगों को राघोबा बिलकुल पसन्द न था । नाना फड़नवीस आदि दरबारीयों ने एक गुप्त कारवाई कर के राघोबा को पदच्यूत करने का विचार किया । इस कारवाई को "बारभाई का कारस्थान"—बारह दरबारियों की की हुई काररवाई—कहते हैं । उसमें नाना फडनवीस, सखाराम बापू , हरीपंत फडके, त्रिंबकराव मामा पेठे, और बिताजी कृष्ण विनीवाले आदि पुरुष प्रमुख थे । नारायणराव की स्त्री गंगाबाई गर्भवती थी । उसके नाम से पेशवाई चलाने का विचार बारभाइयों ने निश्चित किया ।

४. मराठेशाही में अँगरेजों का प्रवेशः—पेशवाई के ये गडबड सुन कर निजाम और हैदरअली आदि शत्रुओं को अच्छा अवसर मिला । जब उनका बन्दोबस्त करने के लिए राघोबा निकला तब उसके साथ बारभाइयों में से हरिपंत फडके और त्रिम्बकराव पेठे उसे धोखा देकर परास्त करने की गरज से लढाईपर गये । मौका देखकर उन्होनें राघोबा पर शस्त्र चलाया । त्रिम्बकराव लढाई में मारा गया । परन्तु हरिपंत ने राघोबा का पराभव किया, तब वह मालवा की ओर भग गया । वहां जब सेंधिया और होलकर ने भी उसकी मदद न की तब वह गुजरात को गया । रास्ते में धार के किले में उसकी स्त्री आनन्दीबाई से लडका पैदा हुआ, (सन् १७७४) । वही दूसरा बाजीराव है । गुजरात में सेंधिया, होलकर और फडके, राघोबा पीछा करते हुए आये । तब राघोबा सूरत में अँगरेजों के पास गया और पेशवाई लौटा लेनें के लिए उनसे मदद मांगी, (सन् १७७५) ।

इधर गंगाबाई के लडका पैदा हुआ । उसका नाम सवाई माधवराव रख गया, और उसके नाम से दरबारी लोग पेशवाई के वस्त्र रामराजा के पास से लें आये और उसीके नाम से राजकाज शुरू किया । इन दरबारियों में नाना फडनवीस मुख्य था । अगले पन्द्रह बीस वर्ष के शासन में नाना फडनवीसही का नाम प्रमुख जानना चाहिए । छत्रपति रामराजा सन् १७७७ में परलोक सिधारा और उसका लडका दूसरा शाहू सितारे में राज्य करने लगा ।

अँगरेजों के पास राघोबा के शरण लेने के कारण एक नवीन ही रूप खड़ा हो गया । जब मराठे पानीपत में फँसे हुए थे तब बंगाल और कर्नाटक में अँगरेजों का बहुत प्रवेश हो गया था । वे मराठेशाही में घुसने का मौका ही ताक रहे थे । बडे माधवराव के पास उनका वकील भी आया था । मराठों ने

शाहआलम बादशाह को अपने कब्जे में कर लिया था; यह बात उन्हें नहीं अच्छी लगी। अन्त में राघोबा ने मदद मांगी; इस कारण मराठों और अँगरेजों का युद्ध ठन गया। उसे अँगरेजों का "मराठों से पहला युद्ध" नाम दिया गया है।

पाठ ग्यारहवां।

छत्रपति दूसरा शाहू,—सवाई माधवराव पेशवा।

सन् १७७४—सन् १७९५।

१. अँगरेज और मराठों का पहला युद्ध। २. सवाई माधवराव। ३. महादजी की उत्तर में चढ़ाई। ४. खर्डा की लड़ाई। ५. सवाई माधवराव और प्रमुख पुरुषों की मृत्यु।

१. अँगरेज और मराठों का पहला युद्ध, (सन् १७७२–१७८२):- राघोबा अँगरेजों से मदद मांगने सूरत गया। वहां बम्बईवाले अंगरेजों से उसकी सुलह ठहरी; उसे सूरत की सुलह कहते हैं, (सन् १७७५)। उसकी शर्तें ये हैं:—१ अँगरेज २००० फौज के साथ राघोबा को मदद दें; २ उसके खर्च के लिए डेढ़ लाख रुपये मासिक राघोबा दे, ३ साष्टी, वसई आदि बम्बई के पासवाले थाने और भड़ोच, सूरत आदि परगने मिलकर १९ लाख का मुल्क वह अँगरेजों को दे। इस सुलह के अनुसार अँगरेजों ने कर्नल कीटिंग को राघोबा की मदद के लिए गुजरात भेजा। आरास में हरिपन्त फड़के और अँगरेजों का युद्ध हुआ। हरिपन्त का पराभव हुआ, (सन् १७७५) और वह पूने को लौट गया। बरसात के सबब राघोबा गुजरात में ही रहा।

बम्बईवाले अँगरेजों ने राघोबा के साथ जो यह सुलह की वह कलकत्ते के गवर्नर जनरल वॉरन हेस्टिंगज और उसकी कौंसिल को नहीं पसन्द हुई। सब प्रदेश पर हुकूमत करने और सुलह तथा युद्ध करने का अधिकार गवर्नर जनरल को हाल ही में मिला था; उसके अनुसार वारन हेस्टिंग्ज ने सूरत की सुलह अस्वीकार के, पूना दरबार से दूसरी सुलह करने के लिए कर्नल आप्टन को भेजा; और मराठों से जो युद्ध जारी था उसे बन्द करने के लिए बंबई

वाले अंगरेजों को हुक्म भेजा। कर्नल आप्टन ने पुरन्दर नामक मुकाम में पूना दरबार से सुलह की, (सन् १७७६)। वह इस प्रकार है:—१ सूरत का सुलहनामा रद्द समझा जाय; २ रायोबा को अँगरेज मदद न करें; ३ वह २५००० रुपये मासिक लेकर चुप बैठे; ४ इसके बदले पूना-दरबार अंगरेजों को साष्टी आदि थानें और बारह लाख रुपये दे।

वारन हेस्टिंग्ज का यह कृत्य बम्बईवालों को नहीं अच्छा लगा, और रायोबा को आश्रय देकर, उन्होंने सूरत की सुलह कायम रखने के लिए विलायत को लिखा। वहां से सूरत वाले सुलाहनामे के लिए शीघ्र ही मंजूरी आ गई; और फिर युद्ध शुरू हुआ। वास्तव में यह युद्ध रायोबा और नवीन पेशवा सवाई माधवराव में था। सब मराठे सरदार पेशवे की तरफ थे; वैसे ही मैसूर के हैदरअली और फ्रेंच लोगों से भी मराठे लोग संधान लगा रहे थे। इस युद्ध की पहली मुहिम गुजरात में हुई, वह ऊपर बतलाई गई है। दूसरी मुहिम सन १७७९ में, बरसात बाद हुई। उसका मुखिया कर्नल ईगर्टन था; और सुलह आदि ठहराने के लिए मि० कर्नाक भी फौज के साथ था। रायोबा को लेकर खंडाले के घाट से अंगरेजी फौज पूने पर आने लगी। उसपर पूने से मराठी फौज चढ धाई। कार्ले में छोटी सी लडाई हुई और कप्तान स्टुअर्ट (जिसे मराठे इस्टुर फांकडा कहते हैं) मारा गया। इस युद्ध में अँगरेजों का पराजय हुआ और वे बडगाँव में छावनी डाल कर पडे रहे। उसी जगह सेंधिया की मध्यस्थि से अँगरेज और मराठों में सुलह ठहरी; उसकी शर्तें इस प्रकार हैं:—१ अँगरेज रायोबा को सेंधिया के अधिकार में कर दें; २ उन्होंने मराठों के जो थाने जीत लिये हैं वे सब लौटा दें; और मराठे अँगरेजों को कुशलपूर्वक लौट जाने दें। इसके अनुसार रायोबा को सेंधिया के हवाले कर के अँगरेजी फौज कुशल से बम्बई लौट गई। इधर रायोबा भग कर फिर सूरत गया। उसे जनरल गाडर्ड ने मदद दी। फतेसिंह गायकवाड भी उन्हीं में मिल गया। इन तीनों ने मिलकर अहमदाबाद ले लिया और सेंधिया तथा होलकर का पराभव किया, (सन् १७८०)। यह तीसरी मुहिम है। उत्तर ओर मेजर पोफेम ने सेंधिया का ग्वालियर का मजबूत किला ले लिया, (सन् १७८०)। यह इस युद्ध की चौथी मुहिम हुई।

नानाफडनवीस का चातुर्य इस युद्ध में खूब देख पडा। उसके चचेरा भाई मोरोबा दादा ने नाना के विरुद्ध बडी भारी कारवाई की; पर नाना ने बडी

सावधानी के साथ मोरोबा का बन्दोबस्त किया; और सब मराठे सरदारों की एकता कर के बड़ी मजबूती के साथ अँगरेजों से युद्ध जारी रखने की तैयारी की। महादजी सेंधिया का उसे सहारा था। नागपुरवाले भोसलों से और हैदरअली से मित्रता की; और यह मसलहत की कि, पूने की फौज बम्बई वाले अँगरेजों पर, हैदर की फौज मदरासवालों पर और भोंसला की फौज कलकत्तेवालों पर—इस प्रकार चारों ओर से एकदम अँगरेजों पर हम्ला किया जाय, (सन् १७८०)। इस के अनुसार हैदर ने मदरास पर धावा किया; परन्तु नागपुरवाले भोंसले को वारन हेस्टिंग्ज् ने सोला लाख रुपये देकर उससे मेल कर लिया; इस लिए भोसला ने अपना कर्तव्य नहीं पूरा किया। कर्नल गाडर्ड ने सन् १७८० में वसई के किले को घेर कर जीत लिया। अन्त में वारन हेस्टिंगूज ने सेंधिया की मार्फत मराठों से सुलह की। उसे सालबाई की सुलह कहते हैं, (सन् १७८२)। उसकी शर्तें:—१ राघोबा का पक्ष अँगरेज छोड़ दें और वह तीन लाख सालाना पेंशन लेकर चाहे जहां चुपके बैठा रहे; २ साष्टी टापू अँगरेजों के अधिकार में रहे; पर नवीन जीता हुआ अन्य सब प्रदेश एक दूसरे को लौटा दें; ३ मराठे अँगरेजों के यूरोपियन शत्रुओं को मदद न दें और अँगरेज भी मराठों के देशी शत्रुओं को मदद न करें। ४ गायकवाड नियमानुसार पेशवा को कर देकर अपने मुल्क का प्रबन्ध करे। इस सुलह का पालन करने के लिए दोनों ओर से महादजी सेंधिया की जमानत थी। इस प्रकार पेशवाओं की घराऊ फूट से उत्पन्न हुए इस युद्ध का अन्त हुआ और राघोबा कोपरगांव में स्वस्थ बैठा रहा। वह सन् १७८३ में मर गया। उसका कारबारी सखाराम बापू पहले ही मर चुका था। इस युद्ध से मराठों की बहुत सी सत्ता जाती रही।

२. सवाई माधवरावः—इस पेशवा के शासन को नाना फडनवीस का कारबार कहना चाहिए। छुटपन से सब प्रकार का उत्तम प्रबन्ध रख कर नानाने पेशवा को छोटे से बड़ा किया। पांचवें वर्ष में उसका यज्ञोपवीत और आठवें वर्ष में विवाह हुआ। ये दोनों उत्सव बड़ी धूमधाम से हुए। उसकी शिक्षा का प्रबन्ध उत्तम प्रकार का रखा गया था। धीरे धीरे पेशवा होशियार होता गया और उसके कर्तृत्व के विषय में लोगों को बहुत आशा होने लगी। नारायणराव की मृत्यु के बाद नाना फडनवीस ने जो कार्यक्रम आरम्भ किया, उसकी

समाप्ति सालवाई की सुलह से हो गई। इस समय तक दूसरे विषयों की ओर ध्यान देने के लिए मराठे राजकर्ताओं को फुरसत नहीं मिली। जब कि अँगरेजों से युद्ध हो रहा था तब टीपू ने मराठों का बहुतसा राज्य अपने कब्जे में कर लिया था। वास्तव में मैसूर और कर्नाटक प्रान्तों में बहुत दिनों से मराठोंकी सत्ता स्थापित हो गई थी; पर इधर अपने हक जारी रखने के लिए मराठोंको अवकाश नहीं रहा। सन् १७८४ में नाना फडनवीस ने मराठों की फोज टीपू के मुल्क पर भेजी। इस काम में निजाम और नागपुरवाले भोसले भी पूने की फौज में शामिल हुए। कुछ दिन तक टीपू के साथ बडे कडाके का युद्ध हुआ। अन्त में शिकस्त खाकर टीपू ने मराठों का मुल्क छोड दिया और लडाई के खर्च में तीन लाख रुपये दिये।

६. महादजी सेंधिया की उत्तर-हिंदुस्थान पर चढाई, (सन्१७८३-१७९०):—बडे माधवराव के मरने के पहले उत्तर-हिन्दुस्थान जीतने का जो आधा काम बाकी रह गया था वह अब महादजी ने पूरा कर दिया। वहां उसे दो काम करने थे; एक तो बादशाह को अपने अधिकार में करके उसका सारा प्रबन्ध कर देना और दूसरा राजपूत, रुहेले, जाट आदि जो लोग मराठों के विरुद्ध थे उनका बन्दोबस्त करना। पहले पहल महादजी ने फ्रेंच लोगों को नौकर रख कर, उनके द्वारा अपनी फौज को उत्तम प्रकारकी कवायद सिखाई। गत युद्ध से यह बात उसे अच्छी तरह मालूम हो गई थी कि, अपनी फौज को कवायद न आने से कितना नुकसान होता है। इस समय हिन्दुस्थान में केवल मराठों कोही सत्ता प्रबल थी। नाना और महादजी ने दिल्ली पर कब्जा करने का विचार किया। महादजी ज्यों ही दिल्ली की ओर गया त्यों ही प्रायः सभी उमराव उसमें शामिल हो गये। यह देख कर महादजी ने पेशवा के नाम से वजीरी का पद शाहआलम बादशाह से ले लिया और स्वयं पेशवा की नयाबत स्वीकार करके राज्य का सब बन्दोबस्त कर दिया।

यद्यपि बाहर से सब अमलदार महादजी के अनुकूल हो गये थे तथापि गुप्त रीति से राजपूत और मुसल्मानों ने मिलकर महादजी के विरुद्ध कार्रवाई शुरू की। क्योंकि राजपूत मराठों का शासन नहीं चाहते थे; और महादजी के द्वारा जागीरें जप्त होने के कारण मुसल्मान भी बिगड उठे थे। इस कार्रवाई से जो अनेक भयंकर युद्ध हुए उनसे महादजी की कीर्ति अजरामर हो गई है। दो चार

भयंकर लड़ाइयों में उसने सब शत्रुओं को शिकस्त दी। इस प्रसंग में अंबाजी, इंगले, लखवा दादा, राणाखां आदि महादजी के सरदारों ने अच्छा पराक्रम दिखाया। ये बातें सन् १७९० तक हुईं। इतनी अवधि में उसने दिल्ली में सब प्रकार का बन्दोवस्त किया। राजपूत राजाओं को जीत कर अजमेर, पुष्कर आदि जगहों पर अधिकार कर लिया; और वहां का बन्दोवस्त करके वह पूने आया। इस समय महादजी का प्रभाव बहुत बढा हुआ था। राजनीतिज्ञता और रणशूरता दोनों गुणों से वह उत्पन्न था। पूने में बडा भारी दरबार करके, बादशाह से पाये हुए खिताब और वस्त्रालंकार उसने पेशवा को अर्पण किये। बाद को कुछ दिन तक नाना और महादजी में स्पर्धा बनी हुई थी; और जान पडता था कि उनका झगडा बढ जायगा; पर हरीपंत फडके ने दोनों में मेल करा दिया। इसके बाद, महाराष्ट्र के दुर्दैव से, महादजी बहुत दिन जीवित नहीं रहा। सन् १७९४ में नवज्वर से पीडित होकर वह एकाएक वानवडी में मर गया। उस समय उसकी उम्र ६७ वर्ष की थी। मराठशाही के कर्ता पुरुषों में महादजी की भी गणना है। मराठेशाही के इतिहास का उत्तरार्ध उसी का कारबार समझना चाहिए। उसको 'पाटिलबुवा' भी कहते थे। उसके सन्तान न था। इस लिए अपने छोटे भाई के लडके दौलतराव को उसने गोद-लिया। दौलनराव कुछ विशेष कर्तृत्ववान् न था।

४. खर्डा की लडाई, (सन् १७९५):—निजाम और मराठों में बहुत दिन तक मनमोटाव था। इधर मराठों की सत्ता बहुत बढ गई थी। यह बात निजाम को सहन नहीं हुई। उसकी तरफ चौथाई और सरदेशमुखी का कर बहुत दिनों से बाकी था। वह जब मराठों ने मांगा तब उसने नहीं दिया; किन्तु उलटे उसने और उसके दीवान मुसुरुल्मुल्क ने उनकी हँसी की। उसने अँगरेजों का आश्रय लिया था। वह जानता था कि, उनकी मदद से मैं बात की बात में मराठों का पराभव कर सकूंगा। इस लिए उसने युद्ध की तैयारी की। इधर नानाफडनवीस ने भी सब मराठे सरदारों को एकत्र करके निजाम को गर्व—गलित करने का विचार किया। इतने ही में अनुभवी सेनानायक हरिपंत फडके मर गया, (सन् १७९४)। इस कारण नाना का मानो दाहना हाथ गिर पडा। तब नाना ने परशुरामभाऊ पटवर्धन को निजाम पर जाने वाली फौज का सेनापति बनाया। कुल फौज एक लाख तीस हजार जमा हुई।

साथ में तरुण पेशवा और नानाफडनवीस भी थे । उधर से निजाम भी चल आया और खर्डा के पास छावनी डाल कर रहा । अँगरेजों की मदद उसके पास नहीं आई । ११ मार्च सन् १७९५ को दोनों में घनघोर युद्ध हुआ । उसमें निजाम का पूर्ण पराभव हुआ । तब उसने सुलह करने की बातचीत शुरु की। इस लडाई के उत्पादक निजाम के दिवान मुसुरूल्मुल्क को पेशवा ने अपने अधिकार में ले लिया । निजाम ने पिछला बकाया और लडाई का खर्च अदा कर दिया । इसी प्रकार यह भी ठहरा कि सरहद का ३७ लाख रुपये पैदावारी का मुल्क और दौलताबाद का किला भी निजाम मराठों को दे दे । यही मराठों का अन्तिम विजय है। सब मराठा-मण्डली एक हेतु से राष्ट्रकार्य के लिए एकत्र होने का यह अन्तिम प्रसंग है।

५. सवाई माधवराव और प्रमुख पुरुषों की मृत्यु:—जब नाना फडनवीस यह आशा कर रहा था कि अब माधवराव अच्छी तरह तैयार होकर शीघ्र ही राजकारबार देखने लगेगा; तब भीतर एक निराशा ही हाल जारी था । रघुनाथराव के तीन लडके थे, अमृतराव (दत्तक), और बाजीराव तथा चिमणाजी आप्पा दो औरस । इनकी मा आनन्दीबाई सन् १७९३ में मर गई । बाजीराव बडा खटपटी और इतना मृदुभाषी था कि वह चाहे जिसको अपने कपट जाल में फांस लेता था । गुप्त रीति से प्रयत्न करके उसने तरुण पेशवा सवाई माधवराव के मन में यह बात भर दी कि, 'तुम भी हमारी ही तरह नाना की कैद में हो ।' पेशवा की यह समझ धीरे धीरे दृढ होती गई और वह चिन्ता से सूखने लगा । नाना जितना ही उसे समझाता उतना ही उसका माधवराव के मन पर विरुद्ध परिणाम होता । अन्त में आत्महत्या करने का विचार उसके मन में आया और सन् १७९५ का दशहरा हो जाने पर शनिवार-वाडे में ऊपर की मंजिल पर से वह नीचे चौक में कूद पडा और पीडित होकर थोडे ही दिनों में परलोक सिधारा । इस घटना से राज्य को बडा धक्का पहुँचा ।

जब संकट आने लगते हैं तब चारों ओर से एकदम आते हैं । इन पांच सात वर्षों में मराठेशाही को डुबाने में मृत्यु ने भी कमाल कर दिया । जैसे पानीपत में एक पीढी काट डाली गई वही हाल आपही 'आप इस समय हुआ और कर्ता-पुरुष मृत्युमुख में पडे । महादजी सेंधिया और हरीपंत फडके हाल

ही में मृत्यु को प्राप्त हुए थे। रामशास्त्री प्रभुणे सन् १७८९ में परलोक सिधारा। अहल्याबाई सन् १७९५ में और तुकोजी होलकर सन् १७९७ में मृत्यु को प्राप्त हुए। होलकर के घर में झगडे शुरू हुए। गायकवाड के घर में भी यही हाल हुआ। रहते रहते सिर्फ नाना फडनवीस और परशुरामपंत पटवर्धन कुछ दिन और जीवित रहे। पश्चात् उनके मरते ही मराठाशाही की स्वतंत्रता एकदम नष्ट हो गई।

पाठ बारहवां।

छत्रपति दूसरा शाहू,—पेशवा दूसरा बाजीराव।

सन् १७९६–१८०८।

१. पेशवा दूसरा बाजीराव।	२. नाना फडनवीस की मृत्यु।
३. बाजीराव की अडचनें।	४. वसई की सुलह।
५. मराठों से दूसरा युद्ध।	६. होलकर से युद्ध।

१. पेशवा दूसरा बाजीराव, (सन् १७९६):—सवाई माधवराव की मृत्यु के बाद नाना फडनवीस इस विचार में पड गया कि, अब पेशवाई पद किसको दिया जाय। बाजीराव नालायक था। उसे राजकीय ज्ञान बिलकुल ही न था। क्षणिक लाभ देख कर वह राज्य का चाहे जो नुकसान करने के लिए तत्पर रहता। नाना के मन में था कि कोई लडका सवाई माधवराव की स्त्री की गोद में देकर उसके नाम से राजकाज चलाया जाय। पर यह बात सफल न हो सकती थी। बारभाई की काररवाई में जो राजनीतिज्ञ शामिल थे उनमें से अब केवल नाना ही बाकी था। दौलतराव संधिया का अच्छा वजन था; पर उसमें यह जानने की शक्ति न थी कि रियासत का भला किस बात में है। उसकी मदद से बाजीराव ने पेशवाई प्राप्त करने का प्रयत्न शुरू किया। यह बात जब नाना को मालूम हुई तब उसने स्वयं बाजीराव को पूना में लाकर पेशवाई पर स्थापित कर दिया। बाहरसे दोनों में स्नेह हुआ। परन्तु बाजीराव के मन में नाना के विषय में अत्यन्त द्वेष भरा हुआ था; इस कारण उसने नाना को कैद करवाने के लिए संधियाको

दो कोटि रुपये देने का वादा किया । इस विचार के अनुसार नाना को केद करके सेंधिया बाजीराव से दो करोड रुपया मांगने लगा । चूंकि धन पास न था, इस लिए पेशवा ने सेंधिया को हुक्म दे दिया कि, पूनां शहर लूट कर अपना रुपया वसूल कर लो । सेंधिया ने सेठ साहूकारों के घर लूट कर अपना मतलब पूरा किया । इस निन्दनीय घटना से पाठक लोग बाजीराव के अगले राजकाज का अनुमान कर सकते हैं । कुछ दिनों बाद अनेक झगडे उपस्थित होनेके कारण सेंधिया को नाना का छुटकारा करना पडा, (सन् १७९९) ।

२. नाना फडनवीस की मृत्यु, (मार्च सन् १८००):—केद से छूटने पर नाना फडनवीस शीघ्र ही परलोक सिधारा और उसके साथ ही मराठेशाही का भी अन्त हुआ । नाना अत्यन्त गूढ राजनीतिज्ञ और चाणाक्ष पुरुष था । चालीस वर्ष तक उसने सम्पूर्ण मराठेशाही का कारबार बडी पटुता के साथ चलाया । चारों ओर की खबरें जानने में वह अत्यन्त अप्रतिम चातुर्य दिखलाता था । जब वह कोई काम करता तब छोटी छोटी बातों को भी ध्यान में रखता । वह सावधानी के साथ, सब प्रकार से, यथा-योग्य कार्य सिद्ध कर लेने में महा चतुर था । उसके ऑफिस का प्रबन्ध बहुत अच्छा था । वह अब तक उसी स्थिति में है । उसने राज्य के भिन्न भिन्न विभागों का प्रबन्ध निश्चित कर दिया । विशेषतः परकीय दरबारों में अपने वकील नियत करके, अपनी राज-नीतिज्ञता के जोर पर, उनके द्वारा उसने अपने राज्य की उत्तम प्रतिष्ठा कायम रखी । पर इससे भी उत्तम, नाना की सबसे बडी कार्रवाई यह है कि, उसने अपने जीवन भर मराठेशाही में परकीय लोगों का प्रवेश नहीं होने दिया । नाना फडनवीस की मृत्यु से मराठों के राज्यकी चतुराई और सुसम्बद्धता का लय हो गया । नाना के कुछ ही दिन पहले परशुरामपन्त पटवर्धन का भी स्वर्गवास हो गया था ।

३. बाजीराव की अडचनें:—पेशवा के कारबार में गडबड देख कर मराठों के शत्रुओं ने चारों ओर से शिर उठाया । बाजीराव ने निजाम के दीवान मुसुरुल्मुल्क को छोड दिया और खर्डे की लडाई में जो प्रदेश जीता गया था वह भी लौटा दिया । सन् १७९७ में तुकोजी होलकर की पूने में मृत्यु हुई । उसके चार लडके थे:—काशीराव, मल्हारराव, यशवंतराव और विठोजी । जब रियासत के लिये इन लडकों में झगडे मचे हुए थे, तब पेशवा

और सेंधिया ने उनमें और भी फूट पैदा कर दी। पूना में सेंधिया और मल्हारराव की लडाई हुई। उसमें मल्हारराव मारा गया। सेंधिया काशीराव को अपने साथ कैद कर ले गया। यशवंतराव और विठोजी भग गये। यशवंतराव ने जब यह देखा कि, बाजीराव हम लोगों का स्वामित्व कायम रख कर निष्पक्षपात से झगड़े तय नहीं करता किन्तु और अधिक बढाता ही है; तब उसे अतिशय क्रोध उत्पन्न हुआ। सेंधिया पूने में था इस कारण उसका मालवे का प्रदेश खाली पडा था। उसे यशवंतराव ने यथेच्छ लूटा। तब सेंधिया पूना छोड कर बरहानपूर गया। उधर होलकर के साथ उसकी अनेक छोटी छोटी लडाइयां हुई। वे आपस के झगडे मिटाने के लिए यशवंतराव ने बाजीराव से आग्रहपूर्वक विनती की। बाजीराव ने उसकी कुछ परवा न की और यशवंतराव का भाई विठोजी जब उसके पास आया तब उसने उस पर बलवा करने का अपराध लगा कर हाथी के पैर तळे डलवा कर मार डाला। यह सुनते ही यशवन्तराव एकदम पूने पर टूट पडा, (सन् १८०१)। तब तो बाजीराव घबडाया। यशवंतराव बडा साहसी और तामसी पुरुष था। बाजीराव ने यशवंतराव पर फौज भेजकर लढाई शुरू की और स्वयं सिंहगड पर भग गया। इधर यशवंतराव ने सेंधिया और बाजीराव की फौज का पराभव करके पूने पर अधिकार कर लिया और अमृतराव को पेशवाई पर बिठा कर पूना शहर लूटा और बहुतसा धन इकट्ठा करके वह मालवे को चला गया।

४. वसई की सुलह, (दिसम्बर सन् १८०२):—इधर बाजीराव वसई में अँगरेजों के पास गया। वहां अँगरेजों का होशियार राजनीतिज्ञ कर्नल क्लोज उसे मिला। उसकी मार्फत बाजीराव और अँगरेजों की तह वसई नामक मुकाम में हुई, (ता. ३१ दिसम्बर सन् १८०२)। उसकी शर्तें इस प्रकार हैः—१ अँगरेज अपनी दस हजार फौज बाजीराव की रक्षा के लिए सदा के लिए रख दें, उसके खर्च के लिए २६ लाख का अपना मुल्क बाजीराव अँगरेजों के लिए अलग कर दे। २ अँगरेजों के यूरोपियन शत्रुओं को बाजीराव अपने मुल्क में आश्रय न दे। ३ अन्य राजे रजवाडो से यदि बाजीराव का झगडा लगे तो अँगरेजों के हुक्म के विना वह उनसे युद्ध अथवा सुलह न करे; वह झगडा अँगरेज ही तय करें। इस प्रकार अँगरेजों की मदद बाजीराव ने पूने में प्रवेश किया। गवर्नर जनरल का भाई ऑर्थर वेल्स्ली

(जो आगे चलकर ड्यूक ऑफ् वेलिंग्टन के नाम से प्रसिद्ध हुआ) मेसूर से बडी भारी फौज लेकर बाजीराव की मदद को आया। इधर कर्नल मालकम नर्मदा के किनारे सेंधिया और भोसले की हालचलों पर देखरेख रखता था।

५. मराठों से दूसरा युद्ध, (सन् १८०३-०५):— वसई की सुलह से अपना स्वातंत्र्य नष्ट होना मराठे सरदारों को अच्छा नहीं लगा। वसई की सुलह सब सरदारों की अनुमति से नहीं हुई, इसी कारण उन्होंने उसे कबूल नहीं किया ! तब तो अँगरेज और मराठे सरदारों में युद्ध छिड गया। अँगरेजों ने यह निश्चय कियाकि, सब सरदारों को, एकत्र होकर विचार करने के लिए अवकाश न देना चाहिए। किन्तु जो जहां मिल जाय उसे वही एकदम घेर कर युद्ध करना चाहिए।

यद्यपि पेशवा को भी वसई की सुलह पसन्द नहीं हुई, तथापि वह अँगरेजों के विरुद्ध जा कैसे सकता था ! दक्षिण महाराष्ट्र के सरदार पेशवाओं ने ही नियत किये थे; इस कारण उन्होंने वसई की सुलह एकदम मान ली। इधर गुजरात में गायकवाड ने मराठा-मण्डल को छोड कर पहले ही अँगरेजों से तह कर ली थी। बाकी रह गये थे, सेंधिया, होलकर और भोसला। इनमें सेंधिया ही प्रबल था। फ्रेंच अफसरों के अधिकार में खूब तयारी के साथ उसकी फौज लढाई के लिए तत्पर थी। भोसला उसमें शामिल हो गया। सेंधिया से वेर होने के कारण होलकर इस युद्ध में शामिल नहीं हुआ।

पहले इस युद्ध की दो मुहिमें हुई। एक बरार में और दूसरी उत्तर में। दिल्ली शहर और मुगल बादशाह सेंधिया के कब्जे में थे। इस लिए विना दिल्ली पर कब्जा किये हिन्दुस्थान का स्वामित्व अँगरेजों को नहीं मिल सकता था। इसके सिवाय सेंधिया को फ्रेंच लोगों की मदद होने के कारण अँगरेज फ्रेंचों का भी पराभव करना चाहते थे। उत्तर की मुहिम में जनरल लेक और दक्षिण की मुहिम में जनरल वेलस्ली अँगरेजों के प्रमुख सरदार थे। अगस्त सन् १८०३ में वेलस्ली ने अहमदनगर का किला जीत लिया। इधर गुजरात में अँगरेजों की फौज ने भडोच शहर ले लिया। सितम्बर महीने में असई नामक स्थान में भारी लडाई हुई। उसमें वेलस्ली ने सेंधिया का पराभव किया। दूसरी फौज ने सेंधिया के असीरगढ और बुरहानपुर नामक दो स्थान ले लिये और बंगाल की अँगरेजी फौज ने भोसला के कटक शहर पर कब्जा कर लिया।

उत्तर में जनरल लेक ने अलीगढ और दिल्ली में सेंधिया का पराभव करके दिल्ली शहर ले लिया; तब वृद्ध मुगल बादशाह अँगरेजों के अधीन हुआ । बाद को लासवाडी में फिर बडी भारी लडाई हुई और लेक साहब ने सेंधिया की फौज पर जय प्राप्त किया । इधर बरार के आडगाँव नामक मुकाम में सेंधिया और भोसले की मिली हुई फौज को वेलस्ली ने पराजित किया । कुल युद्ध चार महीने में खतम हुआ । सन् १८०३ के दिसम्बर मास में देगावँ मुकाम में अँगरेज और भोसला की सुलह ठहरी । वह इस तरहः—१ वर्धा नदी के पश्चिम ओर बरार प्रान्त और कटक प्रान्त भोसला अँगरेजों को दे; २ निजाम पर भोसला के जो हक हैं वे छोड दिये जायँ; ३ दूसरी रियासतों से भोसले का यदि कोई झगडा हो तो उस झगडे का जो फैसिला अँगरेज करें वह भोसला को मानना चाहिए; और ४ अँगरेजों का रेजिडेन्ट नागपुर में रहे । इसी प्रकार अंजनगावँ में सेंधिया और अँगरेजों की जो सुलह हुई वह इस प्रकार हैः—१ गंगा और यमुना के बीच का प्रदेश और दक्षिण का कुछ मुल्क सेंधिया अँगरेजों को दे; २ दिल्ली के बादशाह, पेशवा, निजाम और गायकवाड पर सेंधिया के जो हक हैं वे छोड दिये जायँ; ३ अँगरेजों की सम्मति बिना किसी भी यूरोपियन को अपने पास न रखना; और ४ अँगरेजों के साथ जो रियासतें स्नेहभाव से बर्ताव करती हैं उनके साथ उपद्रव न लगाना ।

६. होलकर से युद्ध, (सन् १८०४–१८०५):—जब सेंधिया और भोसला चुप हो रहे तब अँगरेजों ने होलकर से सामना किया । इस युद्ध को ऊपर के ही युद्ध की तीसरी मुहिम कहते हैं । कोई कोई इसे 'मराठों से तीसरा युद्ध' भी कहते हैं । सेंधिया के साथ जो सुलह हुई थी उससे राजपूत राजा लोग भी अँगरेजों की सत्ता में आ गये थे । परन्तु यशवंतराव होलकर अपने को स्वतंत्र समझ कर राजपूताने में लूट मार करके कर वसूल करने लगा । इसे बन्द करने के लिए जब अँगरेजों ने कहा तब उसने कुछ परवा न करके अँगरेजों को धमकी देकर एक बेपरवाई का पत्र लिखा । तब इसके साथ अँगरेजों को युद्ध करना पड़ा । होलकर अपने को स्वतंत्र समझता था । अँगरेजों के सेनापति लार्ड लेक ने सन् १८०४ में टोंक–रामपुरा पर अधिकार कर लिया । एक बार जनरल मान्सन सात हजार फौज लेकर मालवे से गुजरात को जा रहा था, तब होलकर ने इसका पराभव करके सब फौज

काट डाली । बाद को होलकर ने दिल्ली पर हमला किया, पर उसमें वह स्वयं परामूत हुआ । उसके बाद भरतपुर का जाट राजा होलकर में शामिल हो गया । उन दोनों का सन् १८०४ के नवम्बर मास में डीग नामक स्थान में पराभव हुआ और शीघ्र ही फिर फर्रुखाबाद में भी उन दोनों की हार हुई । इतना होनेपर होलकर भगा । लेक ने भरतपुर को घेर लिया, (सन् १८०५) । तब भरतपुर के राजा ने अँगरेजों से सुलह कर ली । इतना युद्ध होने पर गवर्नर वेलस्ली विलायत चला गया और उसकी जगह लार्ड कार्नवालिस आया । मराठोंसे अँगरेजों ने युद्ध किया वह विलायत में नहीं पसन्द हुआ । इस लिए कार्नवालिस ने एकदम होलकर के साथ सुलह करके युद्ध की समाप्ति कर दी । इन युद्धो में हारने के कारण यशवंतराव होलकर संतप्त होकर पागल हो गया । इसी से वह सन् १८११ में परलोक सिधारा । यशवंतराव अत्यन्त साहसी और शूर था ।

सन् १८०८ में छत्रपति दूसरे शाहू की मृत्यु हुई और उसका लडका प्रतापसिंह सितारे की गद्दी पर बैठा ।

पाठ तेरहवाँ ।

मराठेशाही का अन्त ।

सन् १८०८-१८१८ ।

१. मराठों से तीसरा युद्ध ।	२. भोसला और होलकर पर मुहिम ।
३. पिंडारियों से युद्ध ।	४. मराठा-राज्य का अन्त ।

१. मराठों से तीसरा युद्ध, (सन् १८१७-१८):—लार्ड वेलस्ली यदि अपना विचार पूर्णता से सिद्ध करने के लिए हिन्दुस्थान में रहा होता तो इस तीसरे युद्ध की आवश्यकता न पडती । परन्तु उसी समय यूरप में अँगरेज और फ्रेंचों में भारी झगडा हो जाने के कारण अँगरेज लोग बडे पेंच में पड गये थे । इस कारण "सहायक सेना" की पद्धति के अनुसार पूरी पूरी कार्रवाई करके भारत में अँगरेजों की सार्वभौमता स्थापन करने का काम कुछ दिनों के लिए और बढ गया । वह काम ग. ज. लार्ड हेस्टिंगस् ने पूरा किया । यद्यपि पिछले

युद्ध से मराठे सरदार शिकस्त हो गये थे, तथापि वे अंगरेजों की सत्ता संतोष के साथ कबूल करने न लगे थे। गुप्त रीति से वे युद्ध की तैयारी कर रहे थे और ठीक मौका ताक रहे थे। स्वयं बाजीराव पेशवा अँगरेजों का अत्यन्त द्वेष करता था। वह स्वभाव का डरपोक और कपटी था। किसी पर भी उसने पूरा विश्वास नहीं रक्खा। वह चाहता था कि, वसई की सुलह से हमारी जो स्वतंत्रता नष्ट हो गई है उसे फिर लौटा लें। बाजीराव और अन्य राजाओं में जो झगडे थे, उन्हें मिटाने का प्रयत्न अँगरेज लोग कर रहे थे। उनमें बडोदाके गायकवाड से बाजीराव का बहुत दिन तक झगडा हो रहा था। उस झगडे को मिटाने के लिए गंगाधर शास्त्री पटवर्धन नामक गायकवाड का वकील अँगरेजों की तरफ से पूने में आया, (सन् १८१५)। अँगरेजों ने यह जवाबदारी ली थी कि उसके जान पर किसी प्रकार का जोखिम न आवेगा। पूने से गंगाधर शास्त्री और बाजीराव पंढरपुर को गये। वहां एक दिन गंगाधर शास्त्री का खून हो गया। त्रिंबकजी डोंगले नामक एक क्षुद्र मनुष्य बाजीराव का मुँहलगा था। अँगरेजों ने समझा कि, उसीने बाजीराव के कहने पर यह खून कराया। इस लिये अँगरेजों ने बाजीराव से कहा कि त्रिंबकजी को हमारे अधीन कर दो। बहुत कहने सुनने पर बाजीराव ने अन्त में उसे अँगरेजों के हवाले किया। उसे उन्होंने थाने के जेल में रक्खा; परन्तु वह एक दिन वहां से भग गया। तब पूने के रेजिडेन्ट एल्फिन्स्टन ने समझ लिया कि बाजीराव उसमें जरूर मिला है। एल्फिन्स्टन ने बाजीराव से कहा कि,—' त्रिंबकजी को पकड कर हमारे पास भेजो।' इतना कहकर उसने सिंहगड और पुरन्दर नाम के दो बाजीराव के किले ले लिये, और गायकवाड के झगडे का फैसिला भी बाजीराव के विरुद्ध किया। तब बाजीराव ने स्वयं युद्ध की तैयारी कर के सेंधिया, होलकर और भोसले को भी गुप्त रीति से अँगरेजों से युद्ध करने को उभारा। तब फिर मराठों का जमाव होने के पहले ही अँगरेजों ने प्रत्येक को अलग अलग घेर कर युद्ध करने का निश्चय किया।

युद्ध का प्रारम्भ बाजीराव ने किया। सन् १८१७ में पेशवा की फौज ने खडकी में रेजिडेन्ट के थाने पर हमला किया। पेशवा का सेनापति बापू गोखले था। खडकी की लडाई में बाजीराव का पराभव हुआ और कर्नल स्मिथ ने पूना शहरपर कब्जा कर लिया। तब बाजीराव सितारेवाले छत्रपति को साथ लेकर भगा। जनवरी सन् १८१८ में बापू गोखले और अँगरेजों की कोरेगावँ में लडाई हुई और बापू का पराजय हुआ। बाद को सांगली के उत्तर और आष्टी में और एक लडाई हुई। उसमें बापू गोखले काम आया। उसी समय जब कि बाजीराव बरार की ओर भगा जाता था, तब नर्मदा के

किनारे उसे अँगरेजी फोजं ने घेरा, और कर्नल माल्कम ने उसे पकड लिया। बाद को अँगरेजों ने पेशवा का राज्य अपने राज्य में शामिल करके बाजीराव को आठ लाख सालाना पेंशन नियत कर दी, और उसे कानपुर के समीप ब्रह्मावर्त में रख दिया। उसी प्रकार सितारेवाले छत्रपति प्रतापसिंह को सितारे की गद्दी दे कर उसके पास चौदह लाख का मुल्क रखा।

२. भोसला और होळकर पर चढाई, (सन् १८१७):—नागपुरवाले भोसले और होलकर बाजीराव को मदद देने के लिए तैयार हुए थे। होलकर के दरबार में अप्रबन्ध था। यशवंतराव का दत्तक पुत्र मल्हारराव अल्पवयी था, और सारी सत्ता फौज के हाथ में थी। वह फौज जब कि बाजीराव से मिलने के लिए आ रही थी तब महद्दीपुर में कर्नल माल्कम और हिस्लाप ने उसका पराभव किया। बाद को होलकर ने अँगरेजों की सहायक सेना अपने पास रख कर अँगरेजों से सुलह कर ली।

नागपुर में भोसला के दरबार में भी बहुत बइन्तिजामी थी। सन् १८१५ में परसोजी भोसले का खून होने पर आप्पा साहब भोसला गद्दी पर बैठा। उसने अँगरेजों से सुलह कर के उनकी सहायक सेना अपने पास रख ली। बाद को बाजीराव और अँगरेजों का युद्ध सुरू होते ही आप्पा साहब ने भी अँगरेजों की छावनी पर हम्ला किया। सीताबरडी में दोनों दलों की लडाई हुई और आप्पा साहब की हार हुई। वह सन् १८१७ में अँगरेजों के अधीन हो गया बाद को जब उसे इलाहाबाद लिए जाते थे तब वह भग गया, इस लिए जोधपुर के राजा की मार्फत अँगरेजो ने उसको पेंशन नियत कर दी।

३. पिंडारियों से युद्ध; (सन् १८१७-१८):—मराठी राज्य के इस न्हासकाल में पिंडारी नाम के लोग मध्याहिन्दुस्थान के बहुत से भाग में प्रसिद्ध हो गये थे। जिस समय मुगल बादशाही और मराठेशाही की सत्ता टूट चली थी, और अँगरेजों की सत्ता अच्छी तरह न जमी थी, ऐसे समय में कोई शासन करनेवाला न होने के कारण देश में लूट मार और दंगा करके पेट भरनेवालों का एक गिरोह अलग ही कायम हो गया था। वही पिंडारी लोग हैं। ये पिंडारी लोग उस धूमधाम के समय में लूट की आशा से चाहे जिसकी नौकरी कर लेते। गुदडीखां, गुलाम मुहम्मद, इमामबख्श, हीरा, बुर्हान, छट्टू, करीमखां, अमीरखां, वशीर मुहम्मद इत्यादि सरदार पिंडारियों के मुखिया थे। उनमें से अन्त के चार ग. ज. हेस्टिंग्स के समय में विशेष प्रसिद्ध थे। अँगरेजों के जीते हुए मुल्क में और उनके दोस्तों के राज्य में पिंडारियों ने बडा गडबड मचा दिया, तब अँगरेजों को उनका बन्दोबस्त करना पडा।

गवर्नर जनरल ने पिंडारियों से युद्ध करने के लिए बडी भारी सेना तैयार की। उन्होंने सब राजे रजवाडों को अपनी मदद के लिए बुलवाया और सब तरफ से पिंडारियों का पीछा करना शुरू किया। छट्टू हार कर भगा जाता था, उसे बाघ ने मार डाला। बशीर मुहम्मद ने आत्महत्या की। अमीरखां और करीमखां शरण आये। तब अँगरेजों ने उन दोनों को जागीरें दीं। इस प्रकार पिंडारियों का मामला तय हुवा।

४. मराठी राज्य का अन्तः—सन् १८१८ में मराठेशाही का अन्त हुआ, इस लिए यह वर्ष विशेष महत्त्व का है. पूने में एल्फिन्स्टन, मालवे में माल्कम, नागपुर में जेंकिन्स और सितारे में ग्रांट डफ नाम के अँगरेज राजनीतिज्ञों ने उन प्रान्तों का प्रबन्ध लिया, इस लिए उनके नाम मराठों के इतितिहास में प्रसिद्ध हैं। सितारे वाले छत्रपति प्रतापसिंह ने अपना कारबार कुछ दिन तक अच्छी तरह से चलाया; पर अन्त में अँगरेज सरकार को सन्देह हुआ और वह पदच्युत कर दिया गया, (सन् १८३९)। अँगरेजों ने उसके भाई शहाजी को गद्दी पर बैठाया। सन् १८४८ में शहाजी के मरने पर, उसके लडका न होने के कारण, सितारे का राज्य अँगरेजों ने अपने राज्य में मिला लिया। इसी प्रकार नागपुर और झांसी के राज्य अँगरेजी राज्य में मिलाये गये। बचते बचते सेंधिया, होलकर, गायकवाड, पवार और कोल्हापुर के छत्रपति तथा दक्षिण के जागीरदार, सरदार आदि असली मराठेसाही के कितने ही वंशों की रियासतें अबतक कायम हैं।

सन् १६६४ से लेकर सन् १८१८ तक, करीब १५० वर्ष मराठों की सत्ता थी। १७०८ तक का समय संकट में गया। तब से सन् १७६१ तक मराठों की तरक्की हुई। सन् १७६२ से लेकर सन् १८०० तक—अर्थात् नाना फडनवीस की मृत्यु तक—मराठों की उतरती कला थी; और अन्त के १८ वर्षों में उनकी स्वतन्त्रता नष्ट हुई। मराठेशाही के अन्त होने का मुख्य कारण अन्तःकलह तो सच ही है; पर अँगरेजों की गूढ नीति और कर्तृत्वशक्ति के सामने मराठों का अव्यवस्थित राज्य-प्रबन्ध बहुत दिन टिक नहीं सकता था। नाना फडनवीस की मृत्यु के बाद राज्य में कोई भी कर्ता पुरुष नहीं रहा। इसके सिवा, वेलस्ली, हेस्टिंग्स, माल्कम, एल्फिन्स्टन आदि गूढ नीतिज्ञ और चाणाक्ष लोगों से टक्कर लगानेवाला कोई भी राजनीतिज्ञ मराठों की तरफ नहीं बचा था।

भाग चौथा ।

ब्रिटिश रियासत ।

—:0:—

पाठ पहला ।

यूरोपियनों का हिन्दुस्थान में प्रवेश ।

सन् १७४४ ई. तक ।

१. यूरप की नवीन हलचल ।	२. पुर्तगीज लोगों का वृत्तान्त ।
३. डच लोगों का वृत्तान्त ।	४. फ्रेंच लोगों का वृत्तान्त ।
५. अँगरेज लोगों का वृत्तान्त ।	६. ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रबन्ध ।

१. यूरप की नवीन हलचल, (पन्द्रहवाँ शतक):—अँगरेज लोग यूरप के रहनेवाले हैं। वे पहले यहां कब और किस उद्देश से आये और उन्होंने यहां किस प्रकार राज्य स्थापन किया, इत्यादि बातें इस भाग में बतलानी हैं।

यूरप और एशिया का सम्बन्ध बहुत प्राचीन काल से चला आता है सिकंन्दर बादशाह के समय से वह सम्बन्ध बढता गया। एशिया से नाना प्रकार का व्यापारी माल जमीन के मार्ग से यूरप में जाता था। उसके मुख्य दो रास्ते थे। एक मध्य एशिया से कास्पियन समुद्र के रास्ते से और दूसरा एशिया माइनर से भूमध्य सागर के मार्ग से। ग्यारहवें और बारहवें शतक में मुसल्मान और ईसाइयों में येरूसलेम शहर के विषय में झगडा लगा और प्रचण्ड धर्मयुद्ध हुए, इस कारण एशिया और यूरप का व्यापार बहुत बढा। एशियाखण्ड के हिन्दुस्थान, चीन, आदि देशों से नाना प्रकार का माल यूरप में लेजा कर बेचने वाले लोगों को बहुत अच्छा नफा होता था। इस लिए सभी चाहने लगे कि यह व्यापार हमारे हाथ में रहे। हिन्दुस्थान की विपुल सम्पत्ति की आशा से यूरोपियन व्यापारी पहले पहल इधर आये। वे हिन्दुस्थान देश को सुवर्ण-भूमि कहते। सन १४५३

कै तुर्क लोगों ने कान्स्टेंटीनोपल शहर पर कब्जा करके यूरप में अपना राज्य स्थापित किया, इस कारण युरोपियन व्यापारियों के लिए स्थलप्रान्त के व्यापार मार्ग बन्द हो गये। तब हिन्दुस्थान का जाने के लिये जलमार्ग ढूंढ निकालने के ओर युरोपियन लोगों का ध्यान गया। छापने की कला निकलने से यूरोपियन लोगों का ज्ञान बढ़ चला था। इतने ही में ध्रुवदर्शक यंत्र (कम्पास) की तरकीब निकल आने से जहाजों का प्रवास बहुत सुलभ होगया। बन्दूक की बारूद का उपयोग उन्हें मालूम होने पर जलमार्ग से नवीन प्रदेश ढूंढ निकालने के लिए उन्हें अच्छा उत्तेजन मिला। उनमें पहले स्पेन और पुर्तगाल के लोग अगुवा थे। स्पेन देश के जहाज लेकर जब कोलम्बस हिन्दुस्थान को आने के लिए निकला था तब उसे अचानक अमेरिका खण्ड मिल गया, (सन १४९२)। बादको सन १४९८ में पुर्तगीज लोग जलमार्ग से भारतवर्ष में आये। उनके पीछे डच, अंगरेज और फ्रेंच भी धीरे धीरे इधर आये। इनमें से अँगरेजों ने यहां अपना राज्य स्थापन किया। शुरू शुरू में ये लोग पश्चिम यूरप से, आफ्रिका के पश्चिमी किनारे से दक्षिण को जाते और आफ्रिका के दक्षिणी कोण के गिर्द होते हुए नैर्ऋत्य दिशा से हिन्दुस्थान में आते। पहला पुर्तगीज खलासी बार्थलोमोडियाज सन १४८७ में आफ्रिका के दक्षिणी कोण तक आकर लौट गया। बाद को उसी मार्ग से दूसरा पुर्तगीज खलासी वास्को-डि गामा सन् १४९८ में हिन्दुस्थान के पश्चिमी किनारे पर कालीकट में आ पहुँचा। तब से हिन्दुस्थान तथा अन्य पूर्वी द्वीपों से पश्चिमी लोगों का व्यापार जलमार्ग से शुरू हुआ। उस समय व्यापार के मुख्य पदार्थ मसाले की चीजें दालचीनी, लवंग, जायफल, मिर्च और जवाहिर तथा उत्तम वस्त्र थे। डच लोगों ने तो मसाले के व्यापार में दूसरे कीसीका भी प्रवेश नहीं होने दिया। शुरू शुरू में युरोपियन लोग पश्चिमी किनारे पर व्यापार की कोठियां खोलने लगे। बाद को उनकी रक्षा के लिए बड़ी ऊंची दीवालों का घेरा बनाकर थोडी बहुत फौज भी रखने लगे; इस प्रकार जब कुछ प्रदेश उनके हाथ में आ गया तब व्यापार के निमित्त से वे अपनी सत्ता का भी विस्तार करने लगे। हां, डच लोग हिंदुस्थान में राज्य-विस्तार के झगडे में नहीं पडे। बाकी पुर्तगीज, फ्रेंच और अंगरेजों ने हिन्दुस्थान में राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया। उनमें केवल अँगरेजों को सफलता प्राप्त हुई। व्यापार और राज्य के सम्बन्ध से,

स्थूल दृष्टि से, भिन्न भिन्न यूरोपियन राष्ट्रों की हिन्दुस्थान के किनारे पर, नीचे लिखे मुताबिक तरक्की थी:—

सन् १५००–१६०० ई० पुर्तगीज लोग ।
,, १६००–१७०० ई० डच लोग ।
,, १७००–१७६० ई० फ्रेंच लोग ।
,, १७६० ई० से आगे अँगरेज लोग ।

२. **पुर्तगीज लोगों का वृत्तान्तः**—पहला पुर्तगीज सरदार वास्को डि गामा और उसके साथी सन् १४९८ में मलाबार किनारे पर उतरे । पहले पहल कालीकट, कोचीन और कनानूर के राजाओं से उनका व्यवहार हुआ । पुर्तगीज लोगों के आने के पहले लाल समुद्र और अरबसमुद्र का सब व्यापार आफ्रिका के मूर नामक अरबी लोगों के हाथ में था । इन मूरे लोगों से पहले पहल पुर्तगीज लोगों की कई लडाइयां हुईं । कालीकट में जमोरिन नाम का हिन्दू राजा राज्य करता था । उसने पुर्तगीज लोगों को कोठी बना दी । बाद को दोनों पक्षों में बिगाड होने पर लडाई हुई । उसमें जमोरिन के ६०० आदमी काम आये । तथापि कालीकट से पुर्तगीज लोगों को निकल जाना पडा । बाद को कोचीन के राजा त्रिमंपारा और जमोरिन का बिगाड होने के कारण त्रिमंपारा ने पुर्तगीज लोगों को आश्रय दिया । गामा अनेक बार स्वदेश जाकर फिर यहां लौट आया । उसका स्वभाव बहुत क्रूर था । युक्तिप्रयुक्ति से उसने मलाबार के बहुत से राजाओं से स्नेहभाव के साथ सुलह कर ली । सन् १५०५ में पुर्तगीज लोगों का पहला गव्हर्नर आलमीडा यहां आया । बाद को आल्बुकर्क नाम के एक होशियार पुर्तुगीज सरदार ने सन् १५१० में बीजापुर के सुलतान का गोवा शहर ले लिया । वह आज तक पुर्तगीज लोगों का हिन्दुस्थान में मुख्य शहर है । अल्बुकर्क ने बीजापुर की आदिलशाही से बहुत सी लडाइयां मारीं । धीरे धीरे पुर्तगीज लोगों ने अदन, मस्कत, आर्मज, कोलंबो, मलाका आदि अनेक स्थान अपने अधिकार में कर लिये । सन् १५१५ में आल्बुकर्क का गोवा में देहान्त हुआ । वसई और थाना उन्हों ने सन् १५२९ में लिये । बाद को सूरत, मंगलूर, और बम्बई भी उनके अधिकार में गये । सीलोन टापू सन् १५९६ में उनके हाथ में गया ।

पुर्तगीज लोगों का अमल ज्यो ज्यों चढता चला त्यों त्यों वे धर्म के विषय में लोगों पर जुल्म करने लगे। बाद को डच और अँगरेज लोग इधर आकर व्यापार में अपना प्रवेश करने लगे। पुर्तगीज लोग यहां के कुल समुद्र पर अपना हक्क बतलाते थे, वह डच और अँगरेजोंने कबूल नहीं किया। इस कारण सन् १६०० के बाद पुर्तगीज लोगों का न्हास होने लगा। डच लोगों ने सन् १६०४ में आंबोयना टापू ले लिया। सन् १६१२ में अँगरेजों ने सूरत के पास समुद्र पर पुर्तगीज लोगों का पराभव किया। गुजरात, अहमदनगर, बीजापुर और कालिकट के राजाओं ने उनके साथ लड कर उनका बहुत सा नुकसान किया। तथापि पुर्तगीज अपना पैर जमाए हुए थे। फिर सन् १७०० के बाद मराठों से उनका झगडा शुरू हुआ और चिमणाजी आपा ने सन् १७३९ में बसई का किल्ला लेकर उत्तर कोंकण से उनका अमल उठा दिया। इस समय हिन्दुस्थान में गोवा, दमन, दीव नामक तीन स्थान पुर्तगीज लोगों के अधिकार में हैं। उनके द्वारा हिन्दू धर्म से भ्रष्ट किये हुए लोगों की संख्या बहुत बड़ी है। सीलोन आदि स्थानों में अब भी पुर्तगीज भाषा बोलते हैं।

३. डच लोगों का वृत्तान्त, (सन् १६००–१७००):—सन् १५९५ में हाऊटमैन नाम का डच खलासी पहले पहल जलमार्ग से जावा द्वीप में आया। तब से सब पूर्वी टापुओं से डच लोगों का व्यापार शुरू हुआ। मसाले के व्यापार में उन्होंने बहुत सा धन कमाया। वह व्यापार वे अन्य किसी को नहीं करने देते थे। पहले पहल पुर्तगीज लोगों के साथ उनके झगडे हुए। सन् १६०४ में डच लोगों ने पुर्तगीज लोगों से आंबोयना टापू ले लिया। सन् १६११ में उन्होंने पुर्तगीज जलसेना का पराभव कर के सूरत का थाना ले लिया। परन्तु पुर्तगीज लोगों को शिकस्त कर के, उनका व्यापार हाथ में आने पर, डच लोगों ने हिन्दुस्थान में अपना अमल बढाने का प्रयत्न नहीं किया। वे पूर्वसमुद्र के मसाले के टापू ले कर चुप हो रहे। सीलोन का टापू बहुत दिनों तक उनके हाथ में था।

४. फ्रेंच लोगों का वृत्तान्तः—पुर्तगीज और डच लोगों की तरह फ्रेंचों ने भी हिन्दुस्थान से व्यापार करना शुरू किया। उनकी पहली कम्पनी सन् १६१५ में खडी हुई। उसने मेडागास्कर और बॉर्बन के टापू हस्तगत किये। सन् १६६८ में सूरत और सन् १६६९ में मछलीपट्टन में उन्होंने

कोठियां खोलीं। बाद को मार्टिन नामक एक होशियार फ्रेंच यहां आया। उसने सन् १६७४ में पुदुचरी में वस्ती की। वह पांडिचेरी के नाम से आज भी फ्रेंचों के अधिकार में है।

मार्टिन होशियार और दूरदर्शी था। उसने पांडिचेरी की वस्ती अच्छी मजबूत बनाई। जब शिवाजी ने कर्नाटक पर चढाई की तब उसके साथ स्नेह कर के मार्टिन ने व्यापार के बहुत से सुभीते प्राप्त कर लिये। सन् १७०१ में मार्टिन सब फ्रेंच बस्तियों का मुख्य अधिकारी हुआ। मछलीपट्टन के पास फ्रेंच पट्टान, चन्द्रनगर, कालीकट, बालासोर, ढाका, पटना, कासिमबाजार इत्यादि स्थानों में फ्रेंचों की कोठियां थीं। सन् १७०६ में मार्टिन मर गया। बाद को सन् १७२३ के करीब फ्रेंच कम्पनी के प्रबन्ध में फेरफार हुआ और नवीन प्रबन्ध शुरू हुआ। सन् १७२१ से १७३५ तक लेन्वार नाम के फ्रेंच ने अपना कारबार होशियारी से जारी रखा। सन् १७३५ में उस काम पर डमास की तैनाती हुई। डमास भी बहुत होशियार था। उसने व्यापार का प्रबन्ध उत्तम रखा। इसके सिवा उसने कर्नाटक के कई राजाओं से मित्रता की। उन राजाओं के आपसी झगडों में हाथ डालकर फ्रेंच लोगों का महत्त्व बढाने का प्रयत्न पहले पहल डमास ने किया। कर्नाटक में जब नबाब दोस्त अली के समय में झगडे शुरू हुए तब नबाब का दामाद चंद्रासाहब और उसके कुटुम्ब के लोग पांडिचेरी में आ रहे। इस कारण फ्रेंचों का महत्त्व बडा। सन् १७४१ में डमास अपना कारबार छोडकर लौट गया और उसके स्थान में जोसेफ फ्रान्सिस डूप्ले नामक इतिहास-प्रसिद्ध पुरुष की तैनाती हुई। डूप्ले एक प्रसिद्ध व्यापारी का लडका था। वह सन् १७४१ में पांडिचेरी में नौकरी पर आया। थोडे ही समय में उसने बडी सम्पत्ति और यश प्राप्त किया। हिन्दुस्थान में फ्रेंच लोगों का गौरव स्थापित करनेवाला यही महापुरुष है।

उस समय फ्रान्स की ऐसी दशा न थी कि, हिन्दुस्थान में फ्रेंचों की अधिक उन्नति हो सकती। यूरप में पुर्तगीज और डच लोगों के राष्ट्रीय झगडे पहले ही मिट गये थे और शान्ति हो गयी थी। अँगरेज लोग भी शान्ति से अपनी अडचने दूर करके क्रमशः अपनी उन्नति कर रहे थे। परन्तु फ्रेंच राष्ट्र की अन्तिम दशा ठीक न थी; इस कारण उस राष्ट्र को बाहरी वस्तियों की ओर ध्यान देने की फुरसत न थी। हिंदुस्थान में आये हुये फ्रेंच राजनीतियों को

दूसरों का महत्त्व सहन नहीं होता था और उन्हें स्वदेश का बहुत सा सहारा न मिलता था। इन्हीं कारणों से हिन्दुस्थान में फ्रेंचों का महत्त्व नहीं बढा। इतना ही नहीं किन्तु जो महत्त्व पहले था वह भी कायम नहीं रहा।

५. अँगरेज लोगों का वृत्तान्तः—अँगरेज लोग पहले पहल व्यापार के लिए यहां आये। शुरू शुरू में एशियाखण्ड के उत्तर ओर चीन देश से व्यापार करने का अँगरेजों का विचार था; परन्तु उसमें उन्हें सफलता नहीं प्राप्त हुई। सोलहवें शतक में सर फ्रांसिस ड्रेक नाम के अँगरेज खलासी ने पृथ्वीप्रदक्षिणा की। तभी से अँगरेज खलासी समुद्र पर चारों ओर सफर करने लगे। पहले पहल पुर्तगीज और डच लोगों के साथ व्यापार में उनकी स्पर्धा जारी थी। एलिजाबेथ रानी नें अपने व्यापारियों को इस प्रकार के परवाने दिये कि समुद्र, सार्वजनिक है उस पर चाहे जो सफर करे। पूर्वी देशों में व्यापार करने के लिए ईस्ट इंडिया नाम की एक कम्पनी स्थापित हुई और ३१ दिसम्बर सन् १६०० को उसे उपर्युक्त रानी की ओर से व्यापार करने की सनद मिली। प्रथमतः इस कम्पनी के व्यापारी जावा द्वीप में गये। वहां डच लोगों ने उन्हें बहुत हैरान किया। तथापि उस समय के व्यापार में उन्हें अत्यन्त लाभ होता था। इस लिए और भी बहुत सी कम्पनियां स्थापित हुईं। उनमें से कई आगे चलकर टूट गईं और कई उपर्युक्त ईस्ट इंडिया कम्पनी में शामिल हो गईं। यही एक कम्पनी यहां पर टिक सकी।

सन् १६११ में कप्तान् हाकिन्स ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से जहांगीर बादशाह के पास वकील के तौर पर आया। इस देश में आनेवाले माल पर ३॥ सैकड़ा टिकस देना उसने स्वीकार किया और पश्चिमी किनारे पर सूरत, खंबात आदि स्थानों में कोठियां खोलकर बादशाह से व्यापार करने की आज्ञा प्राप्त कर ली। यही अंगरेजों के व्यापार की नींव है। सन् १६१५ में सर टामस रो नाम का होशियार वकील, इंगलैंड के राजा जेम्स की ओर से, जहांगीर बादशाह के पास, सदा के लिए व्यापार की आज्ञा प्राप्त करने के लिए आया; पर उसे पूर्ण सफलता नहीं प्राप्त हुई। सन् १६२३ में डच लोगों ने अंबोयना में, बड़ी क्रूरता के साथ अँगरेज व्यापारियो को कतल किया; तब से अँगरेजों ने पूर्वीय द्वीपों से अपने व्यवहार छोड दिये। सन् १६३२ में उन्होंनें मछलीपट्टन में कोठी खोली। सन् १६३४ में शाहजहां बादशाह ने बंगाल

में कोठी खोलने के लिये उन्हें आज्ञा दी। सन् १६३९ में उन्होंने मद्रास का फोर्ट सेंट जार्ज किला बनवाया और वहीं वे मछलीपट्टन का थाना लेगये। सन् १६६२ में पुर्तगाल के राजा ने बंबई का टापू इँगलेंड के राजा को दहेज में दिया और इँगलेंड के राजा ने सन् १६६८ में उसे ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ बेच दिया। उस समय वह टापू बिलकुल छोटा था। पहले सूरत व्यापारियों का थाना था। परन्तु जब उस पर मराठों के हमले होने लगे तब वे वहां का व्यापारी थाना सन १६८७ में बम्बई उठा लाये, उस समय इँगलैंड का लोकमत यह था कि व्यापार का ठेका किसी एक को दिया जाय, सब को व्यापार करने की स्वतंत्रता न रहे। इसी विचार के अनुसार इँगलैंड के राजा ने कम्पनी को विशेष हक दिये। इधर औरंगजेब बादशाह से कम्पनी का झगडा हो गया और उसने कम्पनी के सब थाने जप्त कर लिये। परन्तु सन् १६९० में दंड लेकर वे थाने बादशाह ने फिर कम्पनी को लौटा दिये। इस प्रकार बंबई और मद्रास में कंपनी के थाने मजबूत जम गये। सन् १६९८ में उन्होंने कलकत्ते में फोर्ट विल्यम नामक किला बनाया। सन् १७१५ में बंगाल के मुगलों के सूबेदार मुर्शिद कुलीखां ने अँगरेज व्यापारियों को हैरान किया; इस लिए उन्होंने बादशाह के पास उसकी फिर्याद की। उसी समय सर्जन हैमिल्टन ने फर्रुखसियर बादशाह को किसी रोग से अच्छा किया था; इस लिए बादशाह ने प्रसन्न होकर बंगाल में कम्पनी को ३८ शहर दिये और सब कर माफ कर दिये। उसी समय से कलकत्ते का थाना मजबूत हो गया।

पश्चिमी किनारे पर समुद्री डाकू और कुलाबा के आंगरे अँगरेजों पर बहुत उपद्रव कर रहे थे। सन् १७२८ में जब कान्होजी आंगरे मर गया तब उनका बहुत सा उपद्रव कम हो गया। रघूजी भोसला और उसका दीवान भास्करराव बंगाल प्रान्त पर चढाई करके अँगरेजों को तंग करते थे। उस समय वहां के सूबेदार अलीवर्दीखां ने अँगरेजों को बहुत सहायता दी। मराठों से अपने व्यापार का बचाव करने के लिए अँगरेजों ने कलकत्ते में एक खन्दक खोदा। वह 'मराठा खंदक' के नाम से अबतक प्रसिद्ध है। कम्पनी के व्यापारी बडे उद्योगी थे। वे महीन कपडा तैयार करने की कला यहां सीखकर विलायत ले गये। यह कम्पनी के व्यापार का, सन् १७४४ तक का वृत्तान्त हुआ।

६. ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रबन्धः—जब कम्पनी स्थापित होने लगी तब लोगों ने अपनी पूंजी जमा की। उसमें पांच सौ अथवा इससे अधिक पौंड देनेवाले को कम्पकी की पूंजी का मालिक (प्रोप्रायटर्स ऑफ दि कंपनीज स्टॉक) कहते थे। इन मालिको की जब कभी सभा होती तब एक हजार पौंड अदा करने वाले को एक मत, तीन हजार पौंड अदा करने-वाले को दो मत, छे हजार पौंड देने वाले को तीन मत ओर दस हजार अथवा उससे अधिक जमा करने वाले को चार मत देने का अधिकार रहता। यह बडी सभा हुई। परन्तु हमेशा सब कामों की देखभाल करनेवाली 'कोर्ट ऑफ् डायरेक्टर्स' नाम की एक अन्तर्सभा थी। इसमें दो हजार अथवा अधिक रकम जमा करनेवाले २४ सभासद रहते। इस सभा के प्रत्येक आदमी को ३०० पौंड सालाना वेतन मिलता; ओर उनके अध्यक्षों तथा उपाध्यक्षों को ५०० पौंड मिलते थे। इस सभा की ओर भी चार अन्तर्सभाएं भिन्न भिन्न कामों के लिए बनाई गई थी, ओर उनके काम के विभाग बडी सूक्ष्मता से किये गये थे। हिसाब रखना, गुप्त पत्रव्यवहार करना, कायदेकानून बनाना, व्यापार का माल लाना ओर ले जाना, आया हुआ माल बेचना आदि अनेक काम भिन्न भिन्न लोगों को बांट दिये गये थे। व्यापार के सुभीते के लिए हिन्दुस्थान में उन्होंने अपने तीन इलाके बनाये थे। प्रत्येक इलाके में एक कौन्सिल ओर उसका एक प्रेसिडेंट काम देखता। इसके सिवा, रायटर्स, फेक्टर्स, नये व्यापारी ओर पुराने व्यापारी ये चार प्रकार के कम्पनी के नौकर हिन्दुस्थान में रहते। रायटरों का वार्षिक वेतन पांच पौंड था। इसके सिवा उन्हें निजी व्यापार करने की परवानगी रहती थी। इसी प्रकार सिपाही, हरकारे ओर व्यापार की रक्षा के लिए कुछ अंगरेज तथा देशी सिपाही नौकर रहते।

शुरू शुरू के करीब डेढ सौ वर्ष यह कम्पनी व्यापार में जुटी हुई थी। उस समय व्यापार अच्छी तरह चलने में जो अडचने आतीं उन्हींको दूर करने की ओर सिर्फ उसका ध्यान था। डेढ सौ वर्ष के बाद कम्पनी व्यापार का मार्ग छोड कर राज्यस्थापना की धुन में लगी। पहले पहल हिंदुस्थान के विषय में फ्रेंच राजनीतिज्ञ डूप्ले ने इस प्रकार का सूक्ष्म ज्ञान प्रगट किया कि, "हिन्दुस्थान में एकता नहीं है; इस लिये जो कोई तनखाह दे उसी की नौकरी करने के लिए चाहे जितने रणशूर लोग तयार हैं; यहां के राजाओं के आपसी झगडे

हो रहे हैं; ऐसे समय में कुछ उंचे दर्जे की फोजी तालीम यदि इन लोगों को दी जाय तो ये सीखने के लिए तैयार हैं; अमेरिका कथवा आफ्रिका के लोगों की तरह ये लोग जंगली, अज्ञान और डरपोंक नहीं है। " उस चतुर और चाणाक्ष डूले ने यह भी तर्क बांध लिया कि, यदि मदद अच्छी मिलेगी तो हिन्दुस्थान बात की बात में लिया जा सकता है। परन्तु आपस की फूट के कारण उस समय फ्रेंच राष्ट्र यह काम सिद्ध करने के लिय तैयार न था। ईंगलैंड में उस समय शान्ति थी। सारांश, फ्रेंच लोग स्वदेश के झगडों में फंस गये थे, इस लिए उनकी उपर्युक्त कल्पनाओं से अँगरेजो ने बडी सावधानी और धैर्य के साथ लाभ उठा लिया ! इस कारण अन्त में फ्रेंच लोग पीछे पड गये और भारत का स्वामित्व अँगरेजो के हाथ लगा।

पाठ दूसरा।

कर्नाटक और बंगाल।

सन् १७४४-१७६३।

१. समयविभाग। २. फ्रेंचों से पहला युद्ध। ३. कर्नाटक का पहला युद्ध। ४. राबर्ट क्लाईव और अर्काट का घेरा। ५. फ्रेंचों से दूसरा युद्ध। ६. कलकत्ते की कालकोठरी। ७. अनर्थ का बदला-प्लासी की लढाई।

१. समयविभागः—सन् १७४४ में अँगरेजों ने राज्यस्थापना का काम हाथ में लिया और सन् १८१८ में पेशवाई डूबने पर वह काम पूरा हुआ। इस अवधि में अँगरेज और फ्रेंचों का यूरप में भारी झगडा हो रहा था। इस कारण उस समय हिन्दुस्थान में अँगरेजों को जो युद्ध प्रसंग आ पडे उनमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रीति से बहुधा फ्रेंचों का हाथ जरूर रहता था। यूरप में सुलह हो जाने के कारण अथवा अन्य कारण से ये दो राष्ट्र जब प्रत्यक्ष रीति से यहां न लड सकते तब वे यहां के राजाओं को मदद देकर अप्रत्यक्ष रीति से युद्ध करते थे। कर्नाटक और बंगाल के युद्धों का समावेश ऐसे ही युद्धों में होता है। (१) सन् १७४४-४८. फ्रेंचों से

पहला युद्ध। इसमें फ्रेंचों की जीत हुई। लाबरडोने और डुप्ले नामक दो फ्रेंच सरदार प्रमुख थे। (२) सन् १७४९-५४. कर्नाटक का पहला युद्ध। इसमें दोनों की बराबरी रही। फ्रेंचों का डुप्ले और अँगरेजों का क्लाइव मुख्य सरदार था। (३) सन् १७५६-६३. फ्रेंचों से तीसरा अथवा कर्नाटक का दूसरा युद्ध। इसमें फ्रेंचों का पराजय हुआ। फ्रेंचों का मुख्य सरदार काउंट लाली और अँगरेजों के क्लाइव, लारेंस, वॉटसन, आयर कूट आदि थे।

ये कुल तीन युद्ध कर्नाटक में हुए। कोई कोई उन्हें कर्नाटक का पहला, दूसरा और तीसरा युद्ध कहते हैं। पहला और तीसरा युद्ध प्रत्यक्ष रीति से हुआ। परन्तु दूसरे युद्ध के समय यूरप में इन दोनों राष्ट्रों की सुलह हो गई थी; इस कारण वह यहां के राजाओं की मार्फत हुआ। कर्नाटक को पहले कानड़ा कहते थे, परन्तु अँगरेजों ने मंद्रास के पूर्वी किनारे के प्रदेश का नाम कर्नाटक रक्खा। वही नाम अबतक चला आता है।

२. फ्रेंचों से पहला युद्ध, (सन् १७४४-४८):—यूरप में अँगरेज और फ्रेंचों का युद्ध शुरू होने के कारण हिन्दुस्थान में भी उन दोनों राष्ट्रों की बस्तियों में बैरभाव शुरू हुआ। उनमें अँगरेजों की ओर कोई होशियार सेनापति न था। फ्रेंचों की ओर डूप्ले और लाबरडोने नामक दो चतुर पुरुष थे। डूप्ले का वृत्तान्त पिछले पाठ में दिया है। लाबरडोने साहसी पुरुष था। वह छुटपन से जलपर्यटन करता था। सन् १७४० में अँगरेजों का व्यापार नष्ट करने के लिए वह कुछ जहाज लेकर भारत में आया। तब से अनेक पराक्रम कर के उसने फ्रेंचों की सत्ता बढ़ाई। सन् १७४६ में लाबरडोने मद्रास लिया और डूप्ले ने बहुत से अँगरेज व्यापारियों को पकड़ कर पांडिचेरी में कैद कर रक्खा। फिर उन्होंने फोर्ट सेंट डेविड पर हम्ला किया। पर चूंकि अँगरेजों को अर्काट के नबाब की मदद थी, इस लिए फ्रेंच लोग उसे नहीं ले सके। कुछ दिनों बाद अँगरेजों के लिए विलायत से मदद आगई और उन्होंने पांडिचेरी पर हम्ला किया; पर उसमें उन्हें कामयाबी नहीं हुई। इसी प्रकार के झगडे जारी थे कि उधर यूरप में एक्सलाशापेल नामक मुकाम में दोनों राष्ट्रों की सुलह हो गई। एक दूसरे के जीते हुए थानें आपस में वापस मिले, (१७४८)। बादको लाबरडोने और डूप्ले में अनबन हो गई, इस लिए लाबरडोने फ्रान्स को लौट गया। वहां फ्रेंच सरकार ने उसे जेल में डाल दिया। वहीं उसकी मृत्यु हुई। वह चतुर और शूर था।

२. कर्नाटक का पहला युद्ध, (सन् १७४९-५४):—सन् १७४८ में हैदराबाद का मुगल सूबेदार निजामुल्मुल्क मर गया । उसके पांच लडके थे और मुजफ्फरजंग नामक एक उसकी लडकी का लडका था । मृत निजाम की इच्छा थी कि, उसके बाद उसका वही नाती राजकाज करे । तथापि, चूंकि उसका बडा लडका गाजिउद्दीन दिल्ली में बादशाह के दरबार में था इस लिए दूसरा लडका नासिरजंग ही अपने को निजाम कहलाने लगा ।

इसी बीच में अर्काट के नवाब के रियासत के विषय में भी झगडे उपस्थित हुए । वृद्ध निजामुल्मुल्क यह समझता था कि, कर्नाटक का सूबेदार हमारे अधिकार में है । इसी समझ के अनुसार उसने कर्नाटक की नवाबी अन्वरुद्दीन नामक एक आदमी को दी थी । परन्तु चन्दा साहब नामक पहले नवाब का दामाद उस पद पर अपना हक बतलाता था । यह चन्दा साहब डूप्ले का बडा दोस्त था; और डूप्ले भी उसे अपने हाथ में रखकर बडे बडे काम करवा लेना चाहता था, चूंकि चन्दा साहब को डूप्ले की मदद थी इस लिए अँगरेजों ने अनवरुद्दीन का पक्ष लिया । इधर मुजफ्फरजंग नें निश्चय किया कि, चन्दा साहब से दोस्ती कर के फ्रेंचों की मदद से पहले कर्नाटक प्रान्त अपने कब्जे में कर लेना चाहिए और बाद को हैदराबाद की ओर झुकना चाहिए । यह विचार डूप्ले को भी पसन्द आया और उसने अपनी फौज दोनों की मदद में दे कर अनवरुद्दीन से लडाई शुरू की, (सन् १७४८) । सन् १७४९ में अम्बूर नामक मुकाम में बडी भारी लडाई हुई और उसमें अनवरुद्दीन मारा गया । जब उसका लडका मुहम्मदअली त्रिचनापली में भाग गया तब मुजफ्फरजंग ने अपने को निजाम समझ कर अर्काट की नवाबी चन्दा साहब को दी और वे सब पांडिचेरी को गये । इतने ही में मुजफ्फरजंग को परास्त करने के लिए नासिरजंग ने कर्नाटक पर चढाई की और मुजफ्फरजंग को अपने अधिकार में लेकर मुहम्मदअली को अर्काट की नवाबी दी । यह देखकर डूप्ले की चाणाक्ष स्त्री जान बेगम ने पति से कह कर कुछ फौज नासिरजंग पर भेजी । इधर नासिरजंग की फौज उस पर ही बिगड खडी हुई । उसका बन्दोबस्त करते हुए, नासिरजंग गोली लग कर मारा गया । तब मुजफ्फरजंग प्रबल होकर पांडिचेरी गया । वहां डूप्ले ने बडा भारी दरबार कर के मुजफ्फरजंग को निजाम और चन्दा साहब को नवाब मुकर्रर किया । इस अवसर पर डूप्ले को बडे बडे अधिकार और कृष्णा नदी के दक्षिण

लोरं का सारा मुल्क मिला, और फ्रेंच सरदारों तथा सिपाहियों को बडी बडी इनामें मिलीं। बाद को बुशी नामक फ्रेंच सरदार को साथ देकर डूप्ले ने मुजफ्फरजंग को हैद्राबाद रवाने किया। रास्ते में मुजफ्फरजंग के पठानों ने गदर किया, उसमें वह मारा गया। तब निजामुल्मुल्क के तीसरे लडके सलाबतजंग को बुशी ने निजाम बनाकर वही सब इकरार ठहरा लिए जो मुजफ्फरजंग से ठहराये गये थे। इस प्रकार फ्रेंचों की जीत हुई और मालूम होने लगा कि सब अँगरेजों का पक्ष डूबताही है। अनवरुद्दीन का लडका मुहम्मद अली ही सिर्फ चन्दा साहब का शत्रु था। चन्दा साहब ने सोचा कि यदि वह न रहे तो मैं निर्भय हो जाऊं। इसी विचार से उसने मुहम्मद अली को पकडने के लिए त्रिचनापली को जा घेरा। अँगरेजों की सारी निर्भरता मुहम्मद अली ही पर थी। उन्हें ऐसी अडचन आ पडी थी कि उसे छुडाकर नवाब बनाये बिना उनका पक्ष सबल नहीं हो सकता था।

४. राबर्ट क्लाइव और अर्काट का घेरा, (सन् १७५१):—ऐसे संकट के समय अँगरेजों की ओर के एक छोटे से पुरुष ने उनका पक्ष संभाला। इतनाही क्यों? उसीकी चतुराई से मदरास की ओर के फ्रेंचों का जोर नष्ट हुआ, और फिर हिंदुस्थान में अँगरेजों की प्रबलता कायम हुई। मदरास में राबर्ट क्लाइव नामक एक तरुण पुरुष माल के बोरे गिनने के काम पर था। उसने मुहम्मद अली को छुडाने की एक विचित्र युक्ति निकाली और उसे उसने खुदही पूरा किया। अर्काट चन्दा साहब की राजधानी थी। उस पर हल्ला करने से, उसे बचाने के लिए, त्रिचनापली का घेरा छोडकर चन्दा साहब लौट आवेगा। तदनुसार क्लाइव ने भरी बरसात में दो सौ अँगरेज सिपाही और तीन सौ हिन्दुस्थानी सिपाही साथ लेकर अर्काट पर चढाई की, (सन् १७५१)। तब तो चन्दा साहब, क्लाइव के अनुमान के मुताबिक, त्रिचनापली से दौडता हुआ अर्काट को लौट आया। बाद को इक्कीस दिन तक क्लाइव ने बडी वीरता से अपना बचाव किया। चन्दा साहब का अर्काट पर कुछ भी उपाय न चला। इतनेही में मेजर लारेन्स विलायत से बडी भारी फौज ले आया; इधर मुहम्मद अली को मराठों ने भी मदद दी। इस एकत्र हुई सेना के साथ, कावेरी नदी के श्रीरंगम नामक टापू में, चन्दा साहब और उसके फ्रेंच साथियों की लडाई हुई। इसमें फ्रेंचों का पराजय हुआ, (सन् १७५२), बाद को

चन्दा साहब तंजोर के राजा के अधीन होगया; पर उसी ने चन्दा साहब को मार डाला। तत्पश्चात् बाहूर मुकाम में दूसरी बड़ी लड़ाई सन् १७५२ में हुई। उसमें फ्रेंचों का पूर्ण पराजय हुआ। अगले दो वर्षों में अँगरेज और फ्रेंचों की छोटी बड़ी कई लडाइयां हुईं; और आपस में कई बार हारजीत हुई। फ्रेंच सरकार ने यह कह कर कि डूप्ले ने विना हुकम ने युद्ध जारी रखा, उसे लौटा लिया और युद्ध एकदम बन्द कर दिया। डूप्ले के सारे मनसूबे मारे गये। वह बहुत कर्जी होगया था। फ्रेंच सरकार की ओर से उसे कुछ आश्रय भी नहीं मिला। इस लिए उसे अपने अन्तकाल के दिन चिन्ता, कष्ट और दारिद्र्यावस्था में व्यतीत करने पडे। अन्त में कष्ट सहकर उसकी मृत्यु हुई। हां, बुशी ने जरूर, चतुराई से निजाम के दरबार में अपनी प्रतिष्ठा रखी। इधर मुहम्मद अली को नवाबी मिलने के कारण उसके यहां अँगरेजों का गौरव बढा।

५. फ्रेंचों से दूसरा युद्ध, (सन् १७५६-६३):—यद्यपि ऊपर बतलाई हुई सलह हुई तथापि इन दोनों राष्ट्रों की स्पर्धा नहीं थमी। सन् १७५४ में क्लाइव विलायत गया। बाद को सन् १७५६ में यूरप में अँगरेज और फ्रेंचों का युद्ध हुआ। क्लाइव ने वहां जाकर विलायत सरकार को विश्वास करा दिया कि जबतक हिन्दुस्तान में फ्रेंच लोग हैं तब तक युद्ध बन्द होना असम्भव है। इस लिए सन् १७५६ में क्लाइव फिर बडी भारी फौज लेकर और फोर्टसेंट डेविड का गव्हर्नर होकर, फ्रेंचों की शक्ति कम करने के लिए भारत में आया। उसी प्रकार सन् १७५८ में काउंटलाली नाम का एक शूर फ्रेंच सरदार बडी भारी जल-सेना लेकर हिंदुस्थान में आया। लाली स्वभाव में उतावला था। उसे बुशी का उत्कर्ष सहन नहीं हुआ; इस लिए उसने उसे निजाम के दरबार से बुला लिया। बुशी के आते ही निजाम के दरबार में फ्रेंचों का प्रभाव नष्ट हो गया। अँगरेजों का एकदम नाश करने के विचार से लाली ने उनके फोर्टसेंट डेविड किले पर हम्ला करके उसे ले लिया। परन्तु युद्ध जारी रखने के लिए उसके पास धन न था। बेढंगे बर्ताव से वह अपने ही लोगों को अप्रिय हो गया। अँगरेजों ने एक के बाद एक, कई बार, उसका पराभव करके उसे हतवीर्य कर दिया। हैदराबाद में बुशी की जगह पर कान्फ्लान्स नामक सरदार को उसने भेजा था; पर जब सलाबतजंग ने अधिक मदद मांगी तब लाली नहीं दे सका। इस लिए सलाबतजंग ने अँगरेजों से

मदद मांगी। अँगरेज तो ताक में ही थे। उत्तर-सरकार-प्रान्त फ्रेंचों के अधिकार में था। वहां से कर्नल फोर्ड ने फ्रेंचों को भगा दिया और वहां अपना अमल बैठाया। बाद को अँगरेजों के सेनापति कर्नल कूट ने वांदिवाश नामक मुकाम में लाली का पूर्ण पराजय किया, (सन् १७६०)। तत्पश्चात् अँगरेजों ने पांडिचेरी को घेर कर वहां का किला भी जीत लिया। इस प्रकार जब फ्रेंचों का सब जगह पराभव हुआ तब लाली को फ्रेंच सरकार ने बुला लिया। फ्रांस जाने पर उसकी जांच हुई और उसे प्राणदण्ड दिया गया। यह बात ज्यों ही उसे मालूम हुई त्यों ही उसने नकशा खींचने का कंपास, जो उसके हाथ में था, अपने पेट में भोंक कर आत्महत्या कर ली।

बाद को अँगरेज और फ्रेंचों में सुलह हो गई। उसमें सिर्फ पांडिचेरी फ्रेंचों के पास रही और मदरास इलाके में अँगरेजों की सत्ता कायम हुई।

६. कलकत्ते की कालकोठरी, (सन् १७५६):—सन् १७०२ में मुर्शिद कुलीखां नाम के एक होशियार कारपर्दाज को औरंगजेब ने बंगाल का सूबेदार नियत किया। सन् १७२५ में उसके मरने पर उसके दामाद शुजा-उद्दीन ने सन् १७४० तक कारबार देखा। बाद को अलीवर्दीखां नामक सरदार उस प्रान्त का सूबेदार हुआ। उसके समय में बंगाल प्रान्त पर नागपुर वाले भोंसला ने चढ़ाई कर के अपना कर बैठाया। अलीवर्दीखां होशियार था। अँगरेजों के साथ उसकी मित्रता थी। इस कारण उनके व्यापार की भी खूब तेजी थी। अलीवर्दीखां सन् १७५६ ई० में ८० वर्ष का हो कर मर गया। उसके बाद उसकी लड़की का लड़का सिराजुद्दौला सूबेदार हुआ। यह बहुत लोभी था, और अँगरेजों की सम्पत्ति पर उसकी विशेष डाढ़ लगी थी। सन् १७५६ ई० में सिराज ने ये दो बातें अँगरेजों को लिख भेजीं, (१) किशनदास नाम का एक श्रीमान् व्यापारी हमारी राजधानी मुर्शिदाबाद छोड़ कर कलकत्ते में जा बसा है, उसे लौटा देना चाहिये, और (२) कलकत्ते के किले में जो नई मजबूती अँगरेजों ने की है उसे गिरा देना चाहिये। इस पर कलकत्ते के गवर्नर ड्रेक ने किशनदास के विषय में जवाब न देते हुए किले की मजबूती के विषय में यह लिखा कि—"हमने नवीन कुछ नहीं किया। सिर्फ पुरानी दीवाल की मरम्मत की है।" इस विषय में बहुत चर्चा होने पर अन्त में सिराज ने क्रोध से बड़ी फौज लेकर कलकत्ते पर चढ़ाई की।

तब वहां के कई अँगरेज जल्दी जल्दी से हुगली नदी में जहाज में बैठ कर भाग गये। पीछे सिराज ने किला ले लिया। अँगरेजों के खजाने में बहुत सा धन न देख कर उसे बहुत खेद हुआ। वहां उसे जो १४६ अँगरेज मिले उन्हें उसने कैद किया। उसने जिस अधिकारी के अधीन उन अँगरेजों को सौंपा था उसने उन्हें उस रात में एक बीस वर्ग फुट की कोठरी में भर कर बांध रखा। कोठरी में हवा आने को मार्ग न था। जून महिने की गर्मी थी। उन्हें कोई पानी नहीं देता था और सूबेदार के पास कोई उनकी खबर भी न लगाता था। उन्होंने विनती की कि, एकदम गोली चला कर मार डालो। परन्तु पहरेवालों ने यह बात भी नहीं मानी। सुबह ज्यों हीं दरवाजा खोल कर देखते हैं तो उसमें सिर्फ २३ आदमी मृतवत् जीते मिले। इसको "कलकत्ते की कालकोठरी" का वृत्तान्त कहते हैं। बचे हुए लोगों को सिराजुद्दौला ने मुर्शिदाबाद भेज दिया और अँगरेजों के सब थाने जप्त कर लिये। जून के अन्त में अँगरेजों का एक भी थाना बंगाले में नहीं रहा।

७. अनर्थ का बदला-प्लासी की लडाई (सन् १७५७)—जब यह भयंकर खबर मद्रास पहुँची, उस समय क्लाइव विलायत से हाल ही में लौटा था। वह कुछ फौज लेकर स्थल-मार्ग से कलकत्ते गया। और कुछ फौज जलमार्ग से वॉटसन के अधिकार में आई। पहले पहल उन्होंने सिराज के लोगों को भगा कर अपने थाने जीत लिए। बादको शीघ्र ही सूबेदार और अँगरेजों में सुलह हो गई (फरवरी सन् १७५७) और किलों की मरम्मत करने का हुक्म तथा कम्पनी का नुकसान अदाकर देना सूबेदार ने कबूल किया। इधर अँगरेज और फ्रेंचों का युद्ध शुरू हो गया। इस कारण फ्रेंचों को कमजोर करने के लिये अँगरेजों ने उनका बंगाले का मुख्य स्थान चन्द्रनगर जीत लिया; और बंगाले से फ्रेंचों की सब सत्ता नष्ट करने के लिए वे सिराज से मदद मांगने लगे। परन्तु दो परदेशियों का अपने राज्य में आकर लडना सूबेदार को अच्छा नहीं लगा, इस लिए उसने अँगरेजों से युद्ध करने का निश्चय किया। इस काम में उसने फ्रेंचों से मदत मांगी; पर वह समय पर नहीं पहुंच सकी। सिराजुद्दौला बहुत चतुर न था; इस कारण वह अपनी प्रजा को भी अप्रिय था। अलीवर्दीखां की बहिन जिस मीरजाफर अलीखां को व्याही थी वही सिराज का सेनापति था। सीराज से उसकी

अनबन थी। इस लिए क्लाइव ने उसकी मदद से सीराज को सूबेदारी से अलग कर देने का विचार किया। अन्त में यह गुप्त सलाह निश्चित हुई कि क्लाइव लडाई के लिए तैयार हो और ठीक लडाई के अवसर पर जाफर अली फौज के साथ क्लाइव से आ मिले। तैयारी हो जाने पर १३ जून सन् १७५७ को सब अँगरेजी फौज मुर्शिदाबाद पर चढ़ गई। सिराज को जब यह खबर मिली तब वह घबडाया हुआ, फौज लेकर, मुर्शिदाबाद के दक्षिण ओर ४० मील पर प्लासी गया। क्लाइव के पास १००० यूरोपियन और २१०० देशी सेना थी। तथापि जाफर अली के कहने पर भरोसा रख कर उसने युद्ध ही का निश्चय किया।

जगत्सेठ और उमीचन्द नामक मुर्शिदाबाद के दो साहूकार बडे प्रतिष्ठित थे। उन्हें उपर्युक्त सब हाल मालूम था। इसे गुप्त रखने के लिए उमीचन्द ने क्लाइव से बहुत सा धन मांगा। क्लाइव ने उसे धन तो नहीं दिया, परन्तु एक विचित्र प्रकार से उसे धोखा दिया। सूबेदार की फौज में ५०,००० पैदल, १८,००० सवार और ५० तोपें थीं। ३० जून को सूबेदार की फौज ने अँगरेजी फौज पर धावा किया। लडाई शुरू होते ही मीरजाफर बहुत सी फौज लेकर समरभूमि से चला गया। इस कारण क्लाइव के हमला करते ही सिराज की फौज घबडा कर भाग गई। सिराज मुर्शिदाबाद भाग गया; पर जब वहां उसे किसीने आश्रय न दिया तब वह दो नौकरों को साथ ले फकीर का वेष बना कर भग चला। रास्ते में जाफरअली के लडके मीरनें ने उसे पकड कर मार डाला। इतिहास का क्रम बदल डालने वाली जो कई लडाइयां हुई हैं उन्हीं में प्लासी की लडाई की गणना है।

लडाई खतम होने पर जाफरअली को मुर्शिदाबाद लाकर क्लाइव ने सूबेदार बनाया। बाद को इनामें बांटने का उत्सव हुआ। उसमें अकेले क्लाइव ने अपनी मिहनत के उपलक्ष में तीस लाख रुपये लिये। अन्य अँगरेजों ने भी अपनी अपनी योग्यता के अनुसार धन लिया। इसके सिवा जाफर को कम्पनी का एक करोड रुपया देना था। परन्तु इतनी रकम खजाने में न होने के कारण सामान और जवाहिर आदि दे कर बहुत कुछ अदा किया; और कुछ छूट मिलने पर भी अन्त मे पांच लाख का देना बना ही रहा। हुगली नदी के किनारे का दस लाख की पैदावारी का मुल्क मीरजाफर ने कम्पनी को दिया

और निश्चय हुआ कि उसके बदले में सिर्फ ९० हजार रुपया सालाना कम्पनी सूबेदार को दें । इनामें बांटने का दरबार जब हुआ तब क्लाइव ने उमीचन्द से प्रकट किया कि–' तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा । ' यह सुनते ही वह बेहोश हो गया और कुछ दिनों बाद उसी शोक में वह मरा । इस प्रकार बंगाल प्रान्त का सूबेदार अँगरेजों के अधीन हुआ ।

पाठ तिसरा ।

राज्य–स्थापना का आरम्भ ।

सन १७६१–१७७२ ।

१. मीरजाफर और क्लाइव ।	२. नबाब मीरकासिम ।
३. मीरकासिम से युद्ध ।	४. क्लाइव का किया प्रबन्धः–
५. दुहरे राज्य प्रबन्ध के परिणाम ।	(अ) कम्पनी के नौकरों का ।
६. दि रेग्युलेटिंग ऐक्ट ।	(आ) बंगाल के कारबार का ।
७, क्लाइव का अन्त और योग्यता ।	८. ईस्ट इण्डिया कम्पनी का हाल ।

१. मीरजाफर और क्लाइवः—मीरजाफर बंगाल प्रान्त का कारबार करने योग्य न था । उसने अपने नातेदारों को बडे बडे पद पर नियत किया, इस लिए लोग बहुत नाखुश हुए । क्लाइव ने फ्रेंच और डच लोगों की बहुत सी सत्ता बंगाल से नष्ट कर दी थी । यह बात मीरजाफर को नहीं अच्छी लगी । चिनसुरा नामक स्थान बंगाल में डच लोगों के अधिकार में था । उसकी मजबूती करने के लिए जावा टापू से, डच लोगों के बटेविया नामक बन्दर से, लडाई वाले जहाज चिनसुरा में आये । भीतर से मीरजाफर और उसके लडके मीरन की सलाह डच लोगों से हो गई थी । डच लोगों ने कलकत्ते पर हम्ला किया । परन्तु कर्नल फोर्ड ने उनका पराभव किया, (सन् १७५९) ।

दिल्ली के बादशाह शाहआलम ने अवध के वजीर सुजाउद्दौला की मदद लेकर, बंगाल प्रान्त पर अपनी सत्ता स्थापित करने के हेतु से, सन् १७५९ में पटने पर चढाई की । उस समय रामनारायण नामक मीरजाफर का एक अधिकार पटना में रहता था । उसने शेहर का बचाव किया; और

क्लाइव ने भी उसे मदद भेजी। अन्त में क्लाइव ने मीरजाफर से बादशाह को कुछ धन दिलाकर उसे लौटा दिया। इस उपकार के बदले में बादशाह ने क्लाइव को ग्यारह हजार फौज का अधिकार और अमीर का खिताब दिया। इस समय हिन्दुस्थान में चारों ओर अस्वस्थता फैली थी। इस लिए क्लाइव का मत था कि बंगाल में कम्पनी एकदम अपना राज्य स्थापित कर ले; और इसी बात का प्रयत्न करने के लिये वह सन् १७६० में दूसरी बार फिर विलायत गया। उसे लार्ड की पदवी मिली और बड़ा गौरव हुआ। परन्तु उस समय हिन्दुस्थान में राज्य स्थापित करने का उसका विचार वहां पसन्द नहीं पड़ा।

२. नवाब मीरकासिम, (सन् १७६१):—क्लाइव के बाद वान्सिटार्ट बंगाल का गवर्नर हुआ। मीरजाफर के कारबार के विषय में उसके पास शिकायत हुई थी; इस लिए मुर्शिदाबाद जा कर उसने सब जांच की और मीरजाफर को गद्दी से उतार कर उसने उसके दामाद मीरकासिम को नवाब मुकर्रर किया। मीरजाफर को अँगरेजों का बहुतसा कर्ज देना था। वह सब मीरकासिम ने दे डाला। इसके सिवा बर्दवान, जटगांव और मेदिनापुर नामक पचास लाख पदावारी के तीन जिले और अँगरेजों को दिये। मीरजाफर कलकत्ते में अँगरेजों के पास जा रहा।

इसी बीच में शाह आलम बादशाह और अवध के वजीर सुजाउद्दौला ने बंगाल पर दूसरी चढाई की, (सन् १७६१)। कासिम ने अँगरेजों की मदद से बादशाह का पराजय किया। कारनेक साहब अँगरेजी फौज का मुखिया था; उसने बादशाह को पटना में बुला कर उससे सुलाह कर ली। बडा भारी दरबार हुआ। उसमें कासिम ने बादशाह को नजराने दिये। बादशाह ने सूबेदारी के वस्त्र कासिम को दिये। बादशाह का आग्रह था कि हमें अँगरेज दिल्ली में ले जाकर तख्त पर बैठावें। पर यह बात अँगरेजों ने नहीं कबूल की। इस लिए बादशाह निरुत्साह हो कर वजीर के साथ अवध को लौट गया, (सन् १७६१)।

३. मीरकासिम से युद्ध, (सन् १७६३-६४):—मीरकासिम और अँगरेजों में बहुत दिन नहीं पटी। कारण यह है कि अँगरेजों की तावेदारी उसे पसन्द न थी। गुप्त रीति से अपनी मजबूती करके वह अँगरेजों से

के लिए तैयारी करने लगा। चूंकि उसकी राजधानी मुर्शिदाबाद अँगरेजों से बिलकुल नजदीक थी, इस लिए वह कलकत्ते से कुछ दूर भागीरथी के किनारे मुंगेर नामक शहर में अपनी राजधानी उठा ले गया। उसी प्रकार उसने निरुपयोगी फौज को छुट्टी देकर, कवायद सिखला कर नवीन फौजें तैयार कीं; और तोपें तथा बन्दूकें तैयार करने के कारखाने खोले।

दूसरा कारण टीकस या महसूल के विषय का था। बंगाल प्रान्त का बहुत सा व्यापार जलमार्ग से होता था, इस कारण जगह जगह टिकस वसूल करने के नाके थे। फर्रुखसियर बादशाह के जमाने में विलायत से आये हुए माल पर कम्पनी को टिकस की माफी मिल गई थी। कुछ काल बाद कम्पनी के नौकरों ने अपना निजी व्यापार बढा लिया और नमक, तम्बाकू, सुपारी, तेल, घी, शक्कर, चावल, सोंठ, अफीम आदि देशी माल का भी रोजगार करने लगे। वास्तव में वह कम्पनी का व्यापार न था; किन्तु निजी व्यापारियों तक को टिकस की माफी का परवाना कम्पनी की ओर से मिलने लगा। तब से बंगाल के देशियों का व्यापार बिलकुल डूब गया; क्योंकि अंगरेजों पर टिकस माफ होने के कारण वे चाहे जो माल चाहे जहां ले जा कर सस्ते भाव से बेच सकते थे। इसी कारण सूबेदार की टिकस की आमदनी भी बिलकुल डूब गई। इस बात के लिए उसने अँगरेजों से बहुत फिर्याद की; परन्तु जब वह किसीने ध्यान ही न दिया तब लाचार होकर उसने अपने राज्य में एक तरफ से सभी के लिए टिकस माफ कर दिया। इससे तुरन्त ही सब व्यापार पूर्ववत् जारी हो गया। परन्तु जब अँगरेजी व्यापारियों का नुकसान होने लगा; तब कौंसिल ने यह निश्चय किया कि नवाब को टिक्स माफ करने का अधिकार नहीं है। इस कारण दोनों पक्षों का कलह बढता गया और लडाई होने तक नौबत आ पहुँची। पटना में अँगरेजों की कोठी का मुखिया एलिस साहब था और यही सूबेदार के यहां रेजिडेन्ट भी था, उसने पटना के किले को घेर लिया। यह जान कर, कलकत्ते से हथियारों से भरे हुए कुछ जहाज जो पटने को जा रहे थे, उन्हें मुँगेर में सूबेदार ने पकड लिया और उसने अँगरेजों से कहा कि 'यदि तुम एलिस को हमारे पास भेज दोगे तो मैं जहाज छोड दूंगा।' परन्तु जब अँगरेजों ने कुछ न सुना तब सूबेदार ने हुक्म दिया कि जहां जितने गोरे मिलें सब को पकड लो। उस समय अनेक लोग सूबेदार के हाथ में पड़

गये। इधर बंगाल की कौंसिल ने मीर कासिम को पदच्युत करने का निश्चय किया और कलकत्ते से वृद्ध मीरजाफर को मुर्शिदाबाद ले जाकर सूबेदार बनाया, (जून सन् १७६३)। अँगरेजों के आते हि मीरकासीम सब अँगरेज कैदियों को साथ लेकर भग गया। बाद को घेरिया में बड़ी भारी लड़ाई हुई और मीर कासिम हार गया। अक्टोबर में मुंगेर शहर पर अँगरेजों ने कब्जा कर लिया। तब तो मीरकासिम को बहुत क्रोध आया और, पटना में वॉल्टर रेन्हार्ट उर्फ सुमरू नामक एक यूरोपियन से करीब १५० अँगरेज कैदियों को उसने मरवा डाला। उन्हीं में एलिस भी मारा गया। बाद को जब अँगरेजों ने पटना शहर पर अधिकार कर लिया तब कासिम अवध के वजीर और बादशाह के आश्रय में भाग गया। वहां तीनों ने सलाह कर के बंगाल प्रान्त अँगरेजो के हाथ से छुडाने के लिए चडाई की; पर पटना में उन्हों ने शिकस्त खाई। कुछ दिनों बाद मेजर मनरो ने बक्सर में फिर तीनों का पराभव किया, (सन् १७६४)। इस लड़ाई से बंगाल प्रान्त वापस मिलने की मुसलमानों की सब आशा मिटगई, और वह प्रान्त एक प्रकार से बिलकुल अँगरेजों के अधिकार में चला ही गया। वजीर ने रुहेलों और मराठों की मदद लेकर कुछ दिन तक और प्रयत्न किया; पर वह सफल नहीं हुआ।

९. क्लाइव का किया हुआ प्रबन्ध (सन् १७६५–६७):—गवर्नर वान्सिटार्ट की मियाद खतम होने पर राजकाज करने के लिए जब कोई योग्य पुरुष न मिला तब क्लाइव को ही कम्पनी ने बंगाल का गवर्नर नियत करके भेजा। उस समय उसकी उम्र ४० वर्ष की थी। वह चाहता था कि बंगाल प्रान्त एकदम अपने अधिकार में करके उसका उत्तम प्रबन्ध किया जाय। परन्तु इस प्रकार का अधिकार उसे विलायत सरकार ने नहीं दिया। कम्पनी के नौकरों में घूस और इनामें लेना, ऐशआराम करना, फिजूल खर्च आदि दुर्गुण भरे हुए थे। हिन्दुस्थान में आने पर उनकी यह दशा सुधारने के लिए क्लाइव ने अनेक प्रयत्न किये; पर उस समय उसे इस काम में विशेष सफलता नहीं हुई। क्लाइव ने मुख्य दो इन्तिजाम किये। अव्वल कम्पनी के नौकरों के सम्बन्ध मे और दूसरा बंगाल के राज्य—प्रबन्ध के सम्बन्ध में।

(अ) कम्पनी के नौकरों के सम्बन्ध में क्लाइव का इन्तिजामः— (१) कम्पनी के नौकर निजी व्यापार न करें। (२) फौजी और

नौकरों को, काम पर रहते हुए, भत्ता के रूप में जो अधिक वेतन मिलता है वह न मिले। (३) घूस, नजराना और इनाम आदि कोई भी न ले।

इस सुधार के परिणामः—जिन नौकरों को रुपये खा जाने की आदत पड रही थी उन्हें ये बातें नहीं रुची । डरवाने के लिए अनेक लोगों ने अपनी नौकरियों से इस्तीफे दिये। क्लाइव ने उन्हें शान्ति से स्वीकार किया । ऐसे आदमियों को उसने कलकत्ते भेज दिया। फौज के गोरे सिपाहियों ने प्रत्यक्ष रीति से गदर मचाया, उसे क्लाइव ने देशी फौज की मदद से शान्त किया।

(आ) बंगाल का राज्य-प्रबन्धः—बंगाल में तीन सत्ताधीशों के साथ अँगरेजों का सम्बन्ध हो गया था। १ बंगाले का सूबेदार, २ अवध का वजीर शुजाउद्दौला और ३ दिल्ली का बादशाह । बंगाल का सच्चा मालिक बादशाह था। क्लाइव चाहता था कि बादशाह को सन्तुष्ट रख कर उसका स्वामित्व ले लिया जाय। परन्तु बंगाल प्रान्त को एकदम अपने अधिकार में लेने के लिए विलायत सरकार ने उसे मना किया था । इस कारण तीनों से अलग अलग ठहराव करके उसने उस समय झगडे का कारण मिटा दिया । वे ठहराव इस प्रकार है।

(१) बंगाल के सूबेदार से किया हुआ ठहरावः—मीरजाफर वृद्ध होकर पहले ही मर गया था। उसके लडके नजमुद्दौला को बंगाल की सूबेदारी पर कायम करके, मुहम्मद रजाखां को मुर्शिदाबाद में और राजा सिताबराय को पटना में उसका कारबारी नियत किया। इन्हीं दोनों को सब मुल्की और दीवानी कारबार दिया गया। यह निश्चय हुआ कि सूबेदार के खर्च के लिए ५० लाख की पेंशन नियत कर दी जाय और बाकी सब आमदनी कम्पनी ले। इसके सिवा यह भी निश्चय हुआ कि ५० लाख रुपये खर्च करके प्रान्त की रक्षा के लिए फौज रखी जाय।

इस प्रकार चार करोड रुपये की आमदनी का बंगाल प्रान्त अँगरेजों के हाथ आया। इससे, क्लाइव ने यह अनुमान किया था कि, दो करोड का लाभ कम्पनी को होगा।

(२) अवध के वजीर के साथः—क्लाइव ने इलाहाबाद जाकर जो ठहराव किया वह इस प्रकार है। :—

(अ) कम्पनी के साथ बिना कारण लढाई मचाने के बदले में जुर्माने के तौर पर ५० लाख रुपया वजीर कम्पनी को दे।

(आ) वह कोडा और इलाहाबाद नामक अपने दो परगने बादशाह के खर्च के लिए लगा दे।

(इ) अवध प्रान्त में कम्पनी के व्यापार पर सब प्रकार की टिकस माफ कर दे।

(ई) वजीर को कर देनेवाले काशी के राजा ने पिछले युद्ध में अँगरेजों को मदद दी थी इस लिए वह वजीर से स्वतन्त्र किया गया।

(३) बादशाह के साथ ठहरावः—दुहरा राज्य प्रबन्ध, (डिब्बल गवर्नमेन्टः)—

(अ) पहले बंगाल प्रान्त से बादशाह को एक करोड रुपये की आमदनी थी, उसके बदले अब सालाना छब्बीस लाख रुपये उसे मिले और कोडा तथा इलाहाबाद के प्रान्त उनीके अधिकार में रहे। इतनी ही आमदनी से बादशाह अपना खर्च चलावे। (आ) बंगाल प्रान्त की दीवानी, अर्थात् माल का इन्तिजाम बादशाह ने अँगरेजों को दिया। यह भी बादशाह ने लिख दिया किया कि निजाम का उत्तर-सरकार-प्रान्त भी मोका लगने पर अंगरेज उनसे ले लें। (इ) अन्य राजाओं से कम्पनी सम्बन्ध न रखे।

इन सब ठहरावों से जो एक प्रकार का विशिष्ट राज्यप्रबन्ध उत्पन्न हुआ उसे "क्लाइव का दुहरा राज्य–प्रबन्ध" कहते हैं। उसका अर्थ इस प्रकार हैः—मुगलों के समय में प्रत्येक सूबेपर दो अफसर रहते थे; एक निजाम और दूसरा दीवान। दीवान की तरफ मालगुजारी का सब काम रहता; और निजाम की तरफ फौजदारी का काम रहता था। उपर्युक्त ठहराव से बादशाह ने बंगाल प्रान्त की दिवानी अँगरेजों को दी। इस कारण अँगरेजों को बंगाल से प्रतिवर्ष चार करोड रुपये वसूल करने का अधिकार मिला। मालगुजारी लेनेवाले पर रैयत के बन्दोबस्त की जवाबदारी रहती है। पर चूंकि वह काम निजाम का है; इस लिए वह अंगरेजों की ओर न जाकर देशी अधिकारियों ही के हाथ में रहा। अर्थात् बंगाल प्रान्त पर दोनों की हुकूमत जारी हुई–एक दीवान की और दूसरी निजाम की। इसीको 'दुहरा राज्य–प्रबन्ध' कहते हैं। क्लाइव को, निजामी न लेने के लिए, डायरेक्टर्स ने सख्त हुक्म दे रखा था। सब बातें बादशाह का बडप्पन कायम रख कर करनी थीं। एक तरफ बादशाह और दूसरी तरफ विलायत सरकार तथा कम्पनी–इन दोनों पक्षों को खुश रख कर

अपना उद्देश सिद्ध करना क्लाइव का अभीष्ट था। इस प्रकार के काम करके सन् १७६७ में क्लाइव विलायत लौट गया।

५ दुहरे राज्य-प्रबन्ध के परिणामः—क्लाइव के प्रबन्ध से बादशाह के सम्बन्ध में ईस्टइण्डिया कम्पनी का अधिकार दक्षिण के निजाम तथा अन्य सूबेदारों के बराबर ही-और शायद कुछ अधिक ही-बढ़ गया। (१) क्लाइवने दीवानी और फौजदारी कचहरियां बंगाल प्रांत में स्थापन जरूर कीं; परन्तु उनका अधिकार कम्पनी की तरफ न था; किन्तु सूबेदार के अधिकारियों की तरफ था। यह प्रबन्ध सफल होना असम्भव था कि, मालगुजारी का रुपया तो एक ले और न्याय दूसरा करे। इस प्रबन्ध के कारण रैयत को महा कष्ट होने लगा। जमींदार लोग रुपया वसूल करने के लिए नाना प्रकार के जुल्म रैयत पर करने लगे। पहले शासनकाल में इतना तो था कि, रैयत सूबेदार के यहां अपना उज्र पेश कर सकती थी; पर अब तो वह भी सुभीता नष्ट हो गया; इस कारण रैयत हैरान हो गई। कम्पनी के अधिकारी सिर्फ रुपया वसूल करने की परवा करते थे। (२) बंगाल प्रांत को तुरन्त ही भिक्षाभवन की नौबत आ पहुँची। वसूली का रुपया लोगों की तरफ से न आने लगा। मुहम्मद रजाखां और सिताबराय कम्पनी के नौकरों को खुश रखने के सिवाय और कुछ न करते। उनके खिलाफ बहुत सी शिकायतें कम्पनी की तरफ गुजरी; पर जो आदमी उनकी जांच के लिए भेजे गये उनका उन दोनों ने इतना गौरव किया कि, वे जांच करने वाले चकाचौंध में आ गये। इधर कम्पनी के नौकरों का निजी व्यापार बढने से कम्पनी का व्यापार बैठ गया। न वसूल की पैदावरी रही और न व्यापार की। तब तो विलायत में कम्पनी के अधिकारी भी बहुत नाखुश हुए। इतने ही में सन् १७७० में बंगाल प्रांत में बडा भारी अकाल पडा; उसमें करीब एकतृतीयांश लोकसंख्या का संहार हो गया। (३) इस कारण विलायत में ये परिणाम हुएः-यहां की हकीकतें विलायत में डायरेक्टर्स के कानों तक पहुँचीं और वे समझ गये कि क्लाइव के किये हुए राज्य-प्रबन्ध के ये परिणाम हैं। पार्लिमेन्ट में भी खूब तेजी के वादविवाद शुरू हुए। इस प्रकार का शोरगुल मचा कि एक तरफ से हिन्दुस्थान के राजाओं को पदच्युत करके उनका सर्वस्व कम्पनी ने हरण कर लिया। विलायत में भी कम्पनी के व्यापारी धन जमा करके डायरेक्टरों की जगह प्राप्त करने लगे। अन्त में पार्लिमेन्ट ने

इन सब बातों की जांच करने के लिए दो कमेटियां नियत कीं। तब कम्पनी की काररवाइयां खुलीं और यह भी मालूम हुआ कि कम्पनी की आमदनी में टोटा आया है और वह बहुत कर्जदार हो गई है। उस समय एक यह भी विचार सूझ पड़ा कि कम्पनी के हाथ से सब कारबार लेकर इँग्लैंड का राजा उसे एकदम अपने हाथ में कर ले। परन्तु यह विचार सन् १८५७ तक अमल में नहीं लाया गया। तथापि उस समय का मौका टालने के लिये पार्लिमेन्ट ने हिन्दुस्थान के राज्य–प्रबन्ध के विषय में नवीन कायदा बनाया। उसे 'दि रेग्युलेटिंग ऐक्ट' कहते हैं, (सन् १७७३ ई०)

६. दि रेग्युलेटिंग ऐक्ट:—इसकी दफाएं इस प्रकार हैं:—

(१) विलायत सरकार कम्पनी को एक करोड रुपया कर्ज दे।

(२) कम्पनी के किसी भी सभासद को चार से अधिक मत देने का अधिकार न रहे। और डायरेक्टर्स बारी बारी से बदलते जावें।

(३) बंगाल के गवर्नर को गवर्नर जनरल का उदाह दिया जाय और उसका अधिकार और भी सब इलाकों पर रहे; तथा उसकी तैनाती प्रति पांचवें वर्ष पार्लिमेन्ट की ओर से हो।

(४) कलकत्ते में न्याय की एक बडी कचहरी स्थापित की जाय; उस पर एक विद्वान् मुख्य न्यायाधीश मुकर्रर किया जाय और उसके नीचे तीन न्यायाधीश विलायत से नवीन नियत किये जावें। इस न्यायालय को सब प्रकार के मुकद्दमों का फैसिला करने का पूर्ण अधिकार रहे।

(५) कलकत्ते में आजतक जो बारह व्यापारी सभासदों की एक कौन्सिल है, उसे तोड कर उसकी जगह में विलायत से नियत किये हुए चार होशियार सभासदों की एक कौंसिल गवर्नर जनरल मदद की रहे; और उसमें सब बातों का फैसिला बहुमत से हो।

(६) हिंदुस्थान का राजकाज विलायत के प्रधानमंडल की मार्फत चलाया जाय।

(७) कोई भी सरकारी नौकर इनाम, नजराना आदि न ले और न निजी व्यापार करे।

इस कायदे के अनुसार गवर्नर जनरल की जगह पर वॉरन हेस्टिंग्ज की तैनाती हुई । उसकी कौंसिल में जनरल लेवरिंग, कर्नल मॉन्सन और सर फिलिप फ्रॅान्सिस नामक तीन आदमी विलायत से नवीन आये; और बार्वेल नामक हिन्दुस्थान का ही एक साहब चौथा समासद नियत किया गया । उसी प्रकार सर एलिजा इम्पे नामक एक विद्वान् साहब मुख्य न्यायाधीश के काम पर मुकर्रर किया गया ।

७. क्लाइव का अन्त और योग्यताः—क्लाइव हिन्दुस्थान में तीन दफ आया और तीनों बार जो काम उसने यहां किये वे ऊपर बतलाये ही गये हैं। सन् १७६७ में विलायत लौट जाने पर, पीछे बतलाई हुई बंगाल की अनिष्ट दशा क्लाइव के मत्थे मढी गई । लोग उससे द्वेष करने लगे । 'प्रत्येक फरेब और लबाडी में निष्णात' इस प्रकार के नाम उसे मिलने लगे । तथापि, जांच के लिये नियत की हुई कमेटी के सामने जवाब देकर वह अपने सब कृत्यों के विषय में निर्दोषी ठहरा । पार्लिमेंट के सामने एक प्रभावशाली वक्तृता देकर उसने शत्रुओं के मुँह बन्द कर दिये । उसका बर्ताव निन्दनीय ठहराने के लिए पार्लमेन्ट के सामने सूचना आई थी; परन्तु वह नापसन्द हुई और अन्त में यही निश्चय हुआ कि,—"क्लाइव ने स्वदेश की अत्यन्त प्रशंसनीय और महत्त्वपूर्ण सेवा की है।" इस प्रकार उतरती अवस्था में पाँच सात वर्ष सतत कष्ट सहकर, अपने राष्ट्र से भी अधिक लोकसंख्या का राष्ट्र अपने राज्य में मिला देने वाला, यह पुरुष सन् १७७४ में परलोक सिधारा । कहते हैं कि, लोगों में बेइज्जती होने से और हिन्दुस्थान में किये हुए अपने कपट कर्मों के विचार से उसका मन बिगड गया और उसने आत्महत्या की । वह बहुत होशियार, चालाक, अत्यन्त साहसी और दूरदर्शी था । हिन्दुस्थान की दशा पहचान कर उसने बात की बात में यह ताड लिया कि, यहां अँग्रेजों का राज्य स्थापित किया जा सकता है । पहले पहल उसके विचार लोगों को पसन्द न आते थे पर आगे चलकर उसकी योग्यता लोगों पर प्रकट हो गई । अँगरेज लोगों में यह एक बडा गुण पाया जाता है कि, राजस्थापना के काम में वे अपने नौकरों की प्रतिष्ठा कायम रखते हैं। क्लाइव और हेस्टिंग्ज् तथा डुप्ले और लाली की अन्तिम दशा का भेद ध्यान में लाने से अँगरेज और फ्रेंचों का जातीय भेद मालूम हो जायगा ।

८. ईस्ट इंडिया कंपनी का वृत्तान्त-(सन् १७४४-७३):—सन् १७४४ तक कंपनी का वृत्तान्त ऊपर बतला दिया गया है। इस वर्ष से लेकर कंपनी के व्यवहार अधिक विकट और झगडालू होते गये; इस लिए यहां से लेकर सन् १८५८ तक का (जब कंपनी टूटी) सब हाल अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण है। यह बात ऊपर के विवेचन से समझ में आजायगी कि व्यापार का काम जरा ढीला कर के राज्य स्थापित करने का क्रम उसने कैसा जारी किया। यही क्रम आगे चलकर जब उसने जोर शोर से जारी किया तब व्यापार पीछे पड गया और राज्य बढता गया। कंपनी के कार्य के विषय में जब विलायत में शोरगुल मचा तब उसकी व्यापार की सनद सन् १७७३ में ले ली, गई और निश्चय हुआ कि वह किसी नियत मुद्दत के लिए, आवश्यकतानुसार फिर दी जासकती है। यह नियत मुद्दत बीस वर्षों की रहती थी। इस लिए कम्पनी के इतिहास में १७७३, १७९३, १८१३, १८३३ और १८५३ के साल महत्त्व के हैं। उसमें भी विशेष कर पहले दस वर्षों में कम्पनी के कारबार की प्रति तीसरे साल जांच होने लगी। सन् १७८१ से सन् १७९४ तक और बाद को पार्लिमेन्ट में वादविवाद हुए। राज्य-स्थापना के उद्योग का प्रारम्भ यदि सन् १७४४ का साल माना जाय तो राज्यस्थापना का प्रारम्भ सन् १७७३ ही माना जा सकेगा। क्योंकि इसी समय से गवर्नर जनरलों का नियत होना शुरू हुआ और कम्पनी का कारबार टूटने लगा। धीरे धीरे कम्पनीका अधिकार और व्यापार का ठेका कम होता गया और अन्त में सन् १८५८ में विलायत सरकार ने राज्य-प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया।

पाठ चौथा।

वारन हेस्टिंग्स्।

सन् १७७४-१७८५।

१. वारन हेस्टिंग्स्।
(१) पूर्ववृत्तांत।
(२) कौंसिल के झगडे।
(३ नन्दकुमार का मामला
३. हेस्टिंग्स् के युद्ध।
(१) हैदर अली का उदय।
(२) मैसूर से पहला युद्ध।
(३) मैसूर से दूसरा युद्ध।
५. हेस्टिंग्स् की योग्यता।

२. धन इकट्ठा करने की कार्रवाइयां।
(१) सूबेदार की पेंशन कम करना।
(२) बादशाह का कर बंद करना।
(३) कोडा और इलाहाबाद की बिक्री।
(४) रुहेलों से युद्ध।
(५) चेतसिंहका मामला।
(६) अवध की बेगमें।
(४) हेस्टिंग्स् का राज्य-प्रबंध
६. उसकी जांच और फैसिला।

१ वारेन हेस्टिंग्स्, (सन् १७७२-८५):—

(१) **पूर्ववृत्तांतः**—वह सन् १७३२ में पैदा हुआ। उसके मा-बाप गरीब थे। थोडा सा पढने के बाद जब खर्च का सुभीता न लगा तब सन् १७५० में उसने ई० इं० कम्पनी में रायटर की नौकरी कर ली। हिसाब किताब के काम में होशियार देखकर सन् १७५७ में उसे क्लाइव ने मीरजाफर के दरबार में ब्रिटिश वकील नियत किया। सन् १७६१ में वह कलकत्ते की कौंसिल का सभासद हुआ और थोडा बहुत धन पैदा करके सन् १७६४ में वह विलायत चला गया। चार पाँच वर्ष में जब पास का धन खतम हो गया तब वह फिर सन् १७६९ में मदरास की कौंसिल में नौकरी पर आया। वहां उसने हिसाब और व्यापार का प्रबन्ध बहुत अच्छा किया। दूसरे वर्ष कलकत्ते की कौंसिल में उसकी तैनाती हुई। बाद को सन् १७७२ में वह बंगाल का गवर्नर हुआ और रेग्युलेटिंग ऐक्ट के अनुसार सन् १७७४ में गवर्नर जनरल हुआ।

(२) **कौंसिल के झगडेः**—कौंसिल में जो चार नवीन सभासद मुकर्रर हुए थे, उनमें से बार्वेल हिन्दुस्थान में पहले बहुत दिनों से था; इस लिये उसे

वहां की दशा मालूम थी। इसी कारण वह हेस्टिंग्स के पक्ष का थॉ। बाकी तीन इस देश में नवीन आये थे; उन्हें गवर्नर जनरल के प्रत्येक काम में अन्याय देख पड़ने लगा, इस लिए वे अपने मत अधिक करके उसके विरुद्ध देने लगे। उन तीनों में फिलिप फ्रेंसिस होशियार, विद्वान् परन्तु दुराग्रही था। वह सदा गवर्नर जनरल के विरुद्ध चलता; और बाकी दो उसे मदद करते थे। चूंकि वे एकदम विलायत छोड़ कर पहले ही पहल हिन्दुस्थान में आये थे और उन्हें यह भी मालूम होगया था कि कम्पनी के नौकर भारत में जुल्म करते हैं; इस लिए कौंसिल में झगडे शुरू हुए और ग. ज. के विरुद्ध बहुमत हो गया। इस कारण कुछ दिन तक हेस्टिंग्ज़ केवल नामही के लिए ग. ज. रह गया। उसने जो बातें पहले की थी वे कौंसिल ने बदल डालीं। ये झगडे जब लोगों को मालूम हुए तब ग. ज. के विरुद्ध एकदम अर्जियां आने लगीं। इसीमें नन्दकुमार का मामला उपस्थित हुआ। वह इस प्रकार हैं।

(६) **नन्दकुमार का मामला:**—नन्दकुमार नाम का एक बड़ा आदमी उस समय बंगाल की कारवाइयों में प्रसिद्ध था। वह चाहता था कि सूबेदार की वजीरी, जो मुहम्मद रजाखां को मिली है, वह हमको मिले। पर क्लाइव ने वह पद उसे नहीं दिया। तभी से रजाखां का अप्रबन्ध दिखलाना उसने

वर्ष पहले नन्दकुमार ने एक झूटी दस्तावेज बनाई थी। इस मुकद्में के फैसिले में उसने नन्दकुमार को फांसी दी। यह सजा सचमुच बहुत बडी हुई; तथापि इससे हेस्टिंग्स् की अच्छी छाप बैठ गई। कुछ दिनों बाद मॉन्सन और क्लेवरिंग का अन्त हो गया। उस समय से हेस्टिंग्स् का कारबार फिर ठीक चलने लगा। सन् १७८० में फ्रेंसिस विलायत चला गया; पर वहां भी उसने हेस्टिंग्स् का पीछा नहीं छोडा।

२. रुपया इकट्ठा करने की हेस्टिंग्स् की कारवाइयां:—हेस्टिंग्स् को रुपये की बहुत तंगी रहती थी। नवीन राज्य-प्रबन्ध में खर्च बहुत लगने लगा। उधर विलायत को भी निश्चित रकम भेजनी ही पडती थी। और अनेक स्थानों में युद्ध शुरू होनें के कारण खर्च बहुत बडा। यह नवीन खर्च चलाने के लिए उसे अनेक उपाय करने पडे। वे इस प्रकार हैः—

(१) सूबेदार की पेंशन कम करनाः—क्लाइव ने बंगाल प्रान्त का प्रबन्ध करते समय सूबेदार की पेंशन ६० लाख से कम करके ४५ लाख कर दी थी और यह निश्चय किया था कि, अब वह कभी कम न की जाय, (सन् १७६६)। वान्सिटार्ट ने सन् १७६९ में उसे और भी कम करके सिर्फ ३५ लाख रखी। बाद को जब हेस्टिंग्स् गवर्नर हुआ और उसने अँगरेज अफसर नियत करके बंगाल का प्रबन्ध किया तब उसमें अधिक खर्च लगने लगा; इस लिए वह पेंशन आधी और भी कम कर दी गई, (सन् १७७३)।

(२) बादशाह का कर बन्द करनाः—जब बंगाल प्रान्त की दीवानी क्लाइव ने ली, तब बादशाह को २६ लाख रुपये कर देना निश्चित हुआ था। अँगरेज लोग और वजीर जब बादशाह को दिल्ली न पहुँचाने लगे तब वह मराठों की मदद लेकर वहां चला गया। हेस्टिंग्स् ने यह कह कर बादशाह की कर बन्द कर दिया कि चूंकि उसने मराठों की मदद ली; इस लिए अब बादशाह से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं, (सन् १७७३)।

(३) कोडा और इलाहाबाद प्रान्तों की बिक्रीः—क्लाइव ने सन् १७६५ में कोडा और इलाहाबाद नामक दो प्रान्त बादशाह के निर्वाह के लिए दिये थे, और वेही प्रान्त मराठों को देकर बादशाह ने उनसे मदद ली थी। परन्तु हेस्टिंग्स् ने निश्चय किया कि, बादशाह का उन पर कुछ हक नहीं है। वजीर को उन प्रान्तों की जरूरत थी; इस लिए उससे ४० लाख रुपये नकद लेकर उसके हाथ हेस्टिंग्स् ने वे प्रान्त हमेशा के लिए बेच डाले (१७७४)।

(४) रुहेलों से युद्ध, (सन् १७७४):—रुहेलोंका रुहेलखंड प्रान्त अवध के वजीर के राज्य से मिला होने के कारण रुहेले सरदार वजीर को हमेशा सताया करते थे; इस लिए वजीर बहुत दिनों से चाहता था कि उन्हें जीत कर अपने अमल में ले आवें। मराठों ने उन लोगों पर अनेक बार चढाई की थी। कई दफे वजीर की जमानत और मध्यस्थी से मराठों के पंजे से रुहेलों का छुटकारा होगया था। यही वजीर का उन पर उपकार था। इस उपकार के लिए उसने अनेक बार उनसे धन माँगा और अन्त में उन्हें जीतने के लिए अँगरेजों से मदद मांगी। हेस्टिंग्स ने मदद देना स्वीकार किया और वजीर से २४ लाख रुपये लेना निश्चय करके उसने रुहेलों पर फौज भेजी. (सन् १७७४) घनघोर युद्ध हुआ। बहुत से रुहेले मारे गये और रुहेलखंड अवध के वजीर को मिल गया।

(५) चेतसिंह का मामला (सन् १७८०):—काशी का राजा चेतसिंह अँगरेजों की अधीनता में रहकर कर दिया करता था। सन् १७७९ में हेस्टिंग्स ने नियत कर से ५ लाख रुपये अधिक मांगे और वे उसने दिये भी। सन् १७८० में हेस्टिंग्स ने फिर वही रकम मांगी और यह बात चलाई कि ब्रिटिश लोगों की नौकरी के लिए राजा एक पलटन भी रखे। इस कारण दोनों में झगडा उपस्थित हुआ। उसका फैसिला करने के लिए हेस्टिंग्स काशी गया और चेतसिंह पर यह अपराध लगा कर कैद करने का हुक्म दिया कि, वह हमारे शत्रुओं में शामिल है। जब शहर के निवासियों ने देखा कि हमारा राजा कैद होनेवाला है, तब वे हथियार ले कर युद्ध करने को तैयार हुए। उन्होंने राजा को छूटा लिया और हेस्टिंग्स के महल को घेर लिया; पर हेस्टिंग्स बिलकुल नहीं डगमगाया। उसने फौज मँगाकर चेतसिंह का पराभव किया। नागपुर वाले भोसलों के दो ब्राह्मण वकील जो हेस्टिंग्स के पास थे उन्होंने उस मौके पर हेस्टिंग्स को अपने मियाने में बैठाकर भागीरथी-पार उसकी छावनी में पहुँचाया। बाद को हेस्टिंग्स ने बनारस प्रांत को अँगरेजी राज्य में मिलाकर वहां के राजा को पेंशन नियत कर दी; पर इस मामले में उसे बहुतसा धन नहीं मिला।

(६) अवध की बेगमों का मामला, (सन् १७८१):—सन् १७७५ में वजीर शुजाउद्दौला मरगया और उसका लडका आसुफुद्दौला गद्दीपर बैठा।

आसुफ की मा और आजी जिन्दा थीं । वे इतिहास में "अवध की बेगमें;" इस-नाम से प्रसिद्ध हैं। चूंकि आसुफ अव्यवस्थित था, इस लिए उसके बाप के समय का प्रबन्ध राज्य में नहीं रहा। इस लिए हेस्टिंग्स् के कहने से उसने एक ब्रिटिश पलटन अपने खर्च से नोकर रखी। परन्तु जब आगे चल कर रुपये की अडचन पडी तब पलटन लौटा लेने के लिए आसुफ ने बिनती की । बादको चुनारगढ में दोनों की भेट हुई; वहां हेस्टिंग्स् ने रुपये मांगे। पर उसके पास रुपया था नहीं। तब उसने अपनी मा और आजी के पास का रुपया ले लेने का विचार किया । बेगमों के पास बहुत दिन का एकट्टा किया हुआ बहुतसा धन था। उस पर आसुफ की डाढ लगी थी । इस लिए हेस्टिंग्स् की मदद से वजीर ने बेगमों पर जुल्म कर के बडी मुशकिल से एक करोड रुपया वसूल कर के हेस्टिंग्स् को दिया । विलायत जानेपर अन्त के तीन मामलों के लिए हेस्टिंग्स् को जवाब देना पडा।

३ हेस्टिंग्स् के जमाने के युद्धः—हेस्टिंग्स् के समय में छोटे बडे तीन युद्ध हुए। दो मेसूरवालों के साथ और एक मराठों के साथ । मराठों के साथ जो युद्ध हुआ वह मराठों के भाग में आचुका है। यहां मेसूर के युद्ध देने चाहिएं।

(१) हैदरअली का उदय, (सन् १७६१):—मैसूर में पहले शालिवाहन वंश के हिंदू राजा राज्य करते थे । सन् १७६० के करीब वहां के राजाने अपनी सत्ता नन्दराज नामक दीवान के हाथ में देदी। इधर पंजाब में फत्तेह मुहम्मद नामक मुगलों का एक कारबारी था, उसके हैदरखां नाम का लड़का था। उसका जन्म सन् १७०२ में हुआ। जब उसका बाप मरा तब वह दो सौ सिपाहियों के उपर नायक था। वह साहसी और चपल स्वभाव का था। इस कारण उस बडे भारी धूमधाम के समय में वह अपने नसीब की परीक्षा करने के लिये घूमते घूमते दाक्षिण की तरफ आया और दो सौ आदमियों के साहित उसने नन्दराज के यहां नौकरी करली। बाद को बढते बढते सन् १७५९ में वह मैसूर का सेनापाति हो गया और फिर शीघ्र ही उसे मैसूर की दीवानगिरी मिल गई। तत्पश्चात् सन् १७६१ में राजा को भी पदच्युत करक उसने मैसूर का राज्य छीन लिया। इसके बाद बदनूर, दक्षिण कानडा आदि प्रान्त जीत कर उसने अपना राज्य बहुत बडा लिया। मलाबार का

किनारा उनके कब्जे में था। निजाम, अँगरेज और मराठों के राज्य मैसूर के राज्य में मिले हुए थे; इस लिए उनसे हैदर के अनेक झगडे उपस्थित हुए।

(२) मैसूरवालों से पहला युद्ध, (सन् १७६७-६९):—दोनों की राज्यवृद्धि करने की इच्छा ही इस युद्ध का सच्चा कारण है। निजाम का उत्तर सरकार प्रान्त, बादशाह का फरमान लाकर अँगरेजों ने ले लिया और निजाम के पास अपनी सहायक सेना रखी। यह बात निजाम को बुरी लगी और उसने प्रत्यक्ष रूप से हैदर से दोस्ती कर ली और दोनों ने मिलकर कर्नल स्मिथ की मद्रासवाली फौज पर हमला किया। उस समय कुछ छोटी लडाइयां हुईं। बाद को अँगरेजों ने निजाम से तह करके उसे हैदर से अलग कर दिया। यह पहली मुहिम सन् १७६७ में हुई।

हैदर के राज्य में पश्चिमी किनारे पर बम्बई के अँगरेजों ने जलसेना भेजी। उसको हैदर ने शिकस्त दी। बाद को कुछ दिन तक सुलह की बातचीत चलती रही। परन्तु अँगरेजों ने मनमानी शर्ते बतलाईं; इस लिए फिर युद्ध शुरू हुआ। हैदर ने कर्नल वुड की फौज को एक दो जगह शिकस्त दी और वह कर्नाटक में त्रिचिनापली मदुरा, तिनेवली आदि प्रान्त उजाड करता हुआ शीघ्रता के साथ ठेठ मद्रास पर चढ धाया। तब अँगरेजों ने उससे सुलह करली, उसे मद्रास की सुलह कहते हैं, (सन् १७६९)। वह इस प्रकार है:—

(१) युद्ध में जीते हुए एक दूसरे के प्रान्त आपस में लौटा दिये जाय; (२) एक दूसरे के शत्रु बाहर निकालने के लिए आपस में मदद करना चाहिए।

यह सुलह अँगरेजों के लिए अनिष्ट हुई। युद्ध का सारा खर्च अँगरेजों पर पड गया और हैदर का महत्त्व बहुत बढ गया।

(३) मैसूरवालों से दूसरा युद्ध, (सन् १७८०-८४)। इस युद्ध के कारण:—

(१) सन् १७७२ में जब मराठों ने हैदर पर हमला किया तब उसने उपर्युक्त सुलह के अनुसार अँगरेजों से मदद माँगी। परन्तु अँगरेजों ने मदद न देकर मराठों से दोस्ती कर ली। इस कारण हैदर के मन में अँगरेजों के विषय में द्वेषभाव बढा। (२) सन् १७७८ में अँगरेज और फ्रेंचों का युद्ध हुआ और फ्रेंचों का पश्चिमी किनारे पर माही नामक मुकाम अँगरेजों ने ले लिया। इस लिये वहां से फ्रेंचों की मार्फत हैदर को जो युद्धसामग्री मिलती थी वह बन्द हो जाने से हैदर बिगडा। (३) मराठों के दरबार में झगडे पडने से

इधर दस वर्षों से हैदर को शान्ति मिली और उसकी सत्ता बढी। बादशाह की ओर से उसे दक्षिण की सूबेदारी मिली। मराठों से अँगरेजों का युद्ध शुरू होने पर नाना फडनवीस ने हैदर को अपने पक्ष में कर लिया था। सन् १७८० में जब नाना फडनवीस ने अँगरेजों के विरुद्ध कारवाई की तब उसने हैदर को भी उत्तेजित किया। इस लिए हैदर ने एकदम मद्रास पर चढाई की।

पाहली मुहिम, (सन् १७८०-८१):—हैदर बडी भारी फौज ले कर, सारा मुल्क विध्वंस करता हुआ मद्रास पर चढ धाया। तब गन्टूर प्रान्त से कर्नल बेली और सेनापति सर हैक्टर मनरो अलग अलग उसपर आये। परन्तु उनकी फौज एकत्र होने के पहले ही हैदर और उसके लडके टीपू ने बेली की फौज पर हल्ला करके उसका सत्यानाश कर दिया। बेली शत्रु के अधीन हो गया। इधर ये सुन कर मनरों मद्रास भग गया। यह हाल जब हेस्टिंग्स् को मिला तब उसने सर आयर कूट को कुछ फौज देकर जलमार्ग से मद्रास भेजा। कूट नें पहले पोर्टोनोवो में और फिर थोडे दिनों बाद शिवालिंगगड में हैदर की फौज का पराजय किया, (सन् १७८१)।

(४) हैदर की मृत्यु और उस की योग्यता, (सन् १७८२):—इसके बाद हैदर के पास फ्रेंचों की मदद आई और वह मलाबार की ओर झुका। इतने ही में वह वृद्ध और पराक्रमी पुरुष संसार से कूच कर गया (सन् १७८२)। उस समय उसकी अवस्था ८० वर्ष की थी। उसका लडका टीपू पास न था; इस लिए दीवान पूर्णैया ने उसके आने तक, दो दिन तक, हैदर के मरने की खबर गुप्त रख कर युद्ध जारी रखा। हैदर साहसी, छुटपन से सब प्रकार के संकटों का सहने वाला और राजकारबार में निपुण तथा दक्ष था। अपनी ही बुद्धि के बल पर उसने बडप्पन पाया।

दुसरी मुंहिम, (सन् १७८३-८४):—हैदर के मरन पर टीपू गद्दी पर बैठा। फ्रेंच सरदार बुसी बडी भारी फौजें लेकर उसकी मदद के लिए आया। परन्तु अँगरेज और फ्रेंचों की यूरप में सुलह हो जाने की खबर पाकर फ्रेंच फौज लौट गई। बादको बम्बई से कुछ अँगरेजों की फौज आई और उसने बेदनूर आदि टीपू के स्थान ले लिये। टीपू उस फौज पर एकदम टूट पडा और बेदनूर को लौटा लिया, तथा सब लोगों को पकड कर कैद में डाल दिया। इसके बाद उसने मंगलूर शहर को घेर लिया। नौ महीने युद्ध होने के बाद वह शहर

टीपू के हाथ आया। तब अँगरेजों ने टीपू से सुलह की। उसे मंगलूर की सुलह कहते हैं, (सन् १७८४)। उसमें निश्चित हुआ कि, एक दूसरे के सब स्थान आपस में लौटा दिये जायँ।

४. हेस्टिंग्स् का राज्य-प्रबन्धः—हेस्टिंग्स् ने अपने तेरह वर्षों के कार-बार में ब्रिटिश राज्य को बहुत सा फायदा करा दिया; यह बात उसके लिए भूषणास्पद है। उसकी याद रखने लायक कारवाइयां ये हैं:—

(१) बनारस, रुहेलखंड, उत्तर कानडा, कर्नाटक का भाग और बंबई के पासवाले टापू आदि बहुत सा मुल्क अँगरेजों को मिला, और अवध का वजीर उनके अधीन हुआ।

(२) क्लाइव का दुहरा राज्य-प्रबन्ध तोड कर, बंगाल में मुल्की और दीवानी काम अलग अलग कर के सब कामों में उसने अँगरेज रखे और भिन्न भिन्न विभागों का प्रबन्ध कर दिया।

(३) कलकत्ता, मदरास और बंबई में उसने सदर दीवानी अदालतें स्थापित कीं। यही फिर हाईकोर्ट के नाम से प्रसिद्ध हुईं।

(४) ९५ दफाओं का एक नवीन कायदा उसने प्रसिद्ध किया। उसे हेस्टिंग्स्-कोड कहते हैं।

इसी बीच में अमेरिका की बस्तियां अँगरेजों के हाथ से निकल गईं, और हेस्टिंग्स के हिन्दुस्थान के कारबार के विषय में विलायत के लोगों में और पार्लिमेंट में चर्चा शुरू होई। हेस्टिंग्स् और न्यायाधीश इंपे काम से अलग किये गये। हेस्टिंग्स् सन् १७८५ के फरवरी मास मे विलायत चला गया।

५. हेस्टिंग्स् की योग्यताः—वह उत्तम कार्यसाधु था। मनोवृत्ति अपने कबजे मे रखने की उसमें अजब शक्ति थी। विकट प्रसंग आ पडने पर भी वह कभी डगमगता न था। इस गुण के कारण उसका जमाना अच्छा बीता। वह अच्छा लेखक था। फारसी, अरबी और बंगाली भाषाएं वह जानता था। संस्कृत भाषा को उत्तेजन देकर, यहां के ग्रन्थ पश्चिमी लोगों को मिलने के लिए उसने सुभीता कर दिया। एशियाटिक सोसायटी उसी के समय में स्थापित हुई। फौजी तथा अन्य अधिकारी और सारी रैयत की उस पर बहुत प्रीति थी। तथापि उसके बर्ताव में दोष भी कम न थे। एक बार निश्चय हो जाने पर वह किसी जुल्मी राजा के समान बर्ताव करने लगता। क्लाइव ने

जो ब्रिटिश राज्य की, नींव डाली उसे हेस्टिंग्स् ने बहुत अधिक मजबूत कर दिया । अनेक देशी राजाओं को उसने अपना तावेदार बनाया । उनकी मदद में अपनी फौज रख कर उन्हें अपने पंजे में फांसने का उपक्रम हेस्टिंग्स् ने किया और आगे फिर अनेक राजनीतिज्ञों ने इसी क्रम को पूरा किया ।

६. हेस्टिंग्स् की कारवाइयों की जांच--(सन् १७८८-९५):— विलायत लौट जाने पर हेस्टिंग्स् के कारबार के विषय में वहां बडा शोर गुल मचा । कई लोगों ने यह आग्रह किया कि, हेस्टिंग्स् ने भारत में घोर अन्याय किये हैं, उनकी जांच होनी चाहिए, और यदि वे सच हों तो उसे सजा देना जरूरी है । उस समय के धुरीण वक्ता बर्क, शेरिडन, फॉक्स, डंडास, फ्रेन्सिस नाम के विद्वानों ने हिन्दू प्रजा की ओर से अगुआ बनकर हेस्टिंग्स् पर पार्लिमेन्ट के सामने ११ अपराधों की फिर्याद की; और १३ फरवरी सन् १७८८को हेस्टिंग्स् दोनों पार्लिमेन्ट सभाओं के सामने जाँच के लिए खडा हुआ । लोगों के मन अत्यन्त आतुर और संतप्त हो गये थे । कानून का इतना भयंकर रूप लोगों ने पहले कभी न देखा था । बर्क, शेरिडन आदि वक्ताओं ने हेस्टिंग्स् के अन्याय दिखलाते हुए जो व्याख्यान पार्लिमेंट के सामने दिये वे अँगरेजी में भाषा के अप्रतिम उदाहरणों के लिए, आज तक प्रसिद्ध है । " अवध की बेगमों पर जुल्म " इस विषय पर शेरिडन ने जो पाँच घंटे व्याख्यान दिया, उससे लोगों के मन इतने क्षुब्ध हो गये कि, अध्यक्ष को यह समझ कर उस समय सभा विसर्जन करनी पडी कि, इस प्रकार की क्षुब्ध सभा में शान्त विचार होना असम्भव है । यह जांच सात वर्ष तक जारी रही । अन्त में सब लोग घबडा गये । हेस्टिंग्स की सब सम्पत्ति खतम हो गई, तथापि अन्त में वह निर्दोषी ठहरा । इस उदाहरण से ब्रिटिश राष्ट्र की न्यायप्रियता और स्व-जनाभिमान मालूम हो गया, और अगले राजकर्त्ताओं के स्वच्छन्द बर्ताव में बहुत सा प्रतिबन्ध पड गया । इसके बाद हेस्टिंग्स २१ वर्ष तक जीवित था । उसके दोष लोग बिसर गये । हिन्दुस्थान में ब्रिटिश राज्य की इमारत ज्यों ज्यों ऊपर उठती गई त्यों त्यों उसकी नींव डालने वाले कारीगर का महत्व लोगों के सामने आने लगा । मरने के पांच वर्ष पहले एक प्रश्न पर साक्षी के तौर पर हेस्टिंग्स पार्लिमेन्ट के सामने आया । उस समय सारी सभा ने उठ कर उसका गौरव किया । तब तो हेस्टिंग्स के आनन्दाश्रु आगये । वह सन् १८१८ में परलोकवासी हुआ । उस समय उसकी उम्र ८६ वर्ष की थी ।

ई० इं० कं०, और व्यापार में पूंजी लगानेवाले महाजन सभी की सत्ता निकली जाती थी, इस लिए वे सब इस कायदे के विरोधी थे । सर्वसाधारण लोगों को वह कायदा पसन्द आया । कायदा नामंजूर होने के कारण फॉक्स को अपना पद छोडना पडा और पिट नामक २४ वर्ष का एक होशियार तरुण पुरुष मुख्य प्रधान हुआ । उसने कायदे का दूसरा मसविदा तैयार किया ।

पिट का बिल, (सन् १७८४):—फॉक्स के मसविदे में जो भाग नापसन्द थे उन्हें निकाल कर, परन्तु खास कर उसी आशय का मसविदा पिट ने भी पेश किया । वह फिर मंजूर हो गया । उसकी दफ़ाएं ये हैं:—(१) फॉक्स के मसविदे की बोर्ड आफ् कंट्रोल नामक सभा पार्लिमेन्ट नियत करे, और उसकी मार्फत लडाइयां तथा सुलह हो । (२) इस सभा के हुक्म हिन्दुस्थान में प्रकट करने के लिए कम्पनी के तीन डायरेक्टरों की एक गुप्त मंडली रहे। (३) कंपनी कायम रहे पर उसके हाथ में राज्य का प्रबन्ध न रहे । (४) हिन्दुस्थान में ज्यादा मुल्क न जीता जाय । (५) प्रत्येक नौकर विलायत लौट आने पर इस बात की सफाई दे कि वह जो संपत्ति हिन्दुस्थान से लाया है वह किस प्रकार प्राप्त की ।

इसके परिणाम:—इस कायदे से सब लोग ख़ुश हुए । कम्पनी का बाहरी टीमटाम कायम रहा । उसे सब की सन्मति मिली । बहुत सी दफाएं अमल में आई; पर प्रदेश–वृद्धि की चौथी दफा बहुत दिनों तक केवल नाममात्र के लिए रही ।

२ लॉर्ड कॉर्नवालिस, (सन् १७८६–१७९३):—वॉरन हेस्टिंग्स् जब विलायत जाने लगा था । तब उसने कलकत्ते की कौन्सिल के मुख्य सभासद् मेकफर्सन को अपना काम सौंप दिया था । मेकफर्सन ने बीस महीने काम किया । तब लॉर्ड कॉर्नवालिस विलायत से ग. ज. का काम करने के लिए यहां आया । यह अमेरिका के युद्ध में था । वह निस्पृही, निष्पक्षपाती और सब प्रकार से सभ्य था । उसकी सचाई और निर्लोभता के विषय में सब राष्ट्र को विश्वास था । उसे यह सख्त ताकीद कर दी गई थी कि, राजेरजवाडों के कारबार में हाथ न डालना और अधिक प्रदेश जीतने की खटपट में न पडना । उसने सात वर्ष हिन्दुस्थान का राज्य प्रबन्ध अच्छी तरह से किया । उसके जमाने की दो मुख्य बातें ये हैं:–। (१) मैसूरवालों से तीसरा युद्ध, और (२) उसके किये हुए सुधार ।

३. मैसूरवालों से तीसरा युद्ध, (सन् १७९०-९२):— मंगलूर की सुलह के बाद टीपू सुलतान ने आसपास के मुल्क पर चढाइया करके अपनी सत्ता बहुत बढा ली। उस समय उसके साथ युद्ध करने के लिए कितने ही कारण आ पडे, वे इस प्रकार हैं:—

(१) कर्नाटक—बालाघाट प्रान्त टीपू के अधिकार में था। वह प्रान्त उससे लेकर अँगरेजों ने निजाम को देने का विचार किया। यह बात टीपू को नहीं अच्छी लगी।

(२) त्रावनकोर का राजा टीपू की अधीनता छोड कर अँगरेजों के आश्रय में चला गया था। वैसे ही कोचीन का राजा टीपू के आश्रित था। इधर त्रावनकोर के राजा ने कोचीन के पास के करंगनूर और आयकोट नामक दो शहर डच लोगों से मोल लेकर वहां मजबूती शुरू की। इस लिए कोचीन और त्रावनकोर में झगडा शुरू हुआ और क्रमशः टीपू तथा अँगरेजों ने उनका पक्ष लिया।

तीनों का गोल, (सन् १७८९):—सन् १७८९ में टीपू ने त्रावनकोर पर हमला किया, तब ग. ज. ने युद्ध की तैयारी कर के मराठों और निजाम से सुलह कर ली, (जून सन् १७९०)। उसमें यह निश्चय हुआ कि, टीपू से युद्ध करने में जो फायदा हो उसे तीनों बराबर बाँट लें। इसे "तीनों का गोल" कहते हैं।

पहली मुहिम, (सन् १७९०):—जनरल मेडोज मद्रास की सेना लेकर टीपू के मुल्क में घुसा, पर टीपू ने उसका पराभव किया, और उसकी एक टोली को बिलकुल काट डाला। इतने ही में कलकत्ता और बम्बई से मदद आ गई।

दूसरी मुहिम, (सन् १७९१):—ग. ज. स्वयं युद्ध में आया। बंगलोर पर कब्जा कर के श्रीरंगपट्टन पर उसने धावा किया। निजाम की दस हजार सेना ने मैसूर के उत्तर भाग में अच्छा काम किया। मराठों की फौज परशुरामभाऊ पटवर्धन और हरिपंत फडके के अधिकार में धारवाड पर गई। टीपू का यह मजबूत किला जीतने में मराठों को बहुत दिन लग गये। इधर आरीकेर नामक स्थान में टीपू से कॉर्नवालिस की लडाई हुई। उसमें यद्यपि टीपू का पराभव हुआ, तथापि उसका फायदा कॉर्नवालिस को नहीं हुआ;

किन्तु अन्न की कमी के कारण उसकी सेना में बीमारी शुरू हुई और मराठों की मदद के विषय में निराश होकर वह मदरास को लौटने लगा। ऐसे कठिन प्रसंग में मराठों की फौज अँगरेजों को देख पडी । उस समय आनन्द दर्शाने के लिए ग. ज. ने तोपों की आवाजें कीं । मराठों ने अपने पास की बहुत सी सामग्री अँगरेजों को देदी।

तीसरी मुहिम, (सन् १७९२):—तीनों ने अपनी अपनी सेना का प्रबन्ध कर के श्रीरंगपट्टन के सामने डेरा डाल दिया। उन्होंने टीपू के राज्य में गडबड मचा दिया । अन्त में लाचार हो कर टीपू ने सुलह की बातचीत शुरू की। श्रीरंगपट्टन में दोनों पक्षों की सुलह हुई, (सन् १७९२) वह इस प्रकार हैः—

(१) टीपू अपना आधा राज्य तीनों को दे दे, (२) युद्ध के खर्च में तीन करोड रुपये दे, (३) अपने दो लडके ओल (जमानत) के तोर पर अँगरेजों के अधीन कर दे ।

सुलह अमल में लाई गई और युद्ध बन्द हुआ ।

४. कॉर्नवालिस के किये हुए सुधारः—

(१) अफसर लोगों का घूस लेना, सरकारी रुपया निजी काम में लगाना, आदि बातें बन्द करने के लिए उसने कडे नियम बनाये; और नोकरों के बेतन बढाये।

(२) पहले जिले के कलेक्टरों की तरफ वसूली और न्याय दोनों विभागों के काम थे। उससे जो अन्याय होता था, तो उसे बन्द करने के लिए कॉर्नवालिस ने प्रत्येक जिले में न्यायाधीश नियत किये और उनके हाथ में सब दीवानी काम दिया। बंगाल प्रान्त में उसने चार अपील कोर्ट स्थापित किये ।

(३) एलिजा इम्पे का फौजदारी कायदा दुरुस्त करके उसे बंगाल में जारी किया। यह कायदा " कॉर्नवालिस का कोड " के नाम से प्रसिद्ध है।

(४) बंगाल में इस्तमरारी बन्दोबस्तः—इस बन्दोबस्त के लिए कॉर्नवालिस का नाम इतिहास में प्रसिद्ध है। अकबर बादशाह के समय से बंगाल में जमीदारी की पद्धति जारी थी। अर्थात् बडे बडे जमीदारों की मार्फत सरकार अपना लगान वसूल करती। परन्तु लोकसंख्या और खेती की वृद्धि होने पर ठहरे हुए लगान की शहर में रद व बदल नहीं होता था। ये जमींदार वंशपरम्परागत

राजा थे । सन् १७८६ में डायरेक्टरों ने इस विषय में कुछ हुक्म भेजे थे, उनसे कॉर्नवालिस के मन में आया कि अब इस विषय का सदा के लिए फैसला हो जाना चाहिए । इसी विचार से उसने नीचे लिखी हुई शर्तों का एक ठहराव पास होने के लिए विलायत भेज दिया---

(१) जमींदार लोग सदा के लिए जमीन के मालिक हैं और उनकी रियासतें उनके पास सदा के लिए बनी रहेंगी ।

(२) सरकार एक बार सदा के लिए जो लगान ठहरा देगी वही जमींदार लोग सरकार में देते रहें । उसमें सरकार कभी फेरफार न करे ।

यह ठहराव विलायत में पसन्द पड़ा और वह सन् १७९३ की २१ मार्च को हिन्दुस्थान में प्रसिद्ध हुआ ।

परिणामः—इस कायदे से जो नफा नुकसान हुआ उसके विषय में बहुत मतभेद है । सारांश में कह सकते हैं कि, उससे हिन्दुस्थान का कल्याण हुआ । सदा के लिए लगान स्थिर हो जाने से जमींदार लोग सधन बने रहे । चूंकि, बंगाल में यह तत्त्व रखा गया है कि, जमीन के मालिक सदा के लिए वहां के लोग हैं, केवल उनका संरक्षण करना सरकार का काम है; इस लिए लोग अपनी जमीन के लिए जो श्रम करते हैं उसका फल उन्हें मिलने लगा । इसके विरुद्ध यह मत है कि, किसानों पर जुल्म होता है, और सरकार की आमदनी की बढ़ती मारी गई—ये दो बड़े हानिकारक परिणाम इस कायदे से हुए । किसानों पर जमींदार लोग जो जुल्म करते थे उसे बन्द करने के लिए सन् १८५९ में बंगाल टेनन्सी ऐक्ट और १८८२ में बंगाल लैंड ऐक्ट बनाये गये ।

५. सर जॉन शोर, (सन् १७९३–९८):—कौंसिल के सभासद सर जॉन शोर को काम सौंप कर कॉर्नवालिस विलायत चला गया । बाद को शोर उस जगह पर कायम हो गया । परराज्यों के झगड़े में न पड़कर शान्ति के साथ कारबार करने के लिए जो उसे ताकीद दी गई थी, उसका उसने अक्षरशः पालन किया । मराठों और निजाम के साथ कॉर्नवालिस ने सदा के लिए दोस्ती कर ली थी । सन् १७९५ में मराठों ने निजाम से युद्ध करके खर्डे की लड़ाई में उसका बहुत सा नुकसान किया । उस अवसर पर निजाम ने शोर से मदद देने की जो विनती की उसे शोर ने नहीं माना । इस लिए अंग्रेजों की तरफ निजाम का जो ध्यान था वह कम हो गया । इसके

लिए शोर को बहुत दोष दिया जाता है। परन्तु उसने संकल्प कर लिया था कि, जब तक अपने राज्य में स्वस्थता है तब तक हम दूसरे के व्यवहार में नहीं पड़ेंगे।

उसके जमाने में दो बातें स्मरणीय हैं:—

(१) बंगाल की फौज का असन्तोष:—हिन्दुस्थान की फौज दो मालिकों की थी, कुछ पलटनें कम्पनी की थी और कुछ खास विलायत सरकार की थी। कम्पनी की पलटनें कम करके सरकार की पलटनें बढाने की ओर अधिकारियों का ध्यान अधिक रहता था। इसके सिवा अन्य महकमों के नोकरों की अपेक्षा फौजी नोकरों की तनखाह कम थी। कम्पनी की फोज के नोकरों ने अपनी तनखाह बढाने के लिए अर्जी दी। उसे कबूल न करने पर गदर करने की धमकी दी। शोर ने ऑबर कॉम्बी की मदद से यह बलवा शान्त किया।

२ अवध के वजीर का मामला:—अवध के नवाब आसफुद्दोला ने अँगरेजों की सहायक सेना अपने राज्य में रखी, उसका सालाना खर्च पोन करोड रुपया उसे देना पडता था। वजीर बार बार विनती करता रहता था कि, यह फौज निकाल ली जाय अथवा बिलकुल कम कर दी जाय। कॉर्नवालिस ने वजीर को, राज्य का अच्छा बन्दोबस्त रखने के लिए, आज्ञा देकर २५ लाख का खर्च कम कर दिया था। यह वजीर दुर्व्यसनी था। वह सन् १७९७ में मर गया। बाद को उसके दासीपुत्र वजीरअली को पहले अँगरेजों ने नवाब मुकर्रर किया। वह भी दुर्व्यसनी निकला, इस लिए उसे पदच्युत करके आसुफ के भाई सआदतअली को वह पद दिया गया। उस समय अँगरेजों ने सआदतअली के साथ एक नवीन सुलह की। उसमें फौज का खर्च फिर ७६ लाख कर दिया और फौज के रहने के लिए इलाहाबाद का किला अपनी तरफ ले लिया, (१७९८) इस नवीन प्रबन्ध से वजीरअली को बहुत क्रोध आया और बादको उसने गदर कर के बहुत उपद्रव किया।

६. पार्लिमेन्ट का वादविवाद, (सन् १७९३):—वॉरन हेस्टिंग्स के समय में कौंसिल और गवर्नर जनरल में झगडे हुए। वैसे झगडे फिर से न होने देने के लिए पार्लिमेन्ट ने यह कायदा बनाया कि, कौंसिल की सलाह के विरुद्ध हुक्म देने का अधिकार गवर्नर जनरल को रहना चाहिए, (सन् १७८५)। गवर्नर जब कारबार के विषय में जवाबदार है तब उसे

ऐसा अधिकार होना ही चाहिए । यह अधिकार मिलने ही पर कॉर्नवालिस ने गवर्नर जनरल का पद स्वीकार किया ।

सन् १७८८ में डेक्लेरेटरी ऐक्ट नामक कायदा पार्लिमेन्ट ने बनाया । और निश्चय हुआ कि, सरकार चाहे जो राज्यप्रबन्ध करे, कम्पनी उसमें विघ्न न डाले।

रेग्युलेटिंग ऐक्ट से यह निश्चय हुआ था कि, प्रति बीस वर्ष में कम्पनी के सनद की मियाद बढाई जायगी। उसके अनुसार सन् १७९३ में सनद की मियाद बढाते समय बडे जोर शोर का वाद हुआ। कम्पनी के सिवाय हिन्दुस्थान से व्यापार करने की किसी को परवानगी न थी। परन्तु इस बार इस शर्त पर कम्पनी की सनद बीस वर्ष के लिए और बढाई गई कि, आठ हजार खंडी तक हिन्दुस्थान से चाहे जो व्यापार करे। इस विषय में अनेक लोगों ने अर्ज किया था कि, हिन्दुस्थान में ईसाई धर्म की शिक्षा दे कर उसके द्वारा लोगों को विद्यादान दिया जाय। परन्तु वे सूचनाएं इस कारण नापसन्द ठहरीं कि, ऐसे कृत्यों से लोगों के मन दूषित होंगे।

सन् १७९८ में शोअर की मुद्दत खतम होगई और वह विलायत चला गया; वहां उसे लॉर्ड टेन्मथ का खिताब मिला।

पाठ छटवाँ.

लॉर्ड वेलूस्ली।

सन् १७९८–१८०५।

१. वेलूस्ली के समय की परिस्थिति। २. वेलूस्ली की राजनीति।
३. मैसूरवालों से चौथा युद्ध।
 (अ) कारण और तैयारी।
 (आ) संग्राम टिपू का मृत्यु।
 (इ) टीपू की योग्यता।
 (ई) मैसूर का प्रबन्ध।
 (उ) मैसूर के राजा से सुलह।
४. सहायक सेना का अमल में लाना।
 (अ) निजाम और गायकवाड।
 (आ) अवध का वजीर।
५. राज्य जब्त करना।
 (अ) तंजोर (आ) कर्नाटक।
६. प्रयाण और योग्यता।

१. वेलूस्ली के समय की परिस्थितिः—सन् १७८९ में फ्रांस देश में राज्यक्रान्ति हुई और सब बातों का उलट पुलट हो गया। नेपोलियन बोनापार्ट

फ्रांस देश का बादशाह हुआ, और उसने यूरप के राष्ट्रों को पादाक्रान्त करना शुरू किया। वह अँगरेजों से द्वेष रखता था। वह समझता था कि, हिन्दुस्थान में इनकी सत्ता कम किये बिना यूरप में उनका महत्त्व कम नहीं हो सकता। गत पचास वर्षों में हिन्दुस्थान में अँगरेजों ने जो फ्रेंचों का पराभव किया वह नेपोलियन के हृदय में चुभ रहा था। ऐसी दशा में नेपोलियन ने हिन्दुस्थान के उन राष्ट्रों से सन्धान लगाया, जो उस समय तक न्यूनाधिक जोर पकड कर टिके रहे थे। टीपू सुलतान और अँगरेजों का वैर बहुत बढ गया था और टीपू प्रत्यक्ष रीति से नेपोलियन की मदद लेकर अँगरेजों से बदला लेने के विचार में था। इधर अँगरेजों ने निजाम को भी छोड दिया था; इस कारण उसने भी चौदह हजार फ्रेंच लोगों को नौकर रखकर सेना तैयार की। दूसरा बाजीराव पेशवा यद्यपि दुर्बल और चंचल स्वभाव का था, तथापि रणशूर सरदार सेंधिया के पास, फ्रेंचों-द्वारा कवायद सीखी हुई बहुत सी फौज तैयार थी। दिल्ली के बादशाह का कारबार सेंधिया के हाथ में ही था। पेरोन नामक फ्रेंच सरदार उसका सेनापति था। वैसे ही अफगानिस्तान के सुलतान जमान-शाह की टीपू से दोस्ती थी, और ऐसी अफवा थी कि, वह भारत पर चढाई करनेवाला है। इधर कलकत्ते में अँगरेजों के खजाने में रुपया न था, और फौज में फूट थी। इस प्रकार की सब अडचनों से घिरे रहने पर भी जिस पुरुष ने हिन्दुस्थान में, अँगरेजों का गिरता हुआ पक्ष संभाल कर, सब शत्रुओं का नाश किया, और अपने राष्ट्र का स्वामित्व स्थापित किया; उसके धैर्य, चातुर्य और प्रसं-गावधान की जितनी प्रसंशा की जाय थोडी है। हिन्दुस्थानी राजाओं का परस्पर सम्बन्ध निश्चित न होने के कारण अँगरेज राजनीतिज्ञ जैसा मौका देखते थ वैसाही व्यवहार उनके साथ करते थे। वेलस्ली ने वह पद्धति तोड कर यह निश्चय किया कि, हिन्दुस्थान में अँगरेजों का सार्वभौमत्व दृढ रूप से स्थापित करना है, और सब राजाओं को अपनी अधीनता में लाना है। ऐसा ही उसने किया। इसी लिए वेलस्ली हिन्दुस्थान में अँगरेजों की सार्वभौमता स्थापित करने के लिए विख्यात है। वेलस्ली ने जितनी कारखाइयां कीं उनमें कितनी ही बातें राजकाजी पुरुषों के लिए ध्यान में रखने योग्य हैं। वे ये हैं:—

२. वेलस्ली की राजनीतिः—

(१) जो राजा स्नेह के नाते से अपने पंजे में फँसने योग्य थे, उनके साथ स्नेह के प्रस्ताव करके वेलस्ली ने उनकी सहानुभूति प्राप्त की; और जिनको उसने

समझा कि, ये आगे पीछे सिर उठायेंगे, उनका एकदम बन्दोबस्त करने की उसने तैयारी की। और जो बिलकुल **नाममात्र** को थे उनके राज्य अँगरेजी राज्य में मिला लिये। निजाम, गायकवाड और अवध का वजीर पहले प्रकार के थे। टिपू, शिंदे, होळकर दूसरे प्रकार के थे, और तंजोर आदि के राजा तीसरे प्रकार के थे। परन्तु वेलस्ली ने सब के साथ एकदम कार्रवाई करने का मौका नहीं आने दिया। उसने अलग अलग एक एक का बन्दोबस्त किया।

(२) परिस्थिति पहचान लेने पर, एकदम निश्चय करके, वह अपना विचार तुरन्त ही अमल में लाता था।

(३) उसके नीचे जो मनुष्य थे उनकी योग्यता जानकर और उन पर पूर्ण भरोसा रखकर प्रसंग के अनुसार सब काम करने का उसने उन्हें पूर्ण अधिकार दिया। उसके समय में अनेक राज्यकार्यधुरंधर पुरुष प्रगट हुए। कर्नल क्लोज, माल्कम, हेनूरी, ऑर्थर वेलस्ली, मनरो, लेक आदि पुरुष इसी प्रकार के थे।

(४) वेलस्ली ने "सहायक सेना" की पद्धति को जारी रखा। खास कर यही पद्धति हिन्दुस्थान में अंगरेजी राज्य स्थापित होने के लिए मुख्य कारण हुई है। यह बात पहले ही से प्रसिद्ध थी कि, यहां के लोग, यूरोपियन कवायद सिखलाने पर युद्ध के लिए अत्यन्त उपयोगी निकलते हैं। इधर मुगल बादशाही का ऱ्हास होने पर हिन्दुस्थान में अनेक स्वतंत्र सत्ताधीश उत्पन्न हुए; इस कारण उनके आपस में सदा झगडे लगे रहते थे। और उन्हें फौज की जरूरत रहती थी। इस कारण क्लाइव के समय से नवीन फौजी तालीम देकर भाडे की फौज तैयार करने की चाल चल गई थी। बादको कवायद वाली फौज का खर्च देशी राजाओं से लेकर वॉरन हेस्टिंग्स ने उनकी मदद के लिए अपनी फौज देने का क्रम शुरू किया। परन्तु ऐसा करते हुए देशी राजाओं से लॉर्ड वेलस्ली कुछ शर्तें ठहराने लगा, और उसने यह पद्धति एक तरफ से सब दरबारों में अमल में लाने का काम जारी किया। इसी कामको लॉर्ड हेस्टिंग्स ने आगे चल कर खतम किया। वे शर्तें ये हैं:—

(१) यह सेना रखनेवालों को अँगरेजों की सार्वभौमता कबूल करनी चाहिए, और स्वयं ताबेदार के नाते से उनसे बर्ताव करना चाहिए।

(२) देशी राजा लोग आपसमें एक दूसरे से युद्ध अथवा सुलह न करें। उनके झगडे का जो फैसला अँगरेज करेंगे वही उन्हे मान्य होना चाहिए।

(३) अँगरेजों के यूरोपियन शत्रुओं को देशी राजा लोग अपने यहां नौकर न रखें, और उनसे किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखें ।
(४) सहायक सेना की तनखाह ठीक समय पर पहुँचने के लिए उसके खर्च भर को अपना मुल्क फौज रखने वाला राजा अँगरेजों को सदा के लिए अलग कर दे ।
(५) अँगरेजों को जहां जरूरत पडे वहां और जब जरूरत पडे तब, यह फौज उनकी मदद के लिए दी जाय ।

इस प्रकार वेलस्ली सहायक सेना की पद्धति अमल में लाया । उसे अँगरेजी में "सब्सिडियरी सिस्टम" कहते हैं । इससे फौज का खर्च बाहरही बाहर चलकर चाहे जितनी फौज अँगरेजों के हाथ में आ गई । उस पर युरोपियन अफसर रहते थे और उनको वेतन भी अँगरेजों की ओर से मिलता था । इसी फौज के बल पर अँगरेजी राज्य की स्थापना हुई है । यह बात महत्त्व की है ।

३. मैसूरवालों से चौथा युद्ध, (सन् १७९९):—

(अ) कारण और तैयारी:—फ्रेंचों की काररवाइयां खुल्लमखुल्ला हो रही थीं । ऐसी दशा में गवर्नर जनरल ने टीपू को नाश करके फ्रेंचों का हिन्दुस्थान से समूल उच्छेद करने की तैयारी जोर शोर से शुरू की । उसने अन्य राजाओं से भी संधान लगाया । निजाम टीपू को छोड कर अँगरेजों में मिल गया । सेंधिया और भोंसलों के पास फ्रेंच सेना थी । वे अँगरेजों में शामिल नहीं हुए । हां, पेशवा ने जरूर अँगरेजों को मदद देना स्वीकार किया । अफगानिस्तान में भी टीपू का संधान लगा था । युद्ध शुरू होते ही जमानशाह पंजाब पर चढाई करनेवाला था । मॉरीशस टापू से फ्रेंचों की सेना टीपू को मदद देने के लिए मंगलूर में आ उतरी । उस समय गवर्नर जनरल स्वयं मद्रास गया । जब टीपू ने देखा कि, युद्ध की तैयारी जारी है, तब उसने बाहर बाहर अँगरेजों से दोस्ती दिखलाई । पर उसे और भी बहुत सी मदद आने की आशा थी; इस लिए वह समय टाल रहा था । वेलस्ली ने यह दाव पहचान लिया और जनरल हॅरिस के अधिकार में बीस हजार फौज तथा दो सौ तोपें दे कर उसे टीपू पर रवाना किया ।

(आ) संग्राम:—इस युद्ध में बहुत सी मुहिमें नहीं हुई, और युद्ध भी अधिक दिनों तक नहीं चला । पहले पहल स्टुअर्ट के अधिकार में जो बम्बई

की फौज थी, उस पर टीपू ने हमला किया। पर उसमें उसीका पराभव हुआ। बादको उसने मद्रास की सेना पर हमला किया। मालवली में बढी भारी लडाई हुई, और टीपू ने हार खाई (सन् १७९९)। इस लडाई में गवर्नर जनरल के भाई ऑर्थर वेल्स्ली ने अच्छा पराक्रम दिखलाया। बाद को टीपू लौट आया। इतने ही में हैरिस अपनी फौज बडी युक्ति से एकदम श्रीरंगपट्टन के सामने ले आया। तब तो टीपू बहुतही भयभीत हुआ। ता. ६ एप्रिल को हैरिस ने किला घेर लिया। जब तीन मई को अँगरेजों की तरफ का सामान खतम हो गया, तब एकदम लढाई करने के सिवा उन्हें और मार्गही न रहा। ऐसी दशा में जनरल बेयर्ड लडाई की गर्जना करके आगे बडा। उस समय सात मिनट तक भयंकर लडाई हुई और अँगरेजों का झंडा किले पर जा लगा। एक घंटे में सब खतम होगया। वेल्स्ली राजमहल में गया; पर टीपू नहीं देख पडा। किले के टूटे फूटे भाग में शौर्य से लडते लडते जखमी होकर वह मरा पडा था। दूसरे दिन उसे उसके बाप की कब्र में गाडा दिया। इस प्रकार मैसूर का राज्य अँगरेजों के हाथ लगा।

(इ) टीपू की योग्यताः—टीपू ने १७ वर्ष राजकारबार किया; उसका स्वभाव चंचल और उतावला था। नौकरों पर उसका भरोसा नहीं रहता था। लोग उससे घबडा गये थे। बाप ने तो उसे पागलही ठहराया था। लोगों को कष्ट देकर मार डालने की घटनाएं सदा हुआ करती। तथापि वह शूर और महत्त्वाकांक्षी था। उसका मन था कि, एक नवीन धर्म स्थापित कर के मैं उसका पैगम्बर बनूं।

(ई) **मैसूर का प्रबन्धः**—मराठों की मदद समय पर नहीं पहुँची। वह आती, तो उन्हें भी मैसूर की बाँट का हिस्सा मिला होता। जिस राजा को पहले हैदर ने पदच्युत किया था, उसका नाती कृष्णराज वोडियार नामक मौजूद था। करीब साठ लाख पैदाइश का आधा राज्य अँगरेजों ने उसे दिया और अपने मुल्क से मिला हुआ तीस लाख का मुल्क निजाम को दिया। दस लाख का मुल्क पेशवा के हिस्से का अलग रख लिया गया; पर वह जब पेशवा से न लिया, तब निजाम और अँगरेजों ने बराबर बाँट लिया। टीपू की औरत को नव लाख की पेंशन मुकर्रर कर के उसे वेलूर में लाकर रखा। जिस इकरार से ये विभाग हुए उसे मैसूर की बाँट की सुलह कहते हैं, (सन्

१७९९)। टीपू के होशियार दीवान पूर्णेया को अँगरेजों ने कृष्णराज का दीवान नियत किया। पूर्णेया ने राजकाज अच्छी तरह से चलाया।

(उ) मैसूर के राजा से तह, (सन् १७९९):—इस तह की शर्तें ये हैं. (१) यह राज्य देनगी के तौर पर कृष्णराज को दिया जाना है; (२) राजा अँगरेजों की सहायक सेना अपने यहां रखे और उसके खर्च के लिए तीस लाख रुपये दे; (३) यह खर्च जब समय पर न पहुँचे तब अँगरेजों को मुल्क अलग कर दे।

४. सहायक सेना का अमल में लानाः—(अ) हिन्दुस्थान में आतेही वेल्स्ली ने निजाम के दरबार से फ्रेंचों की फौज अलग कर के अपनी फौज रख दी। इस काम में निजाम के दीवान मुसुरुल्मुल्क से उसे बहुत मदद मिली। निजाम के अँगरेजों में मिल जाने के कारन टीपू को जीतने का काम बहुत सहज होगया।

गवर्नर जनरल निजाम की तरह मराठे सरदारों से भी सहायक सेना रखने के विषय में सुलह करने का प्रयत्न कर रहा था। सन् १८०२ में बाजीराव ने अँगरेजों से बसई की सुलह की। उसके कुछ महीने पहले बडोदा के गायकवाड ने भी खंबात में अँगरेजों से शुलह करके उनकी सहायक सेना अपने यहां रखी। गायकवाड और पेशवा में कभी मेल न था। सन् १७६८ में जब दमाजी गायकवाड (दूसरा) मर गया, तब उसके लडके गोविन्दराव, सयाजीराव; फत्तेसिंगराव और मानाजीराव गद्दी के लिए आपस में झगडने लगे। नारायणराव पेशवा का खून होने पर फत्तेसिंग और सयाजीराव एक होकर राघोबा के पक्ष में मिल गये और गोविन्दराव पूना-दरबार के पक्ष में रहा। बाद को फत्तेसिंग और मानाजी के देहान्त होजाने पर सन् १७९३ में गोविन्दराव को गद्दी मिली और वह दक्षिण के बहुत से आदमियों को साथ लेकर बडोदे आया, और सात वर्ष राज्य कर के सन् १८०० में परलोक सिधारा। उसके बाद उसका लडका आनन्दराव गद्दी पर बेठा। वह बहुत चतुर न था, इस लिए राजकारबार उसका छोटा भाई फत्तेसिंगराव देखता था। उसके अनेक शत्रु थे। इसके सिवा स्वयं उसकी ही अरबी फौज उसे हैरान करती थी। इस लिए उसने मार्च सन् १८०२ में अँगरेजों से सहायक सेना की सुलह कर के उनकी मदद ली। इस प्रकार गायकवाड अँगरेजों का तावेदार होगया।

(आ) अवध का वजीरः—वजीरअली पदच्युत हुआ; परन्तु वह चुप नहीं बैठा। उसने गदर शुरू किया। उसे समझाने के लिए चेरी नामक साहब को अँगरेजों ने उसके पास भेजा; परन्तु वजीरअली ने भरे दरबार में उसे तथा दूसरे अँगरेजों को जान से मरवा डाला। उससे अँगरेजों ने वजीरअली को पकडकर जन्मभर के लिए कर दिया, (१८९९)। बाद को अवध के राज्यमें अपनी सहायक सेना रखने का विचार गवर्नर जनरल ने सआदत-अली से प्रकट किया। इस लिए सआदतअली को, अपनी फौज कम कर के, ब्रिटिश फौज का खर्च देना पडा। बाद को सन् १८०० में वजीर का डेढ करोड आमदनी का मुल्क लेकर वेलस्ली ने सहायक सेना बढाई और राज्य-प्रबन्ध अच्छी तरह चलाने के लिए वजीर से स्वीकारपत्र लिखवा लिया।

५. राज्यों का जप्त करनाः—यह बात वेल्सली के अनेक कामों से सिद्ध होती है कि, वह बडा राजनीतिनिपुण था। सहायक सेना रखने के झगडे में न पड कर उसने अनेक राज्यों को अँगरेजी राज्य में मिला लिया। वे राज्य ये हैं:—

(अ) तंजौर, (सन् १७९९):—यह राज्य शिवाजी के भाई व्यंकोजी ने स्थापित किया था। वास्तव में वह स्वतंत्र था। तथापि कर्नाटक का नवाब मुहम्मदअली, बादशाह के तरफ से, उस पर अपना हक बतलाता था। तंजौर का राजा उसे कर देकर संतुष्ट रखता था। तंजौर पर चढाई करने के लिए मदरास सरकार ने कई बार नवाब को मदद दी थी। सन् १७७१ में मद-रास सरकार ने वह राज्य ले लिया। परन्तु डायरेक्टर्स को यह काम पसन्द नहीं आया, इस लिए सन् १७७६ में तुलजाजी को वह राज्य फिर लौटा दिया। उस समय अँगरेजों ने उसके पास सहायक सेना रखकर २७७ गाँवें ले लिये और उससे यह ठहराव कर लिया कि, वह अँगरेजों के विरुद्ध कभी न चले। तुलजाजी सन् १७८७ में मर गया। उसके बाद सरफोजी नामक उसके लडके का दत्तविधान अँगरेजों ने अशास्त्र निश्चित किया और तुलजाजी के भाई अमरसिंह को गद्दी पर बैठाया। अमरसिंह का कारबार ठीक तौर से न चलता था। इधर सरफोजीनें अपना दत्तविधान सशास्त्र ठहराने का प्रयत्न शुरू किया। अन्त में सन् १७९९ में अँगरेजों ने अमरसिंह को पदच्युत करके सरफोजी का हक कबूल किया; पर उसका राज्य अपने राज्य में मिलाकर एक-पंचमांश पैदावार, पेंशन के तौर पर, राजा को देना स्थिर किया।

(आ) कर्नाटक, (सन् १८०१):—सन् १७५४ में अँगरेज और फ्रेंचोंकी तह से मुहम्मद अली कर्नाटक का नवाब ठहरा और सन् १७६३ की पेरिस की सुलह से वह कायम हुआ। बाद को राज्य–कारबार के सम्बन्ध में अँगरेजों से उसके अनेक झगडे हुए। मुहम्मदअली सन् १७९५ में मर गया, और उसका लडका उमदतुलउमरा नवाब हुआ। वे दोनों बहुत कर्जी हो गये थे। मैसूर का राज्य अँगरेजों के हाथ में आने पर यह मालूम हुआ कि, दोनों नवाबों का टीपू सुलतान से गुप्त पत्रव्यवहार होरहा था, और उससे वे नवाब जा मिलना चाहते थे। उमदतुलउमरा सन् १८०१ में मर गया। वेल्स्ली ने उसके वारिस को पेंशन देकर राज्य जप्त कर लिया।

६. प्रयाण और योग्यता:—वेल्स्ली की सची कारवाई मराठों के युद्ध में देख पडती हैं। अँगरेजों के सच्चे शत्रु मराठे ही थे, जो कि, उन्हें हिन्दुस्थान हस्तगत न करने देते थे। वे केवल प्रबलही न थे; किन्तु वे अपने को भारत-वर्ष के स्वामी समझने लगे थे, और उनके पास फ्रेंच फौज की उत्तम भरती थी। ऐसे मराठों को वेल्स्ली ने तीन महीने में जीत कर भारत में अँगरेजों की सार्व-भौम सत्ता स्थापित की। इस युद्ध का वर्णन मराठों के भाग में आ गया है।

वेल्स्ली ने भारत के बाहरवाले राज्यों से अँगरेजों का स्नेहसम्बन्ध करने का प्रयत्न किया। देश में सत्ता स्थापित होते ही सरहद का बन्दोबस्त करना पहला काम है। उसके लिये वेल्स्ली ने ईरान को वकील भेजा। उसका वृत्तान्त:—

ईरान में माल्कम की विकालत (सन् १८००):—अहमदशाह दुर्रानी के बाद उसका लडका तैमूरशाह अफगानिस्तान में राज्य करता था। बादको तैमूरका लडका जमानशाह, हिन्दुस्थान में मुसल्मानों की प्रबलता फिरसे स्थापित करने के लिए, भारत पर चढाई करने की तैयारी कर रहा था। टीपू सुलतान से उनका पत्रव्यवहार जारी था। अवध के वजीर की सहायक सेना इस आधार से चढाई गई थी कि, कहीं मौका पाकर वह भी टीपू में न मिल जाय। इतने ही में फ्रेंचों का बादशाह नेपोलियन एशियाखण्ड में पैठा और जान पडता था कि, ईरान के बादशाह से संधान लगा कर वह हिन्दुस्थान पर आने ही वाला है। उसको रोकने के लिए गव्हर्नर जनरल ने सर जॉन माल्कम को ईरान के शाह के पास वकील के बतौर भेजा। उसने शाह से इस प्रकार सुलह कर ली:—

(१) शाह फ्रेंच लोगों को ईरान से निकाल दे, और भारत पर चढाई करने में उन्हें मदद न दे। (२) ईरान का सब व्यापार अँगरेजों से किया जाय। परन्तु इस सुलह का बहुतसा उपयोग नहीं हुआ।

वेलस्ली का राज्य-प्रबन्ध उस समय विलायत में पसन्द नहीं हुआ। टीपू का राज्य जीतने पर उसे शाबासी जरूर मिली, परंतु आगे के अनेक कामों में डायरेक्टरों की ओर से उसे दोष दिया गया। वह सहन न होने से उसने १८०२ में अपने काम से इस्तीफा दिया; परन्तु वह विलायत में मंजूर नहीं हुआ, और सन् १८०३ में एक वर्ष और कारबार देखने के लिये हुक्म हुआ। बादको जब वह मराठों के झगडे में पडा, तब विलायत में अत्यन्त अस्वस्थता उत्पन्न हुई। इँगलेंड के लोग उस समय नेपोलियन की धाक से घबडा गये थे; इस लिए विलायत सरकार को यह डर लगा की वेलस्ली की कारवाइयों से संकट बढतेही जावेंगे। इसी कारण सन् १८०५ में विलायत सरकार ने उसे लौटा लिया, और उसकी जगह पर पहले के वृद्ध, शान्तिप्रिय तथा अनुभवी राजनीतिज्ञ कॉर्नवालिस को भेजा। विलायत में वेलस्ली के अन्यायी कारबार के विषय में १९५ के विरुद्ध ९२८ मत आये। इस लिए कोर्ट ऑफ प्रोप्रायटर्स ने उसे उसका प्रायश्चित्त धमकी के रूप में दिया। बाद को तीस वर्ष में लोगों ने उसकी सच्ची कर्तृत्वशक्ति पहचानी। तब उसके विषय का पहला ठहराव रद् हुआ और यह पास हुआ कि:—"अँगरेजी राज्य का सम्मान रखकर उसने उसका लाभ किया।" इस पर वेलस्ली को दो लाख रुपये इनाम मिले, और इंडिया हाउस में उसकी प्रस्तर-मूर्ति प्रतिष्ठित की गई।

वेलस्ली के और भी स्मरणीय कृत्य हैं। उसने व्यापार का निर्बन्ध तोड डालने का प्रयत्न किया। हिन्दुस्थान में नौकरी पर आनेवाले यूरोपियनों के लडकों के लिए कलकत्ते में उसने एक विद्यालय स्थापित किया; पर उसे, बहुत खर्च का काम समझ कर, डायरेक्टरों ने बन्द कर दिया, और उसकी जगह इंग्लैंड ही में हेलिबरी नामक स्थान में एक पाठशाला खोल कर यह निश्चय किया कि, हिन्दुस्थान में जो लोग नौकरी के लिए जावें, वे वहीं पढें। वेलस्ली ने न्याय का प्रबन्ध भी कुछ ठीक किया।

कॉर्नवालिस जौलाई सन् १८०५ में आया। वह हिन्दुस्थान में शान्ति स्थापित करने के लिए उत्तर ओर जा रहा था; परन्तु ५ अक्टबर को गाजीपुर में उसका देहान्त होगया। तब सर जॉर्ज बार्लो गव्हर्नर जनरल नियत किया गया।

पाठ सातवां ।

बार्लो, मिंटो और हेस्टिंग्स ।

सन् १८०५-१८२२ ।

१. सर जॉर्ज बार्लो ।
२. लॉर्ड मिंटो । रणजीतसिंह से सुलह ।
३. पार्लिमेंट का वादविवाद ।
४. लॉर्ड हेस्टिंग्ज् ।
५. नेपाल से युद्ध (अ) पूर्ववृत्तान्त । (आ) कारण, (इ) पहली मुहिम । (ई) दूसरी मुहिम ।

१. सर जॉर्ज बार्लो, (सन् १८०५-०६):—इसने शान्तिही की पद्धति शुरू की, और जो युद्ध जारी थे उन्हें एकदम बन्द करके सुलह कर ली। यह हाल मराठों के भाग में आया है, इसके समय की प्रसिद्ध बात वेलोर का सिपाहियों का दंगा है, (१० जुलई सन् १८०६)। टीपू के कुटुम्बी वेलोर में थे। उनकी रखवाली के लिए १५०० हिन्दुस्थानी और कुछ यूरोपियन सिपाही थे। मद्रास की सेना के सिपाहियों को कुछ नवीन पोशाक और टोपियां दी गई, तथा इस प्रकार के कुछ नियम बनाये गये कि वे मस्तक में चन्दन न लगावे और दाडियां रखावे। इस कारण उनके मन क्षुब्ध हुए। एक दिन सवेरे ही जब कि अफसर लोग सो रहे थे। वेलोर में उन पर हिंदुस्थानी सिपाहियों ने गोलियां चलाई और मैसूर का निशान किले पर लगा। दिया। अर्काट में यह खबर पहुंचने पर कर्नल जिलेप्सी फौज लेकर आया; उसने बलवा शान्त करके टीपू के आदमियों को कलकत्ते भेज दिया। इस घटना से मद्रास के गवर्नर लॉर्ड विलियम बेंटिंक को दोष दिया गया और वह नौकरी से उतार दिया गया। तथा उसकी जगह मद्रास में बार्लो नियत किया गया और बोर्ड आफ कंट्रोल सभा का अध्यक्ष लॉर्ड मिंटो गवर्नर जनरल मुकर्रर होकर विलायत से आया, (जुलाई सन् १८०७)।

२. लॉर्ड मिंटो, (सन् १८०७-१३):—मिंटो को यह ताकीद कर दी गई थी कि शांति रखकर राज्य-प्रबन्ध करना चाहिए। उसने अपने राष्ट्र का गौरव कम नहीं होने दिया और उस नियम का पालन भी किया। उसने भारत की सरहद मजबूद करने का इस प्रकार प्रयत्न किया:—

रणजीतसिंह से सुलहः—पंजाब में सिक्ख लोग स्वतंत्रता से रहते थे। उनका पहले का वृत्तान्त मुगलों के इतिहास में आया है (भाग २ पाठ ९ पृ. ७८ पर "सिखलोगों के झगडे" देखो)। अफगानिस्तान के प्रबल बादशाह अहमदशाह दुर्रानी ने पंजाब प्रान्त जीत लिया था। पर उसके मरने पर अफगान लोगों में झगडे लगें, तब सिक्ख लोगों ने पंजाब पर फिर अपना अधिकार कर लिया। पंजाब में सिक्खों के छोटे छोटे स्वतंत्र राज्य थे। उनमें आपस के झगडे लगे रहते थे। चतुरसिंह नामक एक राजा ने ये सब राज्य एकत्र करने का प्रयत्न किया। इसके लडके महासिंह ने इस काम में बहुत सफलता प्राप्त की। उसने छोटे छोटे सिक्ख राजाओं का एक मंडल बनाया। अन्त में महासिंह के लडके रणजीतसिंह ने अपने शौर्य और चातुर्य से सब सिक्ख राजाओं को मिलाकर स्वयं उनका मुखिया बना। तथापि सतलज नदी के पूर्व ओर जो सिक्ख राज्य थे उन्होंने रणजीतसिंह की अधीनता नहीं स्वीकार की। रणजीतसिंह बहुत चाहता था कि पूर्व ओर यमुना नदी तक अपना राज्य बढावें। सतलज नदीके पूर्व ओर नाभा और पटियाला की रियासतों में एक झगडा लगा। उसे मिटाने के लिए सन् १८०७ में रणजीतसिंह सतलज पार आया, और सरहिन्दप्रान्त से उसने कर वसूल किया। उस समय उन रियासतों ने अँगरेजों से मदद मांगी। मुख्य प्रश्न यह था कि रणजीतसिंह के राज्य की सीमा सतलज नदी हो या यमुना नदी हो? ऐसे अवसर पर गवर्नर जनरल ने कुछ समय के लिए अपनी तटस्थता छोड कर मेटकाफ नामक एक चतुर साहब को रणजीतसिंह से बातचीत करने के लिए भेजा, और साथ में कुछ फौज भी दी थी, जिससे मौका पडने पर काम आवे। रणजीतसिंह के पास जाने पर मेटकाफ को अनेक कठिनाइयां पडीं। उन सब से बच कर ता २५ एप्रिल सन् १८०९ को अमृतसर में उसने रणजीतसिंह से सुलह की। उसमें निश्चय हुआ कि रणजीतसिंह सतलज पार न आवे। अँगरेजों ने लुधियाना में फौज की छावनी नियत कर के वहां अपनी फौज रख दी। रणजीतसिंह ने इस सुलह का बराबर पालन किया।

मिंटो ने माउंट स्टुअर्ट एल्फिन्स्टन को अफगानिस्तान में और सर जान माल्कम को ईरान में वकील के तौर पर भेजा; पर उनसे कुछ बहुत लाभ नहीं हुआ।

इस शासनकाल में यद्यपि भारत में शान्ति थी, तथापि पोर्तगीज और डच आदि लोगों से समुद्र पर लॉर्ड मिन्टो नें कई संग्राम किये । त्रावनकोर राज्य में कुछ दंगा होने के कारण वहां का कारबार अँगरेज सरकार ने कुछ दिनो के लिए अपने हाथ में ले लिया । इधर मद्रास में यूरोपियन फ़ौज में असन्तोष के कारण गदर हुआ । उसे वहां के गवर्नर बार्लो ने देशी सिपाहियों की मदद से शान्त किया ।

३. पार्लिमेन्ट का वादविवादः—सन् १८१३ मे कंपनी की सनद् को बीस वर्ष की मियाद खतम होगई । इसके बाद नवीन सनद देते समय बहुत सा महत्त्व-पूर्ण वाद हुआ । अर्थशास्त्र पर नवीन ग्रंथरचना और चर्चा होने के कारण उस समय यह मत चढ रहा था कि, व्यापार में कोई प्रतिबंध न रहे । इस लिए लोगों ने पार्लिमेन्ट में यह आग्रह किया कि, कंपनी के व्यापार का जो ठेका हैं वह बन्द किया जाय । विलायत का मुख्य प्रधान लॉर्ड कैसल-रींग कंपनी के विरुद्ध था । कंपनी का कथन था कि, हिन्दुस्थान में जीता हुआ मुल्क हमारा है; वहां का व्यापार, हम जैसा चाहेंगे वैसा जारी रखेंगे; और हमारी मदद बिना हिन्दुस्थान का कारबार ठीक ठीक नहीं चल सकता । परन्तु इस कथन का प्रधानमंडल ने सप्रमाण खंडन कर डाला । इस प्रकार चार महीने के वादविवाद से नीचे लिखी हुई बातें स्थिर हुई । (१) कम्पनी की सनद और बीस वर्ष के लिए बढाई जाय । फौज तथा अन्य विभागों के सब नौकर नियत करने का अधिकार कम्पनी की तरफ रहे । (२) हिन्दुस्थान में चाहे जो व्यापार करे; परन्तु चीन देश में कम्पनी को छोडकर दूसरा कोई व्यापार न करे ।

सन् १८१३ में निश्चय हुआ कि, भारत में ईसाई धर्म का प्रचार किया जाय और कलकत्ते में धर्मपीठ पर एक बिशप मुकर्रर किया गया ।

सन् १८१३ में मिंटो की मुद्दत खतम हुई और लार्ड हेस्टिंग्स् को गवर्नर जनरल का काम दिया गया । मिंटो का राज्य-प्रबन्ध सब प्रकार से प्रशं-सनीय हुआ ।

४. लॉर्ड हेस्टिंग्स, (सन् १८१४-२२):—यह साहब अनुभवी और वयोवृद्ध था । जब वह विलायत में था, तब उसका यही मत था कि, राज्य-वृद्धि के लोभ से हिन्दुस्थान के राजाओं पर अँगरेजों को शस्त्र न उठाना चाहिए

वेलस्ली की अन्याययुक्त कारवाइयों के लिये हेस्टिंग्स ने उसकी निन्दा की थी; और जब वह भारत के लिए चलने लगा था तब उसने शांतिभंग न करने का निश्चय किया था। पर यहां आने पर उसके मत बदल गये, और वे इतने बदल गये कि हिन्दुस्थान में राज्यवृद्धि के सम्बन्ध में जिन चार राजनीतिज्ञों के नाम प्रमुख हैं, उनमें से एक हेस्टिंग्स् भी है। इस गवर्नर जनरल ने प्रजाहित के लिए दो याद रखने लायक बातें कीं; (१) हिन्दुस्थान के लोगों को विद्यादान देने के लिए उसने देशी शिक्षण की शालाएं स्थापित कीं; और (२) छापेखाने तथा समाचारपत्रों को उत्तेजन दे कर, चाहे जो विषय प्रकाशित करने के लिए उसने आज्ञा दी।

लॉर्ड हेस्टिंग्स् का शासनकाल युद्धों से भरा हुआ है। पिंडारियों और मराठों से युद्ध करके वेलस्ली का अधूरा काम उसने पूरा किया। इन युद्धों का वृत्तान्त मराठों के भाग में आ गया है भाग ३ पाठ १३ देखो। उनके सिवा उसने एक और भी युद्ध किया।

५. नेपाल से युद्ध, (सन् १८१४-१६)। (अ) पूर्ववृत्तान्तः—हिन्दुस्थान के उत्तर में हिमालय के दक्षिणी उतार पर नेपाल नाम का एक उपजाऊ प्रान्त है। आठवें शतक से जब भारत में वैदिक धर्म की प्रवृत्ति होने लगी तब बौद्ध धर्म को पूर्व और उत्तर की तरफ हटना पडा; इस लिए बौद्ध लोग गंगा-यमुना के किनारे के मठ छोड कर, सृष्टिसौंदर्य से सुशोभित नेपाल के उत्तरी पहाडों में जा रहे। तिब्बत में लासा नामक स्थान उस धर्म का मूलस्थान बन गया। नेपाल के दक्षिण ओर से अति विस्तीर्ण अरण्य है, उसके आगे एक दलदल का बडा मैदान है। इस मैदान को तराई कहते हैं। नेपाल में मुसल्मानोंकी बस्ती नहीं है। वहां पहले छोटे छोटे राज्य थे। आठवें शतक में ये सब राज्य नष्ट होकर उनमें से तीन राज्य प्रबल हुए। उनमें भी काठमांडू का राजा सब में मुख्य था। उसीको ईस्ट इंडिया कम्पनी नेपाल का नेवार राजा कहती थी। ये नेवार लोग खेती और व्यापार करके अपना गुजर करते थे। ईस्ट इंडिया कम्पनीका भी नेपाल से बहुत सा व्यापार होता था। कम्पनी के व्यापारी तिब्बत से बंगाले में सोना लाते थे। काश्मीर में गोरखा नाम के राजपूत जाति के रणशूर लोग रहते थे। उन्होंने सन् १७६७ में राज्य और द्रव्य के लोभ से नेपाल पर चढाई की। वे दूसरे राजपूतों के समानही हिन्दू थे। गोर-

खोंने जब काटमांडू के राजा को जेर किया तब उसने अँगरेजों से मदद मांगी। गवर्नर जनरल ने कुछ फौज रवाना की; पर जब उसे तराई में बरसात के कारण मार्ग न मिला तब बहुत लोग तो बीमार होकर मर गये, और बहुतों को लौट आना पडा। पृथुनारायण नामक गोरखों का रणशूर सरदार था। उसे सब लोग महाराज कहते; और उसके सरदारों को मारदार कहते थे। अपने मारदारों की मदद से पृथुनारायण ने नेपाल प्रान्त जीत लिया, और नेवार राजा तथा प्रमुख लोगों को कत्तल करके सब राज्य भारदारों को बाँट दिया, और स्वयं काटमांडू में राज्य करने लगा। राजकाज में राजा को मदद करने के लिए भारदार लोगों की एक कौन्सिल रहती थी; इस कारण नेपाल का राज्य–प्रबन्ध एक प्रकार से लोगों ही के हाथ में था। इसके सिवा नेपाल में बारा हजार फौज हमेशा रहा करती थी। और वह हर साल बदलती रहती थी। तीन वर्ष बाद वही लोग फिर काम पर आते थे। इस लिए बारा हजार को तनखाह देकर ३६ हजार फौज सदा तैयार रखी जाती। जिस प्रकार हमारे यहां दशहरा का त्योहार होता है, उसी प्रकार उनके यहां पंजानी नामक त्योहार बडे धूमधाम से होता। नवीन फौज उसी दिन रखी जाती, और सब सरकारी पुराने कर्मचारी बदल कर नवीन नियत करनेका काम भी उसी दिन होता। सारांश, खास महाराजको छोड कर प्रति वर्ष सब कुछ बदलता रहता। यह राज्यपद्धति विशेष ध्यान देने योग्य है। पूर्वीय देशों में सरदार लोगों की सम्मति से राज्य चलाने की पद्धति सिर्फ इसी देश में पाई जाती है।

सन् १७७१ में पृथुनारायण परलोक सिधारा। चार वर्ष बाद उसका बडा पुत्र भी मर गया, तब उसके छोटे लडके रणबहादुर को लोगों ने गद्दी पर बैठाया, और उसके चाचा को उसका संरक्षक नियत किया। इस चाचा के मन में आया कि, राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में आ जाना चाहिए। इसी लिए उसने रणबहादुर को कई बुरे व्यसनों में फँसा दिया। इस समय गोरखा फौज काश्मीर, भूटान, शिकम, तिब्बत आदि प्रान्तों पर चढाइयां करने में फँसी हुई थी। इन लोगों ने लासा के पवित्र मन्दिर को लूट लिया, इस कारण चीन के राजा ने क्रोध में आकर ७० हजार फौज नेपाल पर भेजी। तब घबडा कर गोरखों ने अँगरेजों से मदद माँगी। लेकिन उस समय अँगरेज और गोरखों में व्यापारविषयक स्पर्धा जारी थी; इस लिए अँगरेजों

ने उन्हें मदद नहीं दी। चीन की फौज ने गोरखों को जेर किया और प्रतिवर्ष कर लेना निश्चय कर के लौट गई। बादको रणबहादुर ने अपने चाचा को कैद कर के सारा राज्यकारबार अपने हाथ में ले लिया, (सन् १७९५)। रणबहादुर अत्यन्त क्रूर था। उसे गोरखों ने, दामोदर पांडे नामक चतुर सरदार की मदद से, काशी में निकाल दिया।

काशी में लॉर्ड वेलस्ली ने रणबहादुर का आच्छा सत्कार किया; और-खर्च के लिए बहुत सा द्रव्य दिया, तथा उसके लिए एक होशियार अँगरेज नियत कर दिया, और उसी अँगरेज को रणबहादुर की तरफ से बात चीत करने के लिए काठमांडू के दरबार में भेजा। काठमांडू के दरबार में जाकर उस वकील ने निवेदन किया कि, रणबहादुर को जो धन अँगरेजों ने दिया है, वह अदा कर दिया जाय और उसके लिए ठीक पेंशन नियत कर दी जाय। परन्तु इसका कुछ भी उपयोग नहीं हुआ। बाद को रणबहादुर नैपाल लौट गया और वहां उसका खून हुआ।

(आ) युद्ध के कारण:—गोरखा लोग अपने देश की हद दक्षिण की तरफ बढाने लगे। यह कृत्य बन्द करने के लिए गवर्नर जनरल बार्लो और मिन्टो ने बहुत प्रयत्न किया; पर गोरखों ने वह काम बन्द नहीं किया। हेस्टिंग्स् को मालूम हुआ कि, गत २५ वर्षों में गोरखों ने ब्रिटिश हद के २०० गाँव अपने राज्य में मिला लिये। तब उसने फौज भेज कर पहले भूतवल शहर ले लिया। इस लिए नेपाल दरबार में उस समय इस बात का विचार शुरू हुआ कि, अँगरेजों के साथ अब युद्ध करना चाहिए, या उनसे दोस्ती करनी चाहिए। अन्त में युद्ध करनेही का विचार स्थिर हुआ, और गोरखों की फौज भूतवल पर चढ धाई। उन्होंने वहां के अँगरेजी पुलिस हाकिमों को और १८ लोगों को जान से मार डाला। ज्योंही यह खबर हेस्टिंग्स् को मालूम हुई त्योंही उसने युद्ध की तैयारी की, और निश्चय हुआ कि, नेपाल पर चार फौजें चढाई के लिए भेजी जावें। उनमें से जनरल जिलेप्सी सतलज नदी पर से, जनरल वुड भूतवल पर, जनरल ऑक्टरलोनी पश्चिम ओर से सिमला होकर और जनरल मार्लें काठमांडू पर गोरखों से सामना करने के लिए भेजे जावें।

(इ) पहिली मुहिम, (सन् १८१४-१५):—जनरल जिलेस्पी ने कलुंग किले पर हम्ला किया। धीरे धीरे किला जीतने की हमेशा की चाल छोड कर उसने एकदम किले पर धावा किया। उसमें वह स्वयं गोली लग कर मारा गया और ७०० लोग जख्मी हुए। दिल्ली से मदद आने पर कर्नल मार्ले ने किला लेने का प्रयत्न किया; पर उसके भी ६००।७०० लोग काम आये, और वह लौट गया। जनरल मॉर्टिंडेल ने जयठक नामका शत्रुओं का थाना लेने का प्रयत्न किया; पर वह सफल नहीं हुआ। बाद को जिलेस्पी की जगह में जनरल मार्टिंडेल की तैनाती हुई; परन्तु उसने ढील की, इस लिए यद्यपि किला हस्तगत होगया; तथापि उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। वुड की टुकडी का भी वही हाल हुआ। जनरल मार्ले तो बिलकुलही कमजोर निकला। वास्तव में उसे काठमांडू पर हम्ला करना था; पर वह स्वस्थ पडा रहा; इस लिए शत्रुओं ने उसकी सारी सेना नष्ट कर के तोपें आदि सब सामान छीन लिया। उसकी मदद के लिये और भी फौज आई; पर उसका भी कोई उपयोग न हुआ। अन्त में सन् १८१६ की १० फरवरी को वह चूपचाप अकेले ही घोडे पर बैठ कर दानापुर को भग गया। हां, आक्टरलोनी के टुकडी सिर्फ थोडा बहुत जय प्राप्त हुआ। सन् १८२५ के मई महीने में उसने गोरखों कें मालौन नामी मजबूत किले पर अपना अधिकार कर लिया। तब वहां का सरदार अमरसिंह काठमांडू को भाग गया।

(ई) दूसरी मुहिम, (सन् १८१६):—नेपाल की कौंसिल ने जब यह सुना कि, माल्तैन में अमरसिंह पराजित हुआ तब उसने तह करने का विचार किया। इधर गवर्नर जनरल को भी विचार था कि, वादग्रस्त परगने नेपाल को देकर किसी तरफ से अपना पैर हटा लिया जाय; पर अमरसिंह ने कहा कि, इस प्रकार से तह करना अपने लिए अप्रतिष्ठा का कारण होगा। इस लिए फिर युद्ध शुरू हुआ। अँगरेजों की ओर आक्टरलोनी भी फौज लेकर ठेठ राजधानी पर चढ धाया। इस वार काठमांडू से ५० मील पर मकवानपूर नामक मुकाम में गोरखों की हार हुई, और दोनों में इस प्रकार की सुलह हुई, (सन् १८१६)। (१) नेपाल दक्षिण के वादग्रस्त प्रदेश से अपना हक अलग कर ले और अँगरेज लोग तराई प्रान्त का अपना हक छोड दें; (२) अँगरेजों का वकील नेपाल के दरबार में रहे।

इस युद्ध से ब्रिटिश राज्य को ये फायदे हुए । (१) नेपाल की तरफ अँगरेजी राज्य की हद ठहर जाने से नेपाली दरबार के हिन्दुस्थान के झगडे में पढने का जो डर था वह मिट गया । (२) शूर गोरखे लोग अँगरेजों की फलटन में नौकरी करने लगे। (३) जो कुछ पहाडी मुल्क अँगरेजों को मिला उसमें सिमला, मंसूरी लंधोरा, नैनीताल आदि अनेक हवा खाने के स्थान अँगरेजों के हाथ में आ गये।

पाठ आठवाँ ।

लॉर्ड ऐमूहर्स्ट ।

सन् १८२३-१८२८ ।

१ ब्रिटिश सत्ता के रूपान्तर । २. पहिला ब्रह्मी युद्ध, (सन् १८२५—२६) । (अ) पूर्ववृत्त । (आ) कारण । (इ) मुहिम और सुलह । ३. जाट लोगों से युद्ध (१८२६) । (अ) पूर्ववृत्तान्त । (आ) भरतपुर की लडाई । ४. फुटकल ।

१. ब्रिटिश सत्ता के रूपान्तरः—जनवरी सन् १८२३ में लार्ड हेस्टिंग्स् विलायत चला गया। उसके बाद लॉर्ड ऐमूहर्स्ट गवर्नर जनरल हुआ । जिस समय वह आया उस समय चारों ओर शान्ति थी । लॉर्ड हेस्टिंग्स् के जमाने में मराठों का राज्य अँगरेजों के हाथ में चला गया था, और हिन्दुस्थान का बहुत सा भाग अँगरेजी छत्र के ही नीचे आगया था । यदि यह देखा जाय कि, हिन्दुस्थान अँगरेजों की सत्ता में किस किस क्रम से आया, तो जान पडता है कि, यदि सन् १७४४ में ब्रिटिश सत्ता का आरंभ माना जाय, तो शुरू शुरू के करीब तीस वर्षों तक (१७४४-७४) ब्रिटिश सत्ता यहां के अन्य राजाओं से कम बलवान थी । वॉरन हेस्टिंग्ज के समय से वह सत्ता उन राजाओं की सत्ता के बराबर हुई । यह बराबरी की दशा करीब ३० वर्ष रही, (सन् १७७४-१८०४) । वेलस्ली के समय से वह सत्ता सार्वभौम हो गई । यह तरक्की कायम होने के लिए, और लडाई तथा धुमधाम के पंजे से छूट कर स्वास्थ्य प्राप्त होने के लिए, और ५०-५५ वर्ष लगे (१८०४ १८५८).

इस अन्तिम समय में (१) मराठे, राजपूत और मुसलमान राजाओं पर ब्रिटिश सत्ता का अधिकार अच्छी तरह जम गया। पर इसके सिवाय (२) सिंध के अमीर, ब्रह्मी लोग, पंजाब के सिक्ख, अफगान, आदि अनेक सरहद्दवाले राष्ट्रों से अँगरेजों को झगडे करने पडे। इन झगडों से अँगरेजी राज्य की बाहरी सरहद्द ठीक ठीक निश्चित हुई, और उसमें मजबूती आगई। सारांश, इन पचास वर्षों में ये दो बातें मुख्य हुई कि, अव्वल तो राज्य स्थिर हुआ, और दूसरे सरहद्द मजबूत होगई। यहांसे, आगे जिन युद्धों का वर्णन आवेगा, वे खासकर सरहद्द सम्बन्धी है। नेपाल का युद्ध भी उन्हीं में से है।

२. पहला ब्रह्मी युद्ध, (अ) पूर्ववृत्तान्तः—बंगाल के पूर्व और उत्तर से दक्षिण की ओर फैला हुआ, एक बडा चोकोना प्रदेश है। उसे ब्रह्मा का मुल्क कहते हैं। उसमें ऐरावती नदी बहती है। उसके किनारे का प्रदेश बहुत उपजाऊ है। उत्तर ओर के भाग को ऊपर का ब्रह्मा और दक्षिणी भाग को नीचे का ब्रह्मा कहते हैं। वहां के लोग हिन्दू-चीनी जाति के हैं। उनका रंग गोरा है। वे बोद्धधर्मी हैं। पहले वे वैदिक धर्म का पालन करनेवाले हिन्दू थे। उनमें जातिभेद, बालविवाह और पडदा नहीं हैं। वे राजपूती बाना के पुरुष हैं। व्यवहार और बाजार आदि के सब काम स्त्रियां करती हैं। धर्म पर उनकी श्रद्धा है। प्रत्येक गाँव में कमसे कम एक बुद्ध का मन्दिर और उसीसे मिला हुआ विद्यामठ अवश्य रहता है।

ब्रह्म में पहले छोटे छोटे राज्य कई थे। उत्तर की ओर वाले आवा के बोद्धधर्मी लोगों का दक्षिण के पेगू प्रान्तवाले तालेन लोगों से सदा झगडा बना रहता था। चीन और श्याम के राजा सदा इस देश पर चढाई करते रहते। सोलहवें शतक में गोवा की तरफ से बहुत से पोर्चुगीज लोग ब्रह्मा में गये और वहां उन्होंने फौज में नोकरी की। उसी शतक में बार्यान नौग नामक एक शूर पुरुष प्रगट हुआ। उसने ब्रह्मा का बहुत सा भाग जीतकर अपने अधिकार में कर लिया। उसके करीब दो सो वर्ष बाद, अर्थात् सन् १७५० के करीब, अलोन्दरा नामक और ब्रह्मी पुरुष प्रसिद्ध हुआ। उसने आवा प्रान्त को पेगू के तालेन लोगों से छुडाया और पेगू सहित सारा प्रान्त जीतकर अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। अँगरेज लोग पेगू के नीग्रेस नामक बन्दर से तालेन लोगों को गोला-बारूद आदि सामान भेजते रहते थे। परन्तु ज्योंही

यह बात अलोम्परा को मालूम हुई त्योंही उसने अनेक अँगरेजों को जान से मार डाला। उसके बाद मोडोफ्रा नामक उसका पराक्रमी नाती सन् १७७९ से १८१९ तक ब्रह्मा में राज्य करता था। मोडोफ्रा के बाद फाग्यीडो नामक राजा के समय में पहले पहल ब्रह्मी लोगों के साथ अँगरेजों का युद्ध हुआ।

(आ) **युद्ध के कारणः**—दो राष्ट्रों की पारस्परिक स्पर्धा इस युद्ध का अन्तस्थ कारण है। मोडोफ्रा ने अराकान प्रान्त जीत लिया; परन्तु वहां के लोग उसके विरुद्ध उभडकर अँगरेजी हद्द में भग आये। उन्हें अराकान के अधिकारी ने लौटा मँगाया। सर जॉन शोर ने उनका माँगना कबूल किया था पर वेलस्ली ने इन्कार कर दिया, और ब्रह्मी राजा को समझाने के लिए अपने वकील भेजे। परन्तु राजा ने अपनी मांग नहीं छोडी। सन् १८२२ में उनके महाबन्धुला (सेनापति) ने आसाम, मनीपुर आदि के राज्य जीत लिये, इस कारण ब्रह्मा की हद अँगरेजों के राज्य में आ मिली। ब्रह्मी लोगों ने शाहपुर टापू को अपना समझ कर वहां की अँगरेजी फौजको भगा दिया और उस टापू पर आपना कब्जा कर लिया। बादको अँगरेजों ने अपनी फौज भेज कर उसे लौटा लिया और आवा के राजा को एक पत्र लिखा। इस पर राजा ने युद्ध करना निश्चय किया और महाबन्धुला को फौज देकर अँगरेजों पर भेजा।

(इ) **मुहिम और सुलह, (सन् १८२५–२६)**:—तीन तर्फों से ब्रह्मा पर अँगरेजी फौजें आईं। मद्रास से कुछ फौज सर आर्चिबॉल्ड कैंपबेल के अधिकार में रंगून पर आई। बंगाल की हद पर कैप्टन नॉटन् की फौज थी। उस पर हम्ला करके महाबन्धुला ने उसका पराजय किया। पूर्व की ओर से, आसाम होकर कई फौजें गईं; पर उधर की हवा बहुत बुरी थी, और रास्ते में बड़े बड़े जंगले तथा दलदल थे; इस कारण फौजों को लौट आना पडा। हां, मद्रास की फौज को अवश्य ऐरावती नदी पर अच्छी कामयाबी हुई। पहले पहल वे रंगून शहर लेकर वहीं छावनी डाल कर रहे। वहां से चालीस मील पर दोनाबू में महाबंधुला था, उस पर सन १८२५ के मार्च महीने में अँगरेजों ने हम्ला किया। उस समय पहले तो वे शिकस्त खा कर पीछे हटे। परन्तु उधर महाबन्धुला गोली लगकर मर गया; इस कारण ब्रह्मी फौज गबड़ा कर भाग गई। इसे दोनाबू की लडाई कहते हैं। प्रोम शहर भी अँगरेजों ने जल्दी ले लिया। कुछ दिन सुलह की चर्चा होती रही; पर कुछ तै न हुआ;

इस कारण वटिगांव और प्रोम आदि जगहों में ब्रह्मी लोगों का और भी पराभव हुआ। इसके बाद सन् १७२६ के फरवरी मास में यंदाबू में सुलह हुई। उसमें (१) तनासिरम और अराकान प्रान्त अँगरेजों को देना; (२) युद्ध के खर्च के लिए एक करोड रुपया ब्रह्मी राजा से अँगरेजों को मिलना; और (३) अपने दरबार में अँगरेजों का वकील रखना—इस प्रकार की तीन शर्तें ठहरीं।

इस युद्ध का प्रबंध ठीक न था, और अँगरेजों को उस देश की जानकारी भी न थी; इस कारण उन्हें साढेदस करोड रुपये का खर्च पडा।

४. जाट लोगो से युद्ध, (सन् १८२६):—(अ)—जाट लोगो का पूर्व वृत्तान्तः—कदाचित् जाट लोग मूल में सिथियन जाति के होंगे, और पुरातन काल में पंजाब की ओर से भारत में आकर रहे होंगे। जो पंजाब में रहे वे सिक्स होगये, और जो अधिक आगे बढ आये उन्होंनें लूट लाट कर के, दिल्ली के आसपास आगरा और अलवर के बीच में, एक स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। वही भरतपुर का राज्य है। अठारहवें शतक में सूरजमल नामक एक पराक्रमी जाट सरदार आसपास के मुल्क पर धावे कर रहा था। उसने चार भारी किले बनाए अथवा दुरुस्त किये होंगे। वे सब मिट्टी के थे। वे इतने मजबूत थे कि उन पर तोपों का भी कुछ असर न होता था। भरतपुर और डीग के किले उन्हीं किलों में से हैं। सन् १७७४ में सुमरू नामका योरोपियन साहब अवध के नवाबको छोडकर सूरजमल के यहां आ रहा। इसी सुमरू ने मीरकासिम के पास रहकर अँगरेजों को कत्तल किया था। सुमरू की मदद से सूरजमल ने अपना राज्य बहुत बढाया। सूरजमल के बाद उसका लडका रणजीतसिंह गद्दी पर बैठा। उसने चारों ओर अपने नामका अच्छा रोब बैठा दिया। सन् १८०३ में, जब कि मराठों के साथ दूसरा युद्ध हो रहा था, जनरल लेक ने अनेक राजाओंसे स्नेह कर लिया। उन स्नेहियों में भरतपुर का राजा भी था। उसने पाँच हजार जाट सेना सेंधिया से लडने के लिए लेक की मदद में भेजी थी। इस उपकार के बदले में लेक ने सन् १८०४ में भरतपुर के राजा को सेंधिया से स्वतंत्र कर दिया। तथापि उसी साल होलकर के साथ जो युद्ध शुरू हुआ उसमें भरतपूर का राजा होलकर में मिल गया। उस समय लेक ने भरतपूर और डीग के किलों को जा घेरा। डीग का किला लेग के हाथ में आगया; पर भरतपूर के किले पर उसका कोई वश न चला। बाद को

भरतपुर के राजा ने बीस लाख रुपये बतौर जुर्माने के देकर पहले की तरह अँगरेजों से सुलह कर ली।

(आ) भरतपूर की लडाई:—सन् १८२५ में भरतपूर का राजा मर गया। उसके बाद उसका सात वर्ष का लडका बलवतसिंह ब्रिटिश सरकार की सम्मति से गद्दी का मालिक हुआ। परन्तु उसके चचेरे भाई दुर्जनसाल ने बलवंतसिंह को कैद करके गद्दी छीन ली। उस प्रान्त का अँगरेजी एजंट सर डेविड ऑक्टरलोनी वृद्ध और अनुभवी राजनीतिज्ञ था। उसने समझा कि भरतपुर का दंगा जल्द सारे भारत में फैल जायगा; इस लिए अपनी काररवाई दिखाने के लिए उसने बलवन्तसिंह के पक्ष में भरतपुर पर फौज भेजी। परन्तु गवर्नर जनरल ने निश्चय किया कि भरतपुर के दंगे में हाथ डालने की हमें कोई जरूरत नहीं है। इसी कारण उसने उस फौज को लौटा मँगाने का हुक्म भेज दिया। ऑक्टरलोनी को यह अपमान सहन नहीं हुआ और उसने अपने काम से इस्तीफा दे दिया। उसी विषाद से दो मास बाद वह परलोक सिधारा। इधर गवर्नर जनरल ने जब देखा कि सचमुच दुर्जनसाल का गदर बढ़ते चला तब उसे अपनी भूल पर पश्चात्ताप हुआ, और उसने फिर भरतपुर पर फौज रवाना की। बहुत प्रयत्न किया गया; पर उस मिट्टी के किले की दीवाल नहीं टूटी। अन्त में जब बारूद की एक बडी सुरंग लगाई गई तब किले में एक दरार हुई। उसके द्वारा अँगरेज भीतर घुसे। उन्होंने दुर्जनसाल को कैद कर लिया और बलवंतसिंह को गद्दी पर बिठा कर राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया, (सन १८२६)। भरतपुर के युद्ध से चारों ओर अँगरेजों की छाप बैठ गई।

४. फुटकल:—इस शासनकाल में दूसरी महत्त्व की घटनाएं नहीं हुई। हिन्दुस्थान सरकार का दफ्तर गर्मियों में उसी समय से सिमला में रहने लगा। सन १८२८ में ऐम्हर्स्ट विलायत गया। उसकी जगह पर लार्ड विलियम बेंटिंक नियत हुआ। ऐम्हर्स्ट के जमाने, मदरास के लोकप्रिय गवर्नर सर टामस मनरो ने मदरास इलाके में मालगुजारी की रैयतवारी पद्धति जारी की। जमींदार लोगों से किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखकर, सब जमीन की माफ करने, रैयत के नाम पर जमीन लगाने और किसानों से स्वयं सरकार द्वारा लगान वसूल होने की पद्धति को रैयतवारी कहते हैं। इस पद्धति से यह स्थिर हुआ कि

पैदावार का एक तृतीयांश सरकार में लिया जाय । बम्बई इलाके में भी गवर्नर एल्फिन्स्टन ने मालगुजारी की पद्धति निश्चित की । इस इलाके में जमींदारी और रैयतवारी आदि अनेक पद्धतियों का मिश्रण है । पेशवाओं की मालगुजारी पद्धति अच्छी समझी जाती थी, वही अँगरेजी सरकार ने जारी रखी । और जिस जगह जो रीति जारी थी उसे वहीं कायम किया । एल्फिन्स्टन ने फौजदारी कायदों का एकीकरण किया और प्रजा के हित के अन्य अनेक काम किये । औट्रम ने भील लोगों की दशा सुधारने का प्रयत्न किया । इस लिए उसका नाम इतिहास में प्रसिद्ध है ।

पाठ नववाँ.

लॉर्ड विलियम बेंटिंक ।

सन् १८२८-१८३५ ।

१. लार्ड विलियम बेंटिंक ।　२. कर देनेवाले राजाओं का सम्बन्ध ।
३. राज्य जब्त करना ।　४. प्रजाहित के काम ।
(अ) कछार (आ) कुर्ग ।　५. सुधार और योग्यता ।
६. पार्लिमेन्ट का वादविवाद ।　७. सर चार्ल्स मेटकाफ ।

१. लार्ड विलियम बेंटिंक,—(सन् १८२८-१८३५):— सन् १८०६ में वेलोर का गदर होने के कारण विलियम बेंटिंक मदरास की गवर्नरी से उतार दिया गया था । पर ऐम्हर्स्ट के जाने पर गवर्नर जनरल की जगह में वही नियत किया गया । उस समय राज्यस्थापन का बहुत करके सब काम खतम हो गया था; तथापि राज्यप्रबन्ध में अनेक विवादपूर्ण प्रश्नों का फैसिला होना था । उनको बेंटिंक ने तै किया । इस शासनकाल में याद रखने लायक बातें ये हैं:—(१) कर देनेवाले राजाओं का सम्बन्ध; (२) राज्य जब्त करना; (३) प्रजाहित के काम और (४) राज्यप्रबन्ध में सुधार ।

२. कर देनेवाले राजाओं का सम्बन्धः— इस समय सब राजेरजवाडों की बडी चमत्कारिक दशा हो गई थी । अँगरेज सरकार ने धीरे धीरे सार्व-

माम पद प्राप्त कर लिया। इस बात का अनुमान पहले पहल उन्हें—उन्हें क्या; स्वयं ब्रिटिश सरकार को भी—न था। इस कारण उनके पारस्परिक बर्ताव में निश्चित पद्धति न देख पड़ती थी। हर एक राजा के दरबार में अँगरेजी रेजिडेन्ट नियत था। दरबार में सदा नाना प्रकार के विवादपूर्ण प्रश्न उठते। कहीं राजा का दुर्बर्ताव, कहीं गद्दी के विषय में झगडे, कहीं दीवान की तैनाती, कहीं बलवाइयों का बन्दोबस्त इत्यादि प्रश्न जब उपस्थित होते तब इस बात का फैसिला भी बडे अधिकारियों की मर्जीही पर अवलम्बित रहता था कि वास्तव में राज्य में अप्रबन्ध है या नहीं। जब अप्रबन्ध देख पडता तब उसमें अँगरेज हाथ डालते। परन्तु जब से अँगरेज सरकार यह जानने लगी कि ऐसी जगह में हात डालने का हमें हक है, तब से, जब तक राजा लोग यह बात न जान गये कि हम अँगरेजों के अधीन हैं, और उन्हीं की इच्छा के अनुसार हमें चलना चाहिए, तब तक जो अवधि व्यतीत हुई उसमें दोनों पक्षों के व्यवहार अत्यन्त चमत्कारिक रीति के हुए, और वे परस्पर में दुखदायी भी हुए। उनके कुछ उदाहरण नीचे दिये हैं:—

राजपूत रियासतें:—कैप्टन जेम्स् टॉड नामक साहब अँगरेजों की ओर से राजपुताने में रेजिडेन्ट था। वह राजपूतों का पक्षपाती था। उसने बडी सूक्ष्मता से खोज करके राजपूत रियासतों का विस्तृत इतिहास लिखा है। उस समय की दशा जानना सब के लिए बहुत जरूरी है। खून, मारपीट, चेटकविद्या, दैविक प्रयोगों पर विश्वास, द्वंद्वयुद्ध से झगडों का फैसिला करने की प्रणाली, परदेशपर चढाइयां, भीतरी झगडे, पिंडारी आदि लुटेरों की लूट लाट, कोल, भिल्ल आदि जंगली लोगों के घोर कृत्य, इत्यादि बातों के कारण राजपूत रियासतों का वृत्तांत प्राचीन इँगलैंड के इतिहास से बहुत मिलता है। टॉड बड़ा उदार और विशाल अन्तःकरण का पुरुष था। राजपूतों की शूरता, उदारता और सरदारी बाने के विषय में उसके मन में बहुत अभिमान था। उनकी वर्तमान निकृष्ट दशा देखकर उसे बहुत दया आई, और उस दशा को सुधारने का उसने प्रयत्न किया।

जोधपुर:—राजा मानसिंह और उमराव लोगों की न पटती थी। उमरावोंने अँगरेजों की मदद मांगी; पर उन्होंने नहीं दी। अन्त में दरबारी लोगों ने मानसिंह को पदच्युत कर दिया। मानसिंह को अँगरेजों ने मदद दी। मानसिंह

फिर गद्दी पर बैठा और शांति स्थापित हुई । उसी प्रकार उदयपुर, जयपुर आदि जगहों में भी अँगरेजों ने बन्दोबस्त किया ।

ग्वालियरः—१८२७ में दौलतराव सेंधिया का देहान्त होगया । उसकी रानी वायजाबाई दत्तक लेकर राजकाज करने लगी । इस सम्बन्ध में, आगे चलकर बहुत से झगडे हुए ।

इन्दौरः—दूसरा मल्हारराव होलकर सन् १८३३ में परलोक सिधारा । उसकी रानी ने एक लडका गोद में लेकर राजकारबार जारी रखा । परन्तु हरिराव होलकर नामक एक दूसरा पुरुष इस गद्दी पर अपना हक साबित करने लगा और झगडा शुरू हुआ । अँगरेजों ने फौज भेजकर हरिराव को गद्दी पर बैठाया, और रानी तथा उसके दत्तक को कारबार से निकाल दिया ।

बुन्देलखंड में भी अप्रबन्ध हो रहा था । उसका भी अंगरेजों ने इसी प्रकार से बन्दोबस्त किया ।

बडोदाः—सन् १८१९ में आनन्दराव गायकवाड के मरने पर उसका छोटा भाई सयाजीराव गद्दी पर बैठा । यह होशियार और पानीदार था । अपने हक कायम रखने का प्रयत्न करते हुए वह करीब बीस वर्ष तक अँगरेज सरकार के साथ झगडता रहा । वह सन् १८४७ में परलोक सिधारा । उसके बाद उसके लडके गणपतिराव ने और उसके बाद दूसरे लडके खंडेराव ने बडोदा का राज्य किया ।

भूपाल—भूपाल के नवाब के साथ सन् १८१८ में सुलह होगई थी । नवाब सन् १८२० में मर गया । उस समय उसके राज्य का प्रबन्ध उसकी स्त्री सिकन्दर बेगम को सौंपा गया । वास्तव में उसका भतीजा गद्दी का वारिस था, और काम करने की योग्यता भी रखता था; पर उसे राज्य नहीं दिया गया । यह झगडा बहुत बढ गया, और सन् १८३५ में नवाब के भतीजे ने अँगरेजों से मदद माँगी । अँगरेजों ने मदद देकर उसे गद्दी पर बैठाया । इसी नवाब की लडकी ने आगे चलकर अँगरेजी सरकार को बहुत मदद दी, और राजकार्य बडी दक्षता से किया ।

मैसूर, (सन् १८३०):—टीपू के राज्य का कुछ भाग कृष्णराज को दिया गया था । चूंकि कृष्णराज उस समय छोटा था; इस लिए सारा राजकार्य दीवान पूर्णैया करता था । पूर्णैया सरल स्वभाव, प्रतिष्ठित, उद्योगी और कार्य-

दक्ष था। उसने राज्य का प्रबन्ध बहुत अच्छा किया। बड़े होने पर कृष्ण राज ने सन् १८११ में राज्यप्रबन्ध अपने हात में लिया। बादको पूर्णैया का शीघ्रही देहान्त होगया। कृष्णराज दुराचारी निकला। उसके हाथ से राज्य का कारवार अच्छी तरह न हो सकता था। इस कारण यह ठहराया गया कि, उसे साढे तीन लाख रुपये सालाना और राज्य की पैदाइश का पाँचवाँ हिस्सा दिया जाय और सारा प्रबन्ध अँगरेज नौकरों के द्वारा, रेसिडेन्ट करे।

इसी प्रकार निजाम को भी अपने राज्य में सुधार करने की ताकीद दी गई। बेंटिंक ने पंजाब के रणजीतसिंह और सिंध के अमीर के साथ दोस्ती की सुलह कर ली।

२. राज्य जप्त करना:—

(अ) कछार, (सन् १८३०):—जब ब्रह्मा का युद्ध होरहा था, तब यह प्रान्त अँगरेजी सरकार के अधीन था। वहां का राजा गोविन्दचन्द सन् १८३० में मर गया। उस समय गद्दी का कोई वारिस न रहने के कारण यह प्रान्त अँगरेजों ने अपने राज्य में मिला लिया, (सन् १८३०)।

(आ) कुर्ग प्रान्त, (सन् १८३४):—मैसूर और मलबार के बीच में कुर्ग नामक एक पहाडी प्रान्त है। उसका कुछ भाग बहुत उपजाऊ है। वहां हाथी और जंगली जानवर बहुत हैं। लोग कड़े और मजबूत हैं। उनमें से ¼ चौथाई आर्य और बाकी अनार्य हैं। सोलहवें शतक में जब विजयनगर राज्य के विभाग हुए, तब एक साधु इक्करी शहर से निकल कर धर्मस्थापना करने के लिए कुर्ग प्रान्त में गया। वहां धर्म के नाम पर उसने एक नवीन राज्य स्थापन किया। वहां के राजाओं को 'वीरराज' का खिताब था। यह राजा दो सौ वर्षतक स्वतंत्र रहा। हैदरअली और टीपू ने उसे जीतने का प्रयत्न किया; पर कामयाबी नहीं हुई। जिस समय टीपू का राज्य अँगरेजों ने लिया, उस समय कुर्ग का वीरराज उसका स्नेही था। यह प्रतिवर्ष अँगरेजों को एक हाथी देता था।

सन् १८०९ में वीरराज के मरने पर, गद्दी के लिए झगडे शुरू हुए। लुंग-राज नामक उसका भाई गद्दी पर बैठा। सन् १८२० में उस के देहान्त होने पर उसका लड़का चिक्कराज गद्दी पर बैठा। चिक्कराज ने अपने सब नातेदारों को और अन्य अनेक लोगों को कतल कर डाला। सन् १८३४ में उसके क्रूर

कृत्यों का बन्दोबस्त करने के लिए अँगरेजों ने कुर्ग प्रान्त में फौज भेजी। तब राजा उनके अधीन होगया, और गवर्नर जनरल ने कुर्ग प्रान्त अँगरेजी राज्य में मिला लिया।

४. प्रजाहित के काम, (१) सती होने की रोकः—पति के मरने पर उसके शव के साथ पत्नी के जल मरने को सती होना कहते हैं। बेंटिंक ने इस प्रकार का कायदा जारी किया कि, हिंदुस्थान में यदि कोई भी स्त्री सती होगी, तो उसे खून समझ कर सब नातेदारों पर उसके लिए मुकद्दमें चलाये जायँगे। इस कायदे से बिना किसी शोर गुल के वह चाल धीरे धीरे बन्द होगई

(२) ठग लोगों का बन्दोबस्तः—जब हिन्दुस्थान अँगरेजों ने ले लिया तब रजवाडों में जो बडी बडी फौजे पहले रहती थी, उनकी जरूरत नहीं रही। लडाई और धुमधाम पर निर्वाह करनेवालों का धंधा डूब गया और देश में शांति हुई। इसका परिणाम शुरू शुरू में यह हुआ कि, उपर्युक्त प्रकार से जो लोग बेकार हुए, वे ठगी का धंधा करने लगे। जंगल से, अवघड घाटों से अथवा बिना बस्ती के प्रान्तों से जो मुसाफिर लोग जाते आते थे, उन्हें लूट कर वे लोग धन छीन लेते थे। जो मुसाफिर अच्छी तरह द्रव्य न देता, उसे गले में फाँसी लगाकर अथवा और किसी तरह वे मार डालते थे। ठग लोग अपनी टोलियां बाँध कर रहते थे। वे आपस में इस प्रकार की शपथें कर लेते कि, एक दूसरे के साथ सचाई का बर्ताव करेंगे, और प्राण जाने पर भी अपने गुप्त विचार बाहर न खोलेंगे। वे भवानी किंवा काली देवी के भक्त थे, और उसे वे मनुष्यों की बलि देते थे। वे समझते थे कि हमारे क्रूर कर्म देवी को अच्छे लगते है, सब में विलक्षण एकता रहती थी। कुछ गुप्त इशारों से वे अपने विचार एक दूसरे पर प्रगट करते। उसी प्रकार उनकी एक सांकेतिक भाषा भी ठहरी हुई थी। उनका यह धंधा कई शतकों से चला आया था। इस कारण मुसाफिरों में खूब कहर मचती थी। बेंटिंक ने ऐसे लोगों का बन्दोबस्त करने के लिए एक अलग महकमा खोला। करीब हजार लोगों को पकडकर मार डाला और जिन्हों ने अपराध कबूल करके पश्चात्ताप प्रगट किया उन्हें क्षमा देकर खेती बारी के उद्योग में लगा दिया।

(३) विद्यादानः—जब से भारत की सार्वभौमता अँगरेजों के हाथ में गई तबसे अँगरेज राजनीतिज्ञों के सामने दो बिकट प्रश्न बहुत दिनों से आगये

थे। अव्वल हिन्दुस्थान की प्रजा विद्या पढ़ाकर चतुर बनाई जाय? या नहीं—अर्थात् उसे विद्या पढ़ाकर उस पर राज्य करना सुलभ है, या अज्ञानी और अनारी रखकर राज्य करना सुलभ है? इस प्रश्न का विचार कई वर्ष तक होता रहा। अन्त में बेंटिंक ने प्रजा को शिक्षा देना स्थिर किया। उस समय विलायत का लोकमत बहुत बदल गया था, इस कारण यह प्रश्न शीघ्रही तै होगया।

दूसरा प्रश्न यह था कि, जो शिक्षा दीजाय वह पश्चिमी प्रणाली की हो या हिन्दुस्थान की पुरानी पद्धति के अनुसार हो? कई पश्चिमी विद्वानों ने संस्कृत भाषा का अच्छा अभ्यास किया था, उस भाषा के ज्ञान भांडार का उन्हें अच्छा परिचय होगया था, और उसके सम्बन्ध में उनकी बहुत पूज्यबुद्धि होगई थी। इन विद्वानों में होरेस विल्सन प्रमुख था। उसकी राय थी कि हिन्दुस्थान के लोगों को वही विद्या दी जाय, जो उनमें प्राचीन समय से चली आती है; उन्हें पश्चिमी शिक्षा देने की कोई आवश्यकता नहीं है। हिन्दुओं के प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ कुछ कम योग्यता के नहीं हैं, उनमें भी उदात्त विचार भरे हुए हैं। इसके विरुद्ध जो बड़ा पक्ष था, उसका कथन यह था कि हिन्दुस्थानियों को अँगरेजी भाषा और पाश्चात्य ज्ञान सिखाया जाय। इस पक्ष के मुखिया सर चार्ल्स ट्रिवेलिन, डॉक्टर डफ, हॉग्सन और मेकाले थे। वे कहते थे कि पश्चिम के वैज्ञानिक आविष्कार और नवीन विचार बड़े महत्त्वपूर्ण हैं, और उनका काम संस्कृत विद्या से नहीं निकल सकता। ट्रिवेलिन और मेकाले ने इस विषय पर जो लेख लिखे वे बड़े महत्व के हैं। अन्त में मेकाले के कथनानुसार फैसला हुआ, और भारत के निवासियों को अँगरेजी विद्या पढ़ाना निश्चित हुआ। पहले पहल यहाँ पादरी लोगों ने अनेक शालाएं खोलीं।

(४) भाफ के जहाज:—सन् १८३० में भाफ से चलने वाला एक अग्निबोट कलकत्ते में बना। यह उद्योग बढ़ते बढ़ते आज बहुत उन्नति कर चुका है। पूर्व समुद्र में अग्निबोट चलाने वाली पी. ॲन्ड ओ. नामक एक बड़ी कंपनी सन् १८३३ में स्थापित हुई। उसके अग्निबोट लाल सागर से हिन्दुस्थान को आने लगे; इस कारण केप आफ गुड होप के रास्ते की अपेक्षा इस रास्ते के लिए दो मास कम लगने लगे। स्वेज के भूडमरूमध्यतक रेलगाड़ी थी। सन् १८६९ में यह भूडमरूमध्य खोद कर नहर बनाई गई। तब से बम्बई का जहाज ठेठ विलायत तक जाता है।

(५) सरकारी कामों में देशी भाषाओं का उपयोगः—मुसल्मानों के जमाने से इन्साफ का काम फारसी में होता था, इससे लोगों को बहुत असुविधा होती थी। बेंटिंक ने यह निश्चय किया कि, प्रत्येक प्रान्त में सब सरकारी दफ्तर वहां की देशी (प्रान्तिक) भाषा में रखा जाय। इससे लोगों को बहुत सुभीता होगया। (६) हिन्दुस्थान के लोगों को महत्त्व की नोकरी न दी जाती थी; परन्तु बेंटिंक ने सब लोगों को, योग्यतानुसार, नोकरी देने का ठहराव किया।

(७) वैद्यशालाः—बेंटिंक ने सन् १८३५ में वैद्यक की एक नवीन पाठशाला कलकत्ते में खोली, और उसमें पाश्चात्य प्रणाली के अनुसार शस्त्रक्रिया और वैद्यकी की शिक्षा देने का निश्चय किया।

५. राज्य-प्रबन्ध के सुधारः—बेंटिंक ने (१) नोकरों की तनख़ाह की तादाद सदा के लिए बाँध दी, और फोजी नोकरों का भत्ता कम किया (२) अफीम बेचने के परवाने देने का कायदा बनाया और (३) आगरा और अवधप्रान्त की जांच करके लगान ठहराया।

बेंटिंक की योग्यताः—यह शासनकाल प्रजाहित की दृष्टि से बहुत महत्त्व का हुआ। कलकत्ते में इस गवर्नर जनरल की एक मूर्ति है, उसके नीचे मेकाले ने जो लेख लिखा उसका भावार्थ यह है:--

" लार्ड विलियम बेंटिंक ने सात वर्ष, चतुरता से, नेकी से, और उदारता से हिंदुस्थान का राजकाज किया। उसके स्मरणार्थ यह मूर्ति खडी की गई है। इतना उच्च पद प्राप्त होने पर भी उसने अपना सादा बाना और लीनता कभी नहीं छोडी। उसने पूर्वीय लोगों की इस कल्पना को दूर कर दिया कि राजा चाहे जैसा मनमाना बर्ताव कर सकता है, और उसकी जगह उसने पश्चिमी स्वतंत्रता की योग्यता लोगों को दिखा दी। वह इस तत्त्व को कभी नहीं भूला कि लोगों का कल्याण करनाही राज्य करने का उद्देश है। उसमें दुष्ट चालें बन्द कर दीं, निन्दनीय भेदाभेद मिटा दिये, और उसने लोगों की बुद्धि तथा नीति बढाने में अपनी सत्ता का उपयोग किया।"

६. पार्लिमेन्ट का वादविवादः—कम्पनी के सनद की मियाद बढने का वर्ष सन् १८३३ था। इस लिए यह प्रश्न खडा हुआ कि, अब आगे के लिए नवीन सनद दी जाय या नहीं ! उस समय अनियंत्रित व्यापार और ठेके के व्यापार के तत्त्वों का प्रतिपादन करनेवाले दो पक्षों में बहुत बडा वादविवाद हुआ। बहुत से

विद्वानों की राय हुई कि व्यापार के लिए कोई भी प्रबन्ध न होना चाहिए। व्यापार करने के लिए सब को स्वतन्त्रता रहनी चाहिए । वैसे ही इस आशय के भी कई भाषण हुए कि, कम्पनी के द्वारा हिंदुस्थान का कारवार ठीक तौरे पर नहीं चलता, और कम्पनी के टूटने ही पर हिंदुस्थान का कल्याण होगा । अन्त में कम्पनी की ओर बहुमत रहा और निम्न लिखित शर्तों पर कम्पनी के सनद की मियाद और बीस वर्ष के लिए बडाई गई । (१) चीन देश का व्यापार सब के लिए खोल दिया गया । (२) कम्पनी की जलसेना तोड दी गई । 'संयुक्तप्रांत' नवीन इलाका बनाया गया, और सब इलाकों के कारबार में गवर्नर जनरल को अधिक अधिकार दिये गये । गवर्नरों की कौन्सिलें तोड दी गई, और कायदा बनाने के उनके जो अधिकार थे व निकाल कर गवर्नर जनरल को दिये गये ।

७. सर चार्ल्स मेटकाफ, (सन् १८३५–३६):—वायव्य प्रान्त के लें० गवर्नर सर चार्ल्स मेटकाफ को काम सौंप कर बेंटिंक सन् १८३५ में विलायत चला गया । मेटकाफ गवर्नर जनरल के काम के लायक था । पर पार्लमेन्ट ने समझा कि उस कामपर कम्पनी का नौकर नियत करने से हमारा अधिकार कम होता है; इस लिए उसने मेटकाफ को गवर्नर जनरल न बनाकर सन् १८३६ में लार्ड ऑक्लेंड को गवर्नर जनरल नियत किया ।

मेटकाफ का एक सत्कर्म ध्यान में रखने लायक है । छापाखाने खोल कर चाहे जो विषय छापने की स्वतंत्रता उसने लोगो को दी । हिन्दुस्थानकी प्रजाको जो कितनी ही अमूल्य बातें अँगरेजी सरकार ने दी हैं, उनमें से यह भी एक है । यह बात विलायत में पसन्द नहीं पडी । कोर्ट आफ डायरेक्टर्स को इतना क्रोध आया कि, उसने मेटकाफ साहब का अपमान किया । इसी कारण ऑक्लेंड के आने पर वह अपने काम से इस्तीफा देकर चला गया ।

पाठ दसवाँ।

ऑक्लंड और एलनबरो।

सन् १८३६-१८४४।

१. वायव्य सरहद् का प्रस्ताव। २. झगडे की जड।
३. पहला अफगान युद्ध। ४. अफगानिस्तान के झगडे का अंत।
५. सिन्ध के अमीर। ६. सेंधिया से युद्ध।

१. वायव्य सरहद् का प्रस्तावः—वायव्य ओर की सरहद् को छोड कर बाकी बन्दोबस्त होगया था। यह एक गरम खबर थी कि, वायव्य की ओर से अफगानिस्तान और ईरान के प्रबल राज्यों से दोस्ती करके रूस का बादशाह हिन्दुस्थान पर चढाई करने वाला है। पहले फ्रेंचों का डर था, वह नेपोलियन का पराभव होने पर मिट गया। तथापि, इधर रूस की सत्ता मध्य एशिया में बढ आई थी; इस लिए गवर्नर जनरल उसका बन्दोबस्त करने में लगा। इस बातका सम्बन्ध अफगानिस्तान से है। उस देश के राज्यशासन में दो वंशों की प्रबलता है, एक बरकजै और दुसरा दुर्रानी। अहमदशाह दुर्रानी वंश का था और उसके वजीर बरकजे वंशके थे। वर्तमान अमीर बरकजे वंश का है।

अहमदशाह दुर्रानी सन् १७७३ में मर गया। उसके लडके तैमूरशाह ने सन् १७९३ तक राज्य किया। तैमूरशाह के मरने पर उसका लडका जमानशाह गद्दी पर बैठा। जमानशाह और उसके वजीर फतेहखां बरकजे में बिगाड होगया, और जमानशाह को फतेहखां ने कैद करके उसकी आखें निकाल लीं। जमानशाह लोधियाना में अँगरेजों के आश्रय में भग आया। कुछ दिन बाद उसका भाई शाहसुजा भी पराजित होकर अँगरेजों के आश्रय में आ रहा। फतेहखां होशियार और बहादुर था। उसने अफगानिस्तान की अच्छी तरक्की की। कुछ दिनों बाद फिर झगडे शुरू हुए और फतेहखां मारा गया। उसके भाई दोस्त मुहम्मद को काबुल का राज्य मिला। तथापि अफगानिस्तान में बडी गडबड मची हुई थी। उस देश पर ईरान के शाह और रूस के जार की दृष्टि थी। इधर शाहसुजा को आगे कर के रणजीतसिंह और अँगरेज काबुल के झगडे में

घुसना चाहते थे। हीरात पश्चिम ओर का मुख्य नाका था; इस लिए उस पर चढाई करने के लिए रूस का जार ईरान के शाह को उभाड रहा था। और इधर अँगरेजों का निश्चय था कि हीरात अफगानिस्तान के राजा के हाथ से न जाने देना चाहिए। इस प्रकार होते करते सन् १८३७ में ईरान के शाह नें हिरात के किले को घेरही लिया। यह घेरा बडे महत्त्व का है। वह एक वर्ष तक पडा था। ईरान के शाह ने वह किला ले लिया होता; पर अफगान लोगों की ओर से पॉटिंजर नामक एक अँगरेज नौकर ने विशेष पराक्रम दिखाया, और इसी कारण शाह उसे नहीं ले सका। बाद को ईरानी लोगों को जब यह जान पडा कि अँगरेज ईरान पर हम्ला करने वाले हैं, तब वे किले का घेरा छोड कर स्वदेश को लौट गये।

२. झगडे की जडः—पेशावर प्रांत रणजीतसिंह के अधिकार में था। उसे लौटा लेने के लिए दोस्त मुहम्मद ने रूस और अँगरेजों से बात चीत शुरू की। अँगरेज लोग रणजीतसिंह के साथ झगडा करने के लिए तैयार न थे। अँगरेजों ने कप्तान अलेक्जंडर बर्न्स को वकील मुकर्रर कर के दोस्त मुहम्मद के पास भेजा। तब पेशावर प्रान्त के विषय में चर्चा चली, और दोस्त मुहम्मद कहने लगा कि वह प्रान्त जो कोई हमें प्राप्त करा देगा, उसी में हम जा मिलेंगे। अन्त में रूस ने उसका कहना मान लिया, और दोस्त मुहम्मद खुल्लमखुल्ला रूस के पक्ष में मिल गया।

इस प्रकार अफगानिस्तान, ईरान और रूस एक हो गये। जब दोस्त मुहम्मद से सलाह होने की कोई आशा न रही, तब अँगरेजों को जान पडा कि अब रूस भारतपर अवश्य चढाई करेगा। ऐसी दशा में अँगरेजों के लिए दोही उपाय थे। अव्वल तो दोस्त मुहम्मद को पदच्युत करके उसकी जगह शाह-शुजा को गद्दी पर बैठालना; और दूसरा इस झगडे में बिलकुल न पडकर, सिंधु नदी को अपनी हद्द समझ कर चुप बैठना। इनमें से गवर्नर जनरल ने पहले उपाय का स्वीकार किया।

तीनों की सुलह, (जून सन् १८३८):—शाहशुजा को काबुल की गद्दी पर बैठाने के उद्देश से, शाहशुजा, रणजीतसिंह और अँगरेजों की तरफ से वकील मैक्नाटन में सुलह ठहरी। उसकी शर्तेः–(१) पेशावर का

और सिन्धु नदी का सब मुल्क शाहशुजा रणजीतसिंह को दे, और सिन्धु प्रान्त के लिए नियत कर लेकर उस प्रान्त का हक छोड दे; (२) शाहशुजा को अँगरेज और रणजीतसिंह काबुल लेजा कर गद्दी पर बैठावे और वह सिक्खों तथा अँगरेजों के मुल्क पर परकीयों के हल्ले न होने दे।

विलायत में बेंटिंक, वेलिंग्टन, वेल्स्ली, एल्फिन्स्टन आदि बडे बडे अनुभवी राजनीतिज्ञ ऑक्लंड के इस काम के विरुद्ध थे।

३. पहला अफगान–युद्ध, (सन् १८३९–४२):—फीरोजपूर की सेना सर विलोबी कॉटन के अधिकार में अफगानिस्तान के लिए रवाना हुई। रणजीतसिंह और ऑक्लंड सन्मानपूर्वक मिले। सिंध के अमीरों से झगडा होकर अन्त में बम्बई की फौज उनके मुल्क से गई। बम्बई और बंगाल की फौज एक जगह मिलने पर सर जॉन कीन उनका अधिपति हुआ। रणजीतसिंह यह फौज पंजाब की ओर से न जाने देता था; इस लिये खोजाक और बोलन की घाटियों से वह जाने लगी। क्वेटा में सब फौजें जमा हुई। उन्होंने ८ मई सन १८३९ को कंधार में शहासुजा को ले जाकर गद्दी पर बैठा दिया। जनरल नॉट को कंधार में रख कर फौज गजनी के लिए रवाने हुई। २० जुलाई को उन्होंने गजनी किला ले लिया। तब दोस्त मुहम्मद ने यह बात चलाई कि यदि शहाशुजा की वजीरी हमें दी जाय तो हम राज्य उसे सौंप दें। परन्तु वकील मेकूनॉटन ने यह बात स्वीकार नहीं की। इस लिए दोस्त मुहम्मद बुखारे की तरफ भाग गया। १७ अगस्त को ब्रिटिश फौज शाहशुजा को लेकर काबुल में पैठी, और तेतीस वर्ष वनवास भोगकर शाहशुजा फिर एक बार राज्य-पद आरूढ हुआ, इससे उन लोगों को बडा समाधान हुआ, जिन्होंने यह काम हाथ में लिया था। बम्बई की फौज लौट पडी। मार्ग में उसने किलात शहर ले लिया। इतने ही में रणजीतसिंह का देहान्त हो गया, और नए बखेडे पैदा हुए।

शाहशुजा के गद्दी पर बैठने के बाद अँगरेजी फौज ने कुछ दिन तक वहीं रहने का निश्चय किया। अँगरेज लोग अपने लडके बच्चे वहां ले गये और वे सब वहां की ठंढी हवा में आनन्दपूर्वक रहने लगे। करीब तीन वर्ष तक काबुल में उनका मुकाम था। बालाहिसार नामक एक ऊंचा पहाड काबुल में है। उस पर एक किले में राजमहल था। उसी में अँगरेजी फौज का डेरा था। शाहशुजा ने वह किला अपने वास्ते माँगा। मेकूनॉटन ने किला खाली कर दिया,

और स्वयं शहर के बाहर डेरा डाल कर रहने लगा। अँगरेजों के सब लोग एक साथ न रहे थे। यह बड़ी भारी भूल हुई कि जो बालाहिसार उनके हाथ से निकल गया। चारों ओर दंगे मचे हुए थे। किलात के अधिकारी मेहराबखां के मरने पर वह जगह उसके लड़के ने अँगरेजों से ले ली। बाद को दोस्त मुहम्मद अँगरेजों के शरण में आया। उसे और उसके कुटुम्ब के लिए अँगरेजों ने पेंशन नियत करके हिन्दुस्थान में रखा। तथापि अफगान लोग भीतर भीतर अँगरेजों से अत्यन्त द्वेष रखते थे। सन् १८४१ में सेनापति कॉटन विलायत चला गया, और उसकी जगह पर एल्फिन्स्टन नामक एक वृद्ध साहब नियत हुआ। कोई न कोई भयंकर घटना होने का चिन्ह देख पड़ने लगा। इधर डायरेक्टर्स खर्च कम करने के लिये टोंच रहे थे, इस कारण कुछ फौज लौट आई। मार्ग में उसे खिलजी लोगो ने बहुत हैरान किया। इस लिए खिलजी लोगों का बन्दोबस्त करने का एक नवीन काम आ पड़ा।

ता० १ नवम्बर सन १८४१ को अफगान लोगों ने अँगरेजी वकील बर्न्स का खून किया, और काबुल में बलवा खड़ा किया। दोस्तमुहम्मद का लड़का अकबरखां बागियों का सर्दार था। वह अँगरेजों को बहुत सताने लगा। रास्तों की नाकेबन्दी करके बलवाई लोग अँगरेजों को चारा दाना नहीं मिलने देते थे। इधर रास्ते बर्फ से आच्छादित होने के कारण कंधार और जलालाबाद की ओर से फौज की मदद आने में अड़चण थी। अन्त में अफगानिस्तान छोड़कर अँगरेजों ने लौट जाने का विचार निश्चित किया। उन्होंने अकबरखां से यह सुलह ठहराई कि, हमें कुशल से लौट जाने दो; पर जब मेकनॉटन अकबरखां से मिलने गया तब उसने उसे गोली से मार डाला। अन्त में सारा खजाना और तोपें शत्रुओं को सौंप कर ६ जनवरी सन् १८४२ को सब अँगरेजी फौज लौट पड़ी। परन्तु अकबरखां अपने सब लोगों के सहित अँगरेजी फौज को सताने लगा। इस दुःख से बचने के लिए कुछ पुरुष और स्त्रियां आदि जमानत के तौर पर अकबरखां के अधीन हो गये, और बाकी लोग लौट चले। जब कि फौज घाटियों से गुजर रही थी, लोग उस पर बन्दूकें चलाते थे, और पत्थरों की वर्षा करते थे। सकरी गली में भीड़ होने पर हजारों लोगों को बकरों की तरह काट डालते थे। इधर हवा खूब ठंडी थी और अन्नपानी का भी अभाव था। इस प्रकार की अड़चनों से काबुल से चले हुए पन्द्रह हजार

लोगों में से, सिर्फ डॉ० ब्रायडन नामक एक साहब बच कर लौट आया। वह भी मरणोन्मुख था, और तीन अठवाडों में जलालाबाद तक जीता पहुंचा था। पीछे से अकबरखां भी जलालाबाद पर चढ आया । परन्तु उस मुकाम की रक्षा जनरल सेल ने अच्छी तरह से की । सिक्ख फौज भी पेशावर में बलवा करके उमडी। सिर्फ जनरल नाट ने कंधार नहीं छोडा। इस प्रकार अफगानिस्तान में अँगरेजों का कुछ भी जोर नहीं रहा।

इस अरिष्ट से ऑक्लैंड का धैर्य छूट गया । विलायत में उसकी बहुत बेकदरी हुई। उसकी जगह पर लार्ड एलनबरो नियत होकर फरवरी मास में यहां आगया। ऑक्लैंड का एक काम ध्यान में रखने लायक है। हिन्दुओं के उत्सवों मे अँगरेजों के जाने की चाल शुरू से थी । परन्तु ऑक्लैंड के जमाने में यह ठहरा कि हिन्दुओं के मन्दिरों तथा उत्सवों से अँगरेज किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखें।

४. अफगानिस्तान के झगडे का अन्तः--जो लोग काबुल में जमानत के तौर पर कैद थे, उन्हें छुडा लाने के लिए जलालाबाद से जनरल पॉलक की रवानगी की गई । जलालाबाद और कंधार की अँगरेजी फौजें शत्रु से अपना अपना बचाव दृढतापूर्वक कर रही थीं । पॉलक के आ मिलने पर स्त्रीबच्चे छुडा लाने के लिए दोनों सेनाओं ने काबुल पर चढाई की। पॉलक ने मार्ग में तेजीन नामक मुकाम में अकबरखां को पराजित किया । नॉट ने भी गजनी का शहरपनाह फोड दिया और महमूद सोमनाथसे जो दरवाजे ले गया था उन्हें लेकर वह आगे बढा। १७ सितम्बर को दोनों फौजें काबुल में आ मिलीं। इसके पहले ही उस अभागी शाहसुजा का खून हो चुका था, जिसके कारण इतना रक्तपात और द्रव्यव्यय हुआ। अकबरखां ने कैदी अँगरेजों की अच्छी खबरदारी रखी थी । जनरल सेल की स्त्री ने इस कारागृहवास का चित्ताकर्षक वृत्तान्त लिख रखा है । सिर्फ जनरल एल्फिन्स्टन का देहान्त हो गया था। स्त्री बच्चे जब अँगरेजी फौज में आ मिले, तब अवर्णनीय आनन्द हुआ। शाहशुजा की स्त्री को साथ लेकर सब फौज लौट पडी, और भारत तक सुरक्षित आ पहुंची। अकबरखां अफगान का बादशाह हुआ। वह सन् १८४६ में मरा। उसके बाद उसका पराक्रमी भतीजा अब्दुर्रहिमान बहुत समय तक अफगानिस्तान की गद्दी पर था। वह सन् १९०१ में परलोक सिधारा।

५. सिन्ध के अमीरः—इन अमीरों की मूल जाति बलूची है। उन्होंने सन् १७८६ में सिंध प्रान्त अफगानों से जीता और वहां सबों ने मिलकर एक राज्य स्थापित किया। सन् १८३१ तक अँगरेजों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं आया। इस साल जब कि कप्तान बर्न्स रणजीतसिंह के पास जा रहा था तब उसने व्यापार के विषय में अमीरों से सुलह की, (सन् १८३२)। इस सुलह में एक शर्त यह थी कि, उनके प्रान्त से फौज अथवा युद्धसामग्री न जाय। बाद को सन् १८३९ में जब बम्बई की फौज अफगानिस्तान को जाने लगी तब गवर्नर जनरल ने अमीरों से निवेदन किया कि, उसे मत रोकना। ये अमीर अफगानिस्तान के शाह को कर दिया करते थे। वह कर शाहशुजा की तरफ से अँगरेजों ने मांगा। सन् १८३३ में जब शाहशुजा आफत में फँसा था तब अमीरों से तीन लाख रुपये लेकर उसने उनका कर सदा के लिए माफ कर लिया था। तथापि सन् १८३७ में शाहशुजा के साथ जो सुलह ठहरी, उसके अनुसार अँगरेज वह कर फिर वसूल करने लगे। सन् १८३९ में अँगरेजों ने अमीरों के यहां अपनी सहायक सेना रख दी, और उनका भक्खर नामक मजबूत किल्ला और कराची शहर अपने अधिकार में कर लिया। अफगानिस्तान में जब गड़बड़ मची हुई थी तब अमीर बिलकुल शांत थे। मेजर औट्रम सिंध प्रान्त में अँगरेजों की ओर से रेसिडेन्ट मुकर्रर था। उसने कुछ अमीरों के विषय में सरकार से शिकायत की। एलनबरो ने उस पर विश्वास न करके, सर चार्ल्स नेपियर को दीवानी और फौजदारी अधिकार दे कर जाँच के लिए भेजा। सहायक सेना के खर्च के लिए तीन लाख रुपये अमीरों की तरफ बाकी थे। उसके बदले में नेपियर ने अमीरों से कुछ मुल्क अलग कर देने के लिए कहा। इस के सिवाय, उसने इस प्रकार की और कई शर्तें कीं कि, अमीर स्वतंत्र सिक्का न चलावें और अँगरेजी जहाजों को ईंधन की पूर्ति करें। ये बातें अमीरों को अच्छी नहीं लगीं।

युद्ध, (सन् १८४३):—हैदराबाद में औट्रम ने अमीरों से बातचीत चलाई थी। इतने ही में उस पर अमीरों के बलूची लोगों ने हल्ला किया। तब वह अग्निबोटद्वारा भाग कर नेपियर से आ मिला। १७ फरवरी को मियानी में घनघोर युद्ध हुआ, और अमीरों का पराजय हुआ। नेपियर ने हैदराबाद पर दखल करके

खजाना लूट लिया । २९ मार्च को हैदराबाद में अमीरों का फिर पराभव हुआ और सिंध प्रान्त अँगरेजों ने उनसे छीन कर अपने राज्य में मिला लिया ।

६. सेंधिया से युद्ध, (सन् १८४३):—दौलतराव सेंधिया सन् १८२७ में मर गया । उसके पीछे कुछ दिन उसकी स्त्री बायजाबाई और बाद को उसके दत्तक लडके जनकोजी ने राज्य किया । जनकोजी सन् १८४३ में मर गया । उसके भी लडका न था; इस लिए उसकी स्त्रीने भागीरथराव नामक अपने पास का एक नौ वर्ष का लडका गोद लिया, और उसका नाम जयाजी-राव रखा । वह स्त्री कम उम्र थी; इस कारण राज्य में अप्रबन्ध हो गया । इस लिए उसका बन्दोबस्त करने के लिए गवर्नर जनरल स्वयं फौज लेकर सेंधिया के राज्य में पैठा । सेंधिया की फौज ने उसका सामना किया । सन् १८४३ में महाराजपूर नामक स्थान में दोनों दलों में लडाई हुई, और अँगरेज जीत गये । उसी दिन पन्यार में दूसरी लडाई हुई । उसमें भी सेंधिया की फौज पराजित हुई । सेंधिया के ५००० और अँगरेजों के १००० लोग खेत रहे । बादको जयाजीराव, महारानी और गवर्नर जनरल मिले । नवीन सुलह हुई; अँगरेजों ने लढाई का खर्च लिया; सेंधिया की फौज कम करके सिर्फ ८ हजार लोग और ३२ तोपें रखी गइ । उसी समय गवर्नर जनरल ने सहायक सेना (कन्टिजंट फौज) बडाकर उसके खर्च के लिए राज्य का कुछ भाग अलग कर लिया । महारानी के लिए ३ लाख रुपये सालाना पेंशन नियत की गयी । जयाजीराव सेंधिया, आगे चलकर, बहुत प्रसिद्ध हुआ ।

एलन्बरो ने अँगरेजी फौज को एक क्षणभर भी फुरसत नहीं दी । विलायत के अधिकारियों ने समझा कि यह अवश्य राज्य के लिए नवीन संकट पैदा करेगा । इस कारण उन्होंने उसे बुला लिया । उसके जमाने में (१) गुलामों का व्यापार बन्द करने (२) पुलिस विभाग सुधारने और (३) लूट बन्द करने के कायदे बनाये गये । अगस्त सन् १८४४ में एलनबरो विलायत लौट गया ।

पाठ ग्यारहवाँ।

सिक्ख और ब्रह्मी युद्ध।

सन् १८४४-१८५२।

१. सिक्खों का वृत्तान्त। २. पहला सिक्ख युद्ध।
३. दूसरा सिक्ख युद्ध। ४. दूसरा ब्रह्मी युद्ध।

१. सिक्खों का वृत्तान्त:—एलनबरो के बाद सर हेनरी हार्डिंग गवर्नर जनरल मुकर्रर हुआ।

रणजीतसिंह सन् १८३९ में परलोक सिधारा, वहां तक सिक्खों का वृत्तान्त पीछे आचुका है। चालीस वर्ष तक कठिन और सतत परिश्रम करके उस पराक्रमी पुरुष ने सिक्खों के राष्ट्र की अच्छी उन्नति कर दी, उसके पीछे राज-काज चलाने के लिए उसके योग्य पुत्र न था। लाहोर में सरदार, प्रधान और रानियों की आपस मे स्पर्धा होने के कारण झगडे उपस्थित हुए, इस लिए राज्य में अप्रबन्ध होगया। 'खालसा' अर्थात् 'सिक्ख धर्मपंचायत' की 'खालसा फौज' प्रबल थी। काबुल मे ब्रिटिश सेना पर जब आफत आई तब से अँगरेजों से सामना करने का सिक्खों का हौसला बढ़ गया। लोगों द्वारा चुनी हुई पांच पांच लोगों की कमेटियां, अर्थात् पंचायतें थीं। उनकी मार्फत फौज का अधिकार चलने लगा। बाद को जब सिक्ख लोगों ने अँगरेजों के मुल्क पर चढाई की तब लडाई का कारण उपस्थित हुआ।

२. पहला सिक्ख युद्ध, (सन् १८४५-४६):—गवर्नर जनरल और सेनापति सर ह्यू गो को यह अनुमान न था कि, सिक्ख फौज एकाएक हमारे मुल्क पर धावा करेगी। १८ दिसम्बर सन् १८४५ को मुडकी में दोनों फौजों का सामना हुआ। उस लडाई में जय-पराजय का कुछ फैसला नहीं हुआ। उसमें सर रॉबर्ट सेल काम आया। दो दिन बाद फीरोजपुर में फिर लडाई हुई। इस लडाई में अँगरेजों की बड़ी दुर्दशा हुई। दूसरे दिन अँगरेजों ने सिक्खों की छावनी ले ली। २९ जनवरी १८४६ को आलीवाल में अँगरेजों ने सिक्खों की छावनी पर हल्ला किया। उस समय बड़ी लडाई हुई, और सिक्ख लोग हार कर सतलज पार भग गये।

१० फरवरी को सोबराउन में एक और बडी लडाई हुई । वह सिर्फ दोही घंटे हुई । पर इतनी ही अवधि में सिक्ख फौज का संहार होगया । पास वाली नदी रक्त से भर गई । उनकी तोपें अँगरेजों को मिलीं । अँगरेजों के भी तीन हजार आदमी खेत रहे । पीछा करते हुए अँगरेज लाहौर पर चढ धाये । वहां रणजीतसिंह के लडके दुलीपसिंह, प्रधान गुलाबसिंह और गवर्नर जनरल की मुलाकात हुई और इस प्रकार सुलह ठहरीः—

लाहौर का सुलह, (सन् १८४६)ः—(१) सतलज नदीके पूर्व ओर का सब मुलूख और जालंधर दुआब अँगरेज लेलें; (२) लडाईके खर्च में डेढ करोड रुपये लिये जायँ; (३) सिक्ख फौज २० हजार से अधिक न रहे । मेजर हेनरी लॉरेन्स लाहौर का रेजिडेन्ट मुकर्रर हुआ ।

परिणामः—रणजीतसिंह ने काश्मीर का कारबार गुलाबसिंह को दिया था । उससे कुछ रकम लेकर वह प्रान्त अँगरेजों ने उसी के पास रहने दिया । सन् १८५७ में गुलाबसिंह के मरने पर उसका लडका रणवीरसिंह गद्दी पर बैठा । रणवीरसिंह का पुत्र महाराजा प्रतापसिंह आज कल काश्मीर की गद्दी पर है । दुलीपसिंह को पंजाब का राज्य देकर निश्चित किया गया कि, उसकी मा और लालसिंह, रेजिडेन्ट सर हेनरी लॉरेन्स की सलाह से, राजकाज करें । बाद को शीघ्रही लालसिंह ने गुलाबसिंह के विरुद्ध गदर मचाया; इस लिए अँगरेजों ने उसे पकड कर बनारस में रख दिया, और पेंशन मुकर्रर कर दी । उसके बाद मुख्य आठ सरदारों की कौन्सिल बनी, और निश्चय हुआ कि, उन्ही की सलाह से राजकाज हो ।

हार्डिंग के जमाने में दूसरी कोई महत्त्व की घटना नहीं हुई । उसने कुछ महकमों का खर्च कम किया और फौजी विभाग का सुधार किया । रविवार को सब ऑफिसों को छुट्टी देना उसीने ठहराया । यह शूर सिपाही और चतुर राजनीतिज्ञ मार्च महीने में, लॉर्ड डलहौसी को अपना काम सौंप कर, विलायत लौट गया ।

३. दूसरा सिक्ख युद्ध, (सन् १८४८–४९), कारणः—मुलतान प्रान्त पंजाब का भाग था । सन् १८४४ में वहां के सूबेदार सावनमल के मरने पर उसका लडका मूलराज कारबार देखने लगा । इस काम में उसे लाहौर के दरबार को नजराना देना था; पर उसने नहीं दिया । मूलराज बडा पराक्रमी था ।

और उसका निजी व्यापार बहुत बड़ा था। वह एक स्वतंत्र राजाही के तौर पर था। सिक्खों का पहिला युद्ध समाप्त होने पर लॉरेन्स कारबार देखता था। उसने मूलराज से रुपये माँगकर हिसाब माँगा। मूलराज स्वयं लाहौर गया और यह समझ कर उसने इस्तीफा दे दिया कि, उपर्युक्त मांगे कबूल करने से हमारी मानहानि होगी। इस लिए लाहौर दरबार ने खानसिंह नामक एक व्यक्ति को मुलतान की सूबेदारी पर नियत किया। और उसे वेन्स ऐग्न्यू और लेफ्टिनेंट अंडरसन के साथ मुलतान को भेजा। दूसरे दिन मूलराज ने किला उन्हें सौंप दिया। उस पर अधिकार जमा कर जब कि वे लौटे आ रहे थे तब किले के लोगों ने बलवा करके उक्त दोनों यूरोपियनों को मार डाला। इधर मूलराज ने निवेदन किया कि, अब लोग हमारे कब्जे में नहीं है, और उनके कृत्यों के लिए हम जवाबदार नहीं हैं। इसी समय यदि बन्दोबस्त किया जाता तो बलवा शान्त हो जाता; पर सख्त गरमी होने के कारण सेनापति सर ह्यू गो ने मुलतान पर फौज नहीं भेजी। इतने ही में महारानी बागियों में शामिल होगई। चूंकि चारों ओर यह बात फैल गई थी कि, अँगरेज लोग पंजाब लेनेवाले हैं, इस लिए सारे पंजाब में अँगरेजों के विरुद्ध प्रयत्न होने लगे।

प्रारब्धः—पहले पहल अँगरेजों ने महारानी को पकड़कर काशी में ला रखा। दिसम्बर में बम्बई की फौज आतेही मुलतान का किला अँगरेजों ने ले लिया, (जनवरी सन १८४९)। उस समय मूलराज अँगरेजों के हाथ में आया; पर वह फिर शीघ्रही मर गया।

गुजरात की लढाई, (२७ फरवरी १८४९):—फिर शीघ्रही सब सिक्ख सरदार एक जगह जमा हुए । अफगान लोगों ने भी उनको मदद भेजी । इधर अँगरेजों ने भी भारी तैयारी की थी । तोपों की मार से सिक्ख लोग पराभूत होकर भग गये । शेरसिंह शत्रु के अधीन हुआ और युद्ध खतम हुआ ।

परिणाम-पंजाब प्रान्त अँगरेजी राज्य में मिलाया गया:—बहुत चर्चा होने पर अन्त में गवर्नर जनरल ने जाहिर कर दिया कि, पंजाब प्रान्त ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया । दलीपसिंह को पाँच लाख सालाना की पेंशन मुकर्रर हुई । बाद को उसने क्रिश्चियन धर्म का अंगीकार किया, और जमीन ले कर विलायत में रहने लगा । अँगरेजों ने सब सिक्ख फौज को छुटी देकर सिक्ख लोगों के हथियार छीन लिये । कोहनूर हीरा दलीपसिंह ने विक्टोरिया महाराणी को भेट दिया । इस प्रकार इँगलैंड और वेल्स दोनों से डेढ गुना बडा भारी नवीन राज्य डलहौसी ने जीत लिया, और वहां उसने फौजी तथा दीवानी अंमल जारी किया ।

४. दूसरा ब्रह्मी युद्ध, (सन् १८५२):—पहले ब्रह्मी युद्ध के ठहराव के अनुसार अँगरेजी रेजिडेंट ब्रह्मा के दरबार में रहने लगा । पर उस दरबार में उसके विषय में प्रेमभाव न था । सन् १८३७ में ब्रह्मा में राज्यक्रान्ति हुई, और थरवादी नामक राजा गद्दी पर बैठा । वह साहसी था और अँगरेजों से द्वेष करता था । रेजिडेन्ट कर्नल बर्न को वहां रहना अच्छा न लगा और वह लौट आया । इसके बाद जो पुरुष वहां भेजा जाता वही किसी न किसी बहाने से लौट आता । सन् १८४१ में थरवादी ने रेजिडेन्ट बिलकुल ही निकाल डाला । अफगानिस्तान के झगडों के कारण यह अपमान ब्रिटिश सरकार को सहना पडा । बाद को थरवादी का शासन लोगों को पसन्द नहीं आया, और सन् १८४५ में गदर कर के लोगों ने उसे मार डाला । उसके बाद उसका लडका गद्दी पर बैठा । उसके शासनकाल में शेपर्ड नामक एक अँगरेजी व्यापारी के हाथ से एक ब्रह्मी खलासी का खून हो गया । यह बात रंगून के अधिकारी को मालूम हुई । उस मामले की जाँच होने पर शेपर्ड को ९९९ रुपये जुरमाना किया गया । इसी प्रकार और भी कई मामले हुए । अँगरेज व्यापारियों ने गवर्नर जनरल के यहां न्याय मिलने के लिये बिनती की । डलहौसी ने रंगून के अधिकारियों से नुकसान भर मांगा, और दो युद्ध के अभिवोट साथ में देकर

कमोडोर लाबर्ट को उधर भेजा, जिससे नुकसान की रकम अच्छी तरह वसूल हो। यदि रंगून के अधिकारी ९ हजार रुपये नुकसान न भर दे तो आवा के राजा को देने के लिये एक पत्र लाबर्ट को दिया गया। रंगून के अधिकारी और लांबर्ट में नहीं बनी। बाद को जब गवर्नर जनरल का पत्र आवा के राजा को मिला तब उसने रंगून के अधिकारी को बदल दिया और मुकदमें की जांच शुरू की। पर दूसरा अधिकारी भी पहले ही के समान था। उसने अँगरेज वकीलों से भेट नहीं की। तब लांबर्ट ने सब यूरोपियन व्यापारियों को अग्निबोट पर बुलाया और ब्रह्मा के राजा का अग्निबोट, जो बन्दर में था, पकड़ लिया। तब युद्ध शुरू हुआ। गवर्नर जनरल को जब यह खबर मालूम हुई तब उसने और अधिक फौज रंगून को रवाना की और आवा के राजा के पास ये शर्तें लिख भेजीं:—(१) रंगून के अधिकारी को निकल दो; और (२) १० लाख रुपये जुरमाना दो। जवाब के लिए पांच अठवाडे की मुदत दी। उसी अवकाश में बम्बई, मदरास और कलकत्ते की सेनाएं एकत्र करके गवर्नर जनरल ने जनरल गॉडविन को मुख्य सेनापति बनाया, और युद्ध की तयारी, खुब तेजी के साथ, शुरू की। ऐरावती नदी–द्वारा अँगरेजों का एक अग्निबोट सुलह का झंडा लिए हुए जा रहा था। उस पर ब्रह्मी लोगों ने तोपें चलाई।

मुहिमः—एप्रिल सन् १८५२ में अँगरेजों ने हमला कर के मरतबान शहर लेलिया। १२ तारीख को रंगून पर मार शुरू हुई। यहां शिव का एक बड़ा किले के समान मन्दिर है। उस पर हमला कर के अँगरेजों ने उसे ले लिया। उसके बाद १४ तारीख को रंगून उनके हाथमे आया। बाद को शीघ्रही केमेंडिन का थाना और बेसिन बन्दर उन्होने लिया, तथा पीगू प्रान्त का सब किनारा अँगरेजों के हाथ में आगया। उसे गवर्नर जनरल ने ब्रिटिश राज्य में जोड लिया। फिर कुछ समय बाद अँगरेजों ने प्रोम शहर लिया। डलहोसी स्वयं ब्रह्मदेश में गया और नवम्बर तक सब मुकाम अपने अधीन कर के दिसम्बर में उसने दक्षिण ब्रह्मा का मुल्क अँगरेजी राज्य में मिला लिया, और उसने आवा के राजा को यह पत्र लिखा:—

"अँगरेज लोगों को सताने का हर्जा मांगने पर जब राजा ने नहीं दिया तब हमें शस्त्र के जोर पर वह वसूल कर लेना पड़ा। हमने अनेक स्थान ले

किले अधिकृत कर लिये और सब जगह ब्रह्मी फौज का पराजय हुआ । पीगू प्रान्त अब हमारे कब्जे में है, समय पर जागृत होने का उपाय तुमने व्यर्थ खोया; इस लिए सब हर्जा वसूल होने के लिए पीगू प्रान्त अब हमारे ही पास रहेगा । वहां से ब्रह्मी फौज निकाल कर अब हम सब इन्तिजाम करेंगे । पीगू की रैयत हमारे न्याययुक्त शासन में निर्भयता से रहे । आवश्यकता के अनुसार अब हमने हर्जा भर पाया; इस कारण अब अधिक मुल्क लेने की हमारी इच्छा नहीं है; तथापि अब से यदि आवा-दरबार हमारे विरुद्ध चलेगा, तो उसका बदला लेने में अँगरेज सरकार कभी आगा पीछा न सोचेगी।" इस पत्र से सुलह आदि का सब काम निकल गया ।

पाठ बारहवाँ ।

लॉर्ड डलहौसी ।

सन् १८४८-१८५६ ।

१. लॉर्ड डलहौसी ।	२. प्रजाहित के काम ।
३. राज्य जब्त करना ।	४. दत्तक-वारिस नामंजूर. सितारा, झांसी ।
५. लावारिसी राज्य । अर्काट, तंजौर, नागपुर ।	६. बेइन्तिजामी के कारण जब्ती:— सैरपुर, सिकम, बरार और अवध ।
७. प्रयाण और योग्यता ।	

१. **लॉर्ड डलहौसी:**—हिन्दुस्थान में अँगरेजी राज्य की स्थापना खास कर इन चार राजनीतिज्ञों ने की:—वॉरन हेस्टिंग्स, वेलस्ली, लॉर्ड हेस्टिंग्ज और लॉर्ड डलहौसी । डलहौसी के पहले अँगरेजी राज्य बहुत खंडित था । परन्तु इसने बहुत करके वह सब जोड दिया । इस कारण डलहौसी का जमाना विशेष महत्त्व का है । इस महत्त्व का कारण यह है कि, उसके विलायत लौट जाने पर सन् १८५७ में भारत में एक भयंकर बलवा हुआ, और उसमें बहुत प्राण-हानि हुई । डलहौसी ही के शासनकाल में उस बलवे के कारण उत्पन्न हुए । डलहौसी बहुत छोटेपन से बडे होशियारों में प्रसिद्ध था । पचीस वर्ष की उम्र में पार्लिमेन्ट में उसका प्रवेश हुआ । मुख्य प्रधान पील उस पर बहुत

प्रीति रखता था। उसने डलहौसी को विलायत में व्यापार-विभाग का मुखिया बनाया। बाद को रसेल प्रधान हुआ। उसने सन् १८४७ में उसे हिन्दुस्थान का गवर्नर जनरल नियत किया। उस समय उसकी उम्र ३५ वर्ष की थी। वह शरीर से बहुत नाजुक था। और यहां के परिश्रम से वह इतना कमजोर हो गया था कि, अपना काम छोडकर लौट जाने पर वह दो तीन साल से अधिक नहीं जीवित रहा।

इस शासनकाल में महत्त्व की तीन घटनाएं हुईः—(१) सिक्ख और ब्रह्मी युद्ध; जिनका वर्णन पिछले पाठ में आया है। (२) प्रजाहित की बातें और (३) जब्त किये हुए राज्य।

२. प्रजाहित और राज्यप्रबन्ध के कामः—डलहौसी के जमाने में अनेक ऐसे सुधार हुए, जिनके कारण राज्य को दृढता प्राप्त हुई। वे सुधारः—

(१) आज तक गवर्नर जनरल की "बंगाल का गवर्नर जनरल" यही पदवी थी। और उसी की तरफ बंगाल इलाके का भी सब काम था। डलहौसी ने प्रयत्न करके पार्लिमेन्ट के द्वारा बंगाल इलाका अलग किया, और उसपर अलग एक लेफ्टिनेंट गवर्नर नियत किया। सारे भारत का मुख्य राज्य-प्रबन्ध इसी जमाने से गवर्नर जनरल के हाथ में आया।

(२) उसने वायव्य ओर की सरहद मजबूत की। पहले कुल फौज की छावनी कलकत्ते के पास रहती थी। उसे डलहौसी ने उत्तर भारत में मेरठ नामक शहर में मुकर्रर किया। सिमला भारत सरकार का छै महीने के लिए मुख्य मुकाम हुआ। वैसे ही यह भी निश्चय हुआ कि, विलायत से आनेवाली फौज बम्बई में उतरे।

(३) हिन्दुस्थान में रेलगाडी चलाकर फौज और व्यापार के लिए सुभीते कर दिये। पहले कलकत्ते के पास और बम्बई से थाने तक रेलगाडी जारी हुई; वह बढते बढते आज पैंतीस हजार मील होगई है।

(४) उसने हिन्दुस्थान में तार का यंत्र जारी किया।

(५) उसने भारत के व्यापार को बढाने के यत्न किये।

(६) बंगाल के वायव्य ओर संथाल लोग रहते हैं। करीब तीस हजार लोग अपनी शिकायतें बतलाने के लिए कलकत्ते को रवाने हुए और ...

उन्होंने बहुत दंगा मचाया। गवर्नर जनरल ने उन पर फौज भेजी, और उनका बन्दोबस्त किया।

(७) देशी राज्यों में सजा देने के जो घोर उपाय थे, वे उसने बन्द करवाये।

(८) रास्ते, नहरें आदि प्रजा के उपयोग के काम करने के लिए उसने पब्लिक वर्क्स नामक मुहकमा जारी किया। इस मुहकमे ने अनेक उपयुक्त काम किये हैं।

(९) पहले डाक विभाग का प्रबन्ध ठीक न था। इस कारण लोगों को तकलीफ होती थी। डलहौसी ने आधा आना महसूलपर हिन्दुस्थान में चाहे जहां पत्र भेजने का सुभीता कर दिया। इस कारण डाक-विभाग की बहुतही तरक्की हुई।

(१०) लॉर्ड बेंटिंक के समय में सिर्फ अँगरेजी पढ़ने की शालाएं खोली गई थीं। परन्तु डलहौसी ने एक स्वतंत्र शिक्षाविभाग नियत किया और लोगों को सब प्रकार की शिक्षा देने की सुविधा कर दी।

(११) उसने सिविल सर्व्हिस परीक्षा में देशी उम्मेदवार लेने का हुक्म निकाला।

३. राज्य जब्त करना:—अँगरेजों की सार्वभौम सत्ता स्थापित हुए पचास वर्ष होगये; और सहायकसेना की जो पद्धति पहले उपयोगी थी वह अब निरुपयोगी ठहरी। चढाइयां, युद्ध, बलवे आदि सब बन्द होगये और देशी राजाओं को अपने बचाव की फिक्र नहीं रही। ऐसी दशा में शान्तिसुख से वे ऐश-आराम में पडकर आलसी होगये। इसीसे उनके राज्यशासन की उपेक्षा होने लगी और अप्रबन्ध की शिकायतें अँगरेज सरकार के पास बार बार आने लगीं। तब देशी राज्यों की प्रजा की दुर्दशा न होने देने की जवाबदारी गवर्नर जनरल पर आई। ऐसी दशा में (१) कभी तो युद्ध से, (२) कभी दत्तक-वारिस नामंजूर करके, (३) कभी लावारिसी के सबब से और (४) कभी अप्रबन्ध के कारण से, जहां तक होसके उतने राज्य जब्त करके, डलहौसी ने राज्य प्रबन्ध के सुभीते के लिए हिन्दुस्तान का मुल्क यथा शक्य एकसत्ताक बनाने का निश्चय किया।

४. दत्तक-वारिस नामंजूर:-(अ) सितारा, (सन् १८४९):—सितारे के राजा प्रतापसिंह को पदच्युत करके अँगरेजों ने उसके भाई शहाजी को गद्दी

पर बिठाया, (सन् १८३९)। बाद को ये दोनों भाई सन् १८४७ और ४८ के बीच में चल बसे। संतति न होने के कारण दोनों ने दत्तक पुत्र गोद लिए थे। रेजिडेन्ट ने गवर्नर जनरल से निवेदन किया कि, दत्तकविधान योग्य रीति से हुए हैं। मरने पर जिसका कोई वारिस नहीं होता उसकी रियासत सरकार में जमा हो जाती है। इसी नियम के अनुसार डलहौसी ने कोर्ट आफ डायरेक्टर्स से प्रगट किया कि सुलहनामे के 'वारिस और 'अनुगामी' शब्द 'औरस संतति के ही लिए लगाये जायँ। दत्तकविधान मंजूर करना सरकार की इच्छा पर निर्भर है। डायरेक्टर्स ने इस पर अपना अनुकूल मत दिया और सितारे का राज्य औरस वारिस न होने के कारण जब्त किया गया।

(आ) पेशवा की पेंशन जब्त, (सन् १८५३):—ब्रह्मावर्त में बाजीराव पेशवा परलोक सिधारा, (सन् १८५२)। मरते समय उसने धोंडोपंत उर्फ नानासाहब को दत्तक लिया था। इस नाना साहब ने बाजीराव की आठ लाख की सालाना पेंशन अपने लिए माँगी। परन्तु गवर्नर जनरल ने यह कह देनेसे इन्कार कर दिया कि, यह पेंशन बाजीराव की जिंदगी के लिये थी, और बाजीराव की २७ लाख की रियासत नानासाहब के लिए बस है। इसी कारण नानासाहब चिढ़ गया और आगे बलवे का अगुआ बन कर उसने घोर कृत्य किये।

(इ) झांसी, (सन् १८५३):—झांसी प्रान्त पहले बाजीराव को बुन्देलखंड के महाराज छत्रसाल की तरफ से मिला था। उस प्रान्त का रघुनाथ हरी नेवालकर नामक पेशवाओं का सूबेदार सन् १७९६ में परलोक सिधारा और उसका भाई शिवरामभाऊ सूबेदार हुआ। शिवरामभाऊ पराक्रमी था। सन् १८०५ में अँगरेज सरकार ने उससे मित्रता कर ली। १८१४ में उसका देहान्त होगया, और उसके नाती रामचन्द्रराव को झांसी की सूबेदारी मिली। जब पेशवाओंका राज्य अँगरेजों ने ले लिया, तब झांसी पर भी उनका हक आगया। उस समय रामचंद्रराव से नवीन सुलह करके अँगरेजों ने झांसी का राज्य उसके वहाँ वंशपरम्परा के लिए कायम किया। बाद को रामचन्द्रराव ने अँगरेजी सरकार को मदद दी, और उसके उपलक्ष में अँगरेजों ने उसे "महाराजाधिराज" की पदवी दी। सन् १८३५ में जब रामचन्द्रराव का देहान्त हुआ तब उसके पुत्र न होने के कारण अँगरेजों ने रघुनाथराव नामक उसके चाचा को गद्दी पर बैठाया। वह सन् १८३७ में परलोक सिधारा। बाद को शिवरामभाऊ के छोटे

लडके गंगाधरराव को झांसी का राज्य मिला। सन् १८३९ में कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स की तरफ से उसे दत्तक लेने की आज्ञा भी मिली । दूसरे बाजीराव का भाई चिमणाजी आप्पा काशी में रहता था । उसके कारबारी मोरोपंत तांबे की लडकी मनूबाई गंगाधरराव को ब्याही थी । वही झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के नाम से आगे चलकर प्रसिद्ध हुई। गंगाधरराव ने राज्य–प्रबन्ध बहुत अच्छी तरह से चलाया। सन् १८५१ में उसके एक लडका हुआ; पर वह तीनही महीने के बाद जाता रहा । बाद को तुरन्तही गंगाधरराव भी बीमार हुआ और जब वह अपने जीवन से निराश होगया तब उसने रेजिडेन्ट के सामने दामोदरराव नाम का पुत्र गोद लिया और इस प्रकार का प्रबन्ध निश्चित किया कि, जब तक दत्तक बडा न हो तब तक महारानी लक्ष्मीबाई राज्यप्रबन्ध देखे । इतना कर के वह २१ नवम्बर सन् १८५३ को स्वर्गवासी हुआ। इस पर गवर्नर जनरल ने निश्चय किया कि, झांसी के राजा स्वतंत्र नहीं हैं, और न उन्हें दत्तक लेने का अधिकारही है, इस लिए राज्य जप्त किया जाय। झांसी का राज्य जप्त होगया। वहां की महारानी लक्ष्मीबाई आगे चलकर बलवाइयों में शामिल हुई।

५. लावारिसी पेंशनें,—(अ) अर्कांट, (सन् १८५३):—अर्कांट के नवाब के द्वारा भारत में पहले पहल अँगरेजों का प्रवेश हुआ। लॉर्ड वेलस्ली के समय में ये नवाब केवल नामधारी रह गये, और उनके पास कुछ थोडीसी जागीर बाकी थी। नवाब मुहमद गोससाँ सन् १८५३ में मर गया । उसके लडका न था। तब मद्रास सरकार ने शिफारिश की कि, नवाब की पदवी निकाल कर जागीर जप्त की जाय, और उसके कुटुंब के निर्वाह भरके लिए वेतन दे दिया जाय। डलहौसी ने वह शिफारिश मंजूर कर ली और नवाब की जागीर अँगरेजी सरकार में मिला ली गई।

(आ) तंजौर, (सन् १८५५):—सन् १७९९ में जब तंजौर का राज्य जप्त हुआ तब से राजा के कुटुम्ब में बहुत बडी पेंशन और राजा का खिताब जारी था। सन् १८५५ में शिवाजी राजा निस्सन्तान रहकर मरा। डलहौसी ने उसकी तीन लाख की जागीर जब्त करली।

(इ) संबलपुर:—इस छोटीसी रियासत का भी राजा निस्सन्तान रह कर मर गाय। इस लिए रियासत लावारसी समझ कर जब्त की गई।

(ई) नागपुर, (सन् १८५३):—डलहौसी ने जो बड़े बड़े राज्य जप्त किये, उन्हीं में नागपुर की भी गणना है। उसका विस्तार ७५५०० वर्ग मील और मनुष्यसंख्या ४६ लाख से ऊपर थी। सेंधिया और होलकर की तरहही नागपुर के भोंसलों का राज्य ब्रिटिश राज्य के पहले स्थापित हुआ था। नागपूर बरारप्रान्त का द्वार था। सन् १८१७ में आप्पासाहब को लॉर्ड हेस्टिंग्स् ने पदच्युत किया, और रानी बंकाबाई की गोद में रघुजी भोंसला नामक लड़के को दत्तक देकर राजकाज शुरू किया। उस समय यह सुलह ठहर गई थी कि, यह राज्य वंशपरम्परा बराबर जारी रहेगा। नवम्बर सन् १८५३ में ४७ वर्ष का होकर रघुजी भोंसला परलोक सिधारा। उसके कोई लड़का न था। इस लिए लावारसी कहकर यह राज्य अँगरेजी राज्य में मिला लिया गया।

६. अप्रबन्ध के कारण जप्त किये हुए राज्य, (अ):—खैरपूर, (सन् १८५२):—जब सिन्ध प्रान्त जीत लिया गया तब जो अमीर स्वयं अँगरेजों में आ मिले, उनके राज्य उन्हीं के पास रखने का अँगरेजों ने वचन दिया था। खैरपूर के अमीर का भाई अली मुराद पहले ही अँगरेजों से आ मिला था, और अपने भाई से युद्ध कर के उसने यह राज्य स्वयं ले लिया था। बादको जब अली मुराद और अँगरेजों में झगड़ा लगा तब डलहौसी के कहने से कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स ने मुराद का १९ लाख का मुल्क जप्त कर लिया और ३-४ लाख की जागीर उसके पास रहने दी।

(आ) सिक्कम:—हिमालय के पहाड में सिकम नामक एक स्वतंत्र रियासत है। उसमें दार्जिलिंग बंगाल प्रान्त का हवा खाने का मुकाम है। यह मुकाम अँगरेजों ने ले लिया, और उसके बदले में सिकम के राजा को वे छे हजार रुपये सालाना देने लगे। कुछ दिनों बाद वहां का राजा उद्धतपन का बर्ताव करने लगा। उस समय अँगरेज सरकार ने सिकम का कुछ भाग जीत लिया। उसीमें दार्जिलिंग भी आगया। इस मुल्क में आजकल चाह की खेती होती है।

(इ) निजाम का बरार प्रान्त, (सन् १८५४):—निजाम की तरफ बहुत दिनों से कंटिजेंट फौज की बाकी लग रही थी। यह बहुत कर्जी हो गया था। सन् १८५१ में उसे सिर्फ अँगरेजी सरकारही का ८० लाख रुपया देना

डलहौसी ने यह रुपया एकदम अदा करने का सख्त तकाज़ा जारी किया, और कहा कि, अगर कर्ज न दे सको तो मुल्क अलग तोड दो । निजाम ने लाचार होकर जैसे तैसे ४० लाख रुपये अदा किये और बाकी रुपया एक वर्ष के बाद देने का वादा किया । पर यह वादा उसने पूरा नहीं किया । इस लिए सन् १८५३ में नवीन सुलहनामा लिखा गया । उसमें निश्चित हुआ कि, (१) ५००० पैदल और दो हजार सवार कंटिजंट फौज की तौर पर निजाम अँगरेजों के अधिकार में रखे; (२) उसके खर्च के लिए और पहले का कर्ज अदा करने के लिए बरार प्रान्त, कृष्णा और तुंगभद्रा के बीच का रायचूर नामक दुआब और नवलदुर्ग परगना-इतना उपजाऊ मुल्क निजाम अँगरेजों को दे । परन्तु अँगरेज हरसाल हिसाब देते रहें, और कर्जा अदा होजाने पर वे प्रान्त निजाम को लौटा दिये जायँ । उसी समय से निजाम की कंटिजन्ट फौज अँगरेजों के अधिकार में आई । सन् १९०३ में बरार प्रान्त का सदा के लिए फैसला हो चुका, और अँगरेजी सरकार ने निजाम को छब्बीस लाख सालाना एक मुस्त रकम देने का निश्चय करके वह प्रान्त सदा के लिए अपने अधिकार में ले लिया । बरार और नागपुर मिलकर 'सेंट्रल प्रावेन्सस्' (मध्यप्रांत) कहा जाता है ।

(ई) अवध, (सन् १८५६):—अवध के वजीर से वेलस्ली ने जो पहले सुलह की थी, उसका हाल पीछे आही गया है । सन् १८१४ में वजीर सआदत अली मर गया और उसका लडका गाजीउद्दीन राज्य करने लगा । वह सन् १८२७ में चल बसा, और उसका लडका नसीरुद्दीन गद्दी पर बैठा । वह भी सन् १८३७ में मर गया । बादको उस के चचा मुहम्द अलीशाह को गद्दी मिलने की कोई उम्मेद न थी; इस लिए उसने नवीन सुलह कबूल करके रेजिडेन्ट की मदद से राज्यपद प्राप्त किया ।

मुहम्मद अलीशाह ने राज्य में बहुत सुधार किया । पर वह बहुत शीघ्र अर्थात् सन् १८४२ ही में मर गया । उसके बाद उसका लडका अमजाद अलीजा पांच वर्ष तक बादशाहत करके सन् १८४७ में कूच मर गया । उसके बाद उसका लडका वजीदजा गद्दी पर बैठा । ते दोनो दुराचारी और दुर्बल थे; इस कारण राज्य में बेइन्तिजामी हुई । डलहौसी ने रेजिडेन्ट कर्नल स्लीमन को हुक्म भेजा कि, कुल प्रान्त में घूम कर सारा कचा हाल बतलाओ ।

उसके अनुसार सन् १८४९–५० में स्लीमन अवध प्रान्त में घूमता रहा। वहां इतने अनाचार उसको नजर आये कि, उसने साफ प्रगट कर दिया कि, अब से राज्य–प्रबन्ध के विषय में उपेक्षा करना अँगरेजी सरकार के लिए बड़े कलंक की बात होगी।

बाद को स्लीमन की बदली हो गई और उसकी जगह जनरल आउट्रम रेजिडेन्ट मुकर्रर हुआ। उसने दुबारा फिर जाँच करके अपनी राय दी कि, अवध का राज्य एकदम अँगरेज सरकार अब अपने अधिकार में कर ले। उस पर कौंसिल वालों की राय मिलने पर डलहौसी के सामने वह प्रश्न उपस्थित हुआ। उस पर अपना मत लिखकर उसने वह मामला विलायत भेज दिया। वहां से राज्य जब्त करने का हुक्म आगया, उसके अनुसार फौज भेजकर डलहौसी ने राज्य जब्त किया, और नवाब को कलकत्ते में ला रखा। उसे बारह लाख सालाना पेंशन मिलने लगी।

७. डलहौसी का प्रयाण, (सन् १८५६):—अवध प्रकरण का ते करनाही डलहौसी का अन्तिम काम है। वह समझता था कि, हमने हिन्दुस्थान के राज्य को चिरस्थायी किया और शान्ति स्थापित की। उसने आठ वर्ष तक बड़े जोर शोर से हिन्दुस्थान का राज्य–शासन किया। राज्य–संरक्षण की पद्धति का मूल पाया उसीने स्थिर किया। जाने के पहले हिन्दुस्थान की दशा सुधारने का सच्चा उपक्रम डलहौसी ने किया। रेलवे, पबलिक-वर्क्स, शिक्षाविभाग, रास्ते, डाक, इत्यादि के सुधारों का आरम्भ इसी समय से हुआ। उस समय सर चार्लस वुड स्टेट सेक्रेटरी था। उसने हिन्दु-स्थान में शिक्षाविभागसम्बन्धी जो लेख भेजा वह गंभीर विचारों से पूर्ण है, और बड़े महत्त्व का है। डलहौसी ने अपने कामों का, अच्छी तरह से समर्थन कर लिया था। कलकत्ते से निकलते ही उसे मालूम हो गया कि, अब मैं बहुत दिन

उसके जमाने में बंगाल की फौज की ढीली चाल टूट गई और सेनापति सर चार्ल्स नेपियर ने नवीन प्रबन्ध किया। परन्तु नेपियर और डलहौसी का उस विषय में मतभेद हो गया, और नेपियर इस्तीफा दे कर विलायत चला गया।

सन् १८५३ में फिर ईस्ट इंडिया कम्पनी की सनद बदनी चाहिए थी। परन्तु उस वर्ष में यूरोप में युद्ध जारी था; इस कारण कंपनी के प्रबन्ध में ध्यान देने की फुरसत पार्लिमेन्ट को नहीं रही। पहले ही की शर्तों पर कंपनी का कार-व्यार जारी रहा।

पाठ तेरहवां।

सन् सत्तावन का बलवा।

मई १८५७ नवम्बर १८५८।

१. लॉर्ड केनिंग।
२. बलवे के पूर्व कारण।
३. बलवे का तात्कालिक कारण।
४. बलवे का साधारण हाल।
(क) कानपुर, (ख) लखनऊ।
(ग) दिल्ली का घेरा।
(घ) मध्यहिंद, झांसी।
५. राज्य-प्रबन्ध का नवीन कायदा।
६. महारानी विक्टोरिया का घोषणा-पत्र।
७. केनिंग की योग्यता।

१. लॉर्ड केनिंग, (सन् १८५६–६२):—लॉर्ड डलहौसी के बाद लॉर्ड केनिंग गवर्नर जनरल नियत हुआ। केनिंग शान्त-स्वभाव और दीर्घोद्योगी था। डलहौसी के समय में अनेक नवीन बातों का आरम्भ हो चुका था। उन्हें वैसा ही आगे चलाना एक बहुत बडा काम था। इस समय नए सुधार के कोई काम करने को न थे। केनिंग इस काम के लायक था। जिस समय वह यहां आया उस समय चारों ओर शान्ति देख पडती थी। तथापि डलहौसी के सुधार एक-दम अमल में आने के कारण तथा दूसरे अनेक कारणों से देश में असन्तोष उत्पन्न होगया था। उसका परिणाम यह हुआ कि, सन् ५७–५८ के दो वर्षों में एक बडा भारी गदर हिन्दुस्थान में हुआ। उस बलवे में अनेक क्रूर घटनाएं हुईं और भारत के राज्य-प्रबन्ध में बडी भारी क्रान्ति हुई।

२. बलवे के पूर्व कारणः—इस बलवे के विषय में अनेक लोगों के अनेक मत हैं। कितने ही लोग कहते हैं कि; यह बलवा केवल देशी फौज का था, और फौज की बेइन्तिजामी ही उसका मुख्य कारण है। तथापि यह बात अधिक लोगों को कबूल है कि, उस समय सर्वसाधारण लोगों में भी असन्तोष उत्पन्न होगया था। हां, उन लोगों ने बागी सिपाहियों को बहुत सी मदद नहीं दी; इसी कारण बलवा जल्द शान्त होगया। (१) डलहौसी ने एक के बाद एक राज्य और पेंशनें जब्त कीं; इस कारण जब लोगों ने देखा कि, हमारी जमीन के प्राचीन तथा अन्य हक एकदम डूब गये तब लोगों के मन बिगडे। (२) लोगों ने समझा कि रेलगाडी, अग्निबोट और तार आदि डलहौसी के द्वारा जारी हुए नवीन कामों से हमारी स्वतंत्रता नष्ट हुई। (३) दिल्ली के बादशाह की जो सत्ता सिर्फ नाममात्र के लिए रह गई थी, वह भी जब निकाल ली गई तब मुसल्मान लोग असन्तुष्ट हुए। (४) उस समय अँगरेजी-शिक्षा की जो बहुतसी शालाएं पादरी लोगों की थीं, उनमें और अन्य सरकारी पाठशालाओं में पश्चिमी शिक्षा लोगों को मिलती थी, इससे लोगों को मालूम हुआ कि, सरकार हमारा धर्म नष्ट करके ईसाई धर्म भारत में फैलाना चाहती है। इस कारण लोग सरकार से नाराज हुए। (५) उसी दशा में अनेक उपद्रवी आदमी नाना प्रकार से सरकार की निन्दा कर रहे थे। लोगों में यह अफवा उठी कि, प्लासी की लडाई के सौ वर्ष पूरे होते ही अँगरेजों का राज्य डूब जायगा। इसी प्रकार की और भी सैकडों बातें चारों ओर फैल गईं। (६) दिल्ली के बादशाह के कुटुम्बी लोग और नाना साहब पेशवा आदि लोगों ने अप्रत्यक्ष रीति से सरकार पर चढाई करने के लिए लोगों को उभाडा। इस बात का अन्य कारणों से और भी मेल होगया।

इसके सिवा फौजी लोगों के काम, तनख्वाह और नियम का प्रबन्ध ठीक न था। इससे और अन्य कारणों से फौज में भी असन्तोष उत्पन्न हो गया था।

३. बलवे का एक तात्कालिक कारणः—सन् १८५६ में नवीन कारतूसों की बन्दूकें सिपाहियों को दी गईं। उन कारतूसों का सिरा दांतों से तोडना पडता था। कलकत्ते के पास बारकपूर का एक ब्राह्मण सिपाही कुए पर पानी भरने गया। उसी समय एक चमार वहां आया। पहिचान पर उन दोनों का झगडा हुआ। चमार बोला,—"गाय और सुअर की चर्बी लगे

हुए कारतूस जब तुम दांतों से काटते हो तब तुम्हारी यह पवित्रता कहां रहती है?" यह बातचीत कुछ काल बाद पलटन में फैल गई, और इसी बात की चर्चा शुरू हुई। चूंकि, हिन्दुओं के लिए गाय पूज्य है और मुसल्मानों के लिए सुअर निषिद्ध है; इस लिए नवीन कारतूसों से दोनों जातियां सरकार पर रुष्ट हुईं, और फौज ने समझ लिया कि, ये कारतूस खास कर हम लोगों को भ्रष्ट करने ही के लिए लाये गये हैं। उसी समय उत्तर हिन्दुस्थान में एक गांव से दूसरे गांव को कुछ रोटियां जाने लगीं। इस बात का खुलासा कभी नहीं हुआ कि, ये कौन भेजता है और भेजने का उद्देश क्या है। बुरानपुर, रानीगंज और बारकपूर की १९ वीं पलटन में महीने दो महिने, भीतर ही भीतर, असन्तोष सुलग रहा था। १९ फरवरी सन् १८५७ को रानीगंज की १९ वीं पलटन के सिपाही कारतूस न लेने लगे। तब उनके हथियार छीन लिए गये, और उन्हें छुट्टी दे दी गई। उन लोगों में से बहुत से लोग अवध और रुहेलखण्ड आदि प्रान्तों के थे। वे अपने घरों की तरफ गये और कलकत्ते की तरफ के सिपाहियों के विचार उन्होंने वायव्य ओर के प्रान्तों में प्रसिद्ध किये। आगे आनेवाले भयंकर प्रसंग की सूचनाएं कई यूरोपियन लोगों को मालूम होगई थीं, और स्वयं केनिंग ने भी इस बात की ओर विशेष ध्यान दिया; क्योंकि, वह यहां नवीन ही आया था और शान्तिप्रिय था।

४. बलवे का वृत्तान्तः—एप्रिल सन् १८५७ से बहुत से फौजी मुकामों में बुरे चिन्ह देख पडने लगे। और मई मास के शुरू होते ही खुल्लमखुल्ला बलवे का प्रारम्भ होगया। बलवाई सिपाही कोई न कोई बहाना निकाल कर अपने अफसरों पर उठते; गोली चलाकर उन्हें मार डालते; उनके बंगलों और बारीकों में आग लगा देते; और जेल तोडकर खजाना आदि लूट कर दिल्ली को चल देते थे। किसी किसी जगह देशी बागी सिपाहियों और यूरोपियन सिपाहियों में बडी गहरी छडागयां होगईं। किसी किसी जगह यूरोपियन अधिकारी घेर लिये गये, और कितने ही मुकामों मे यूरोपियन लोग मारे गये। इसी प्रकार की घटनाएं मई सन् १८५७ से १८५७-१८५८ के अखीर तक जारी थीं। इतनी अवधिमें उत्तर-हिन्दुस्थान में बहुत जगह अराजकता मची हुई थी।

इस गदर का फैलाव बहुत करके उत्तर-हिन्दुस्थान में था। नर्मदा के दक्षिणमें इस बलवे का बहुत प्रसार नहीं हुआ। पंजाब, आगरा, अवध प्रान्त, रुहेल-

खण्ड, मध्यहिन्द, अर्थात् बुन्देलखण्ड और बंगाल के कुछ भाग में बलवे का फैलाव था और उन सबों का केन्द्रस्थल दिल्ली था। बलवाइयों की इच्छा थी कि, दिल्ली के मुगल बादशाह को सिंहासन पर बैठा कर मुसल्मानी अमलदारी जारी की जाय। यद्यपि बहुत करके सब जगहों में बलवा हुआ, तथापि लाहोर, दिल्ली, आगरा, कानपुर, इलाहाबाद, बनारस, पटना यही बलवे की मुख्य लाइन थी। इस लाइन में उत्तर की ओर से दो मुख्य शाखें मिली थीं; एक बरेली और अलीगढ़ होकर दिल्ली में; और दूसरी लखनऊ तथा कानपुर होकर इलाहाबाद में। तीसरी एक शाखा दक्षिण से झांसी, ग्वालियर और काल्पी होकर आगरे में; और चौथी शाखा मालवे से नीमच तथा नसीराबाद होकर दिल्ली में मिली थीं। यही बलवे का मुख्य विस्तार था।

ता. १० मई को मेरठ की पलटन ने बलवा कर के दिल्ली के लिए कूच किया। दिल्ली की फौज भी उसीमें मिल गई और उन लोगों ने बादशाह को गद्दी पर बैठा दिया। यद्यपि बलवे का फैलाव बहुत जगहों में था, तथापि दिल्ली, लखनऊ, कानपुर और झांसी की घटनाएं विशेष महत्त्वपूर्ण और भयंकर हैं।

(क) कानपुर का हालः— कानपुर में अँगरेजों की छावनी थी। पासही ब्रह्मावर्त में नाना साहब रहता था। २ जून को कानपुर में दंगा होते ही नाना साहब बागियों का अगुआ बना और अपने को राजा कहलाने लगा। कानपुरमें बहुत से अँगरेज लोग थे। २९ दिन तक लड़कर उन्होंने बलवाइयों से अपना बचाव किया। बाद को नाना साहब ने वचन दिया कि, हम इलाहाबाद तक तुम लोगों को सुरक्षित पहुँचा देंगे; इस कारण वे फिर बलवाइयों के अधीन हो गये। ४५० आदमी इलाहाबाद को जाने के लिए नावपर बैठे; पर बलवाइयों ने किनारे पर से गोलियां चलाकर बहुतों को जान से मार डाला। केवल चार आदमी बाकी बचे। इनके सिवा १२५ आदमी कतल करने के लिए रखे गये। इतने में अंगरेजी सेनापति हैवलाक बलवे को शान्त करता हुआ ज्योंही कानपुर के पास आया त्योंही नाना साहब ने उन कैदियों को कतल किया, और उन्हें एक कुए में डाल दिया। इस अवसर पर बलवाइयों ने जो क्रूरता दिखलाई और यूरोपियन लोगों ने जो धीरता और सहनशीलता दिखलाई उसका स्मरण आने के लिए वह कुआं कानपुर में अबतक कायम रखा गया है।

(ख) लखनऊ का हाल:—कानपुर की ही तरह लखनऊ का हाल भी हृदयद्रावक है। वहां के मुख्य कमिश्नर सर हेनरी लॉरेन्स ने बहुत दिन तक धैर्य रखने में कमाल कर दिया। लॉरेन्स ने दीवाल का घेरा आदि बना कर और अन्नसामग्री भर कर बलवाइयों के विरुद्ध पहले ही अपना बन्दोबस्त कर रखा था। ४ जून १८५७ को लॉरेंस कुलफी गोला लग कर मारा गया। २ जुलाई को शहर के सब अँगरेज रेजिडेन्सी में रहने गये। वहां बलवाइयों ने उन्हें घेर लिया। मीरठ वाले लोगो ने तीन महीने तक बडे धैर्य से अपना बचाव किया। उस समय अँगरेज स्त्री-बच्चों ने भी ऐसे ऐसे शूरता के काम किये कि, जिनको सुनकर दांतों तले उँगली दबानी पडती है। २५ तारीख को जनरल हैवलाक और ओट्रम उनकी मदत के लिए पहुंचे। परन्तु वे भी घेरे मे पड गये। बादको २६ नवम्बर के दिन सर कालिन कैंबेल ने वहां पहुंच कर उन्हें छुडाया।

(ग) दिल्ली का घेरा:—बलवाइयों का भारी जमाव दिल्ली में था। ८ जून से दिल्ली को घेरना अँगरेजों ने शुरू किया। अँगरेजों की फोज करीब ३७ हजार थी। ४ जोलाई को बलवाइयों ने आंगरे का किला लिया। यह बात जब दिल्ली के बलवाइयों को मालूम हुई, तब उन्हें और जोश आया। ता० ४ अगस्त को पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर जान लारेन्स ने जनरल निकल्सन को फोज देकर मदद के लिए दिल्ली भेज दिया। १४ सितम्बर को अँगरेजों ने बलवाइयों पर हल्ला किया। छे दिन तक दिल्ली के रास्तों पर घन-घोर युद्ध हुआ, और निकल्सन ने शहर पर कब्जा कर लिया। परन्तु वह स्वयं अपने प्राणों से हाथ धो बैठा। वृद्ध बहादुरशाह और उसके लडके और नाती हुमायूं के कब्र में थे। वे दूसरे दिन पकड लाये गये! शाहजादे जब शहर में आ रहे थे तब बलवाइयों ने उन्हें छुडाने का प्रयत्न किया। लेकिन हड्सन नामक अधिकारी ने गोलियां बरसा कर उनको मार डाला। अँगरेजों ने बाद-शाह को रंगून भेज दिया और वहीं वह सन् १८६२ में मरा। दिल्ली शहर ले लेने के बाद करीब डेड वर्ष तक भिन्न भिन्न स्थानों में बलवाइयों से युद्ध हो रहा था। अवध और रुहेलखण्ड के लोगो ने जब देखा कि, अवध की बेगम, बरेली और बांदे के नवाब और नानासाहब आदि लोग बलवे में शामिल हैं, तब उन लोगों का जोश बहुत बढ गया और वे सब बलवे में

शामिल होगये। इस भाग में जो बलवा हुआ वह केवल सिपाहियों का न था; किन्तु सर्व-साधारण लोगों की तरफ से था। सर कालिन कैंबेल विलायत से फौज लेकर आया। उसे अवध प्रान्त का बलवा शान्त करने में करीब डेढ़ वर्ष लगा। नेपाल के राजा जंगबहादुर ने उस समय अँगरेजों को बहुत मदद दी। अन्त में अँगरेजों ने बलवाइयों के सब स्थान लेकर उनका नाश कर डाला।

(५) मध्यहिन्द, झांसीः—कुल बलवे के वृत्तान्त में अँगरेज सेनापति सर ह्यू रोज ने मध्यहिन्द में जो विजय प्राप्त किया वह प्रशंसनीय है। वह जिस भाग से बलवाइयों का पीछा करते गया वह अत्यन्त पहाड़ी है और वहां के लोगों ने सैकड़ों वर्ष तक मुगलों के कड़र शासन की भी परवा नहीं की थी। इस मुहिम में झांसी का वृत्तान्त विशेष महत्त्व का है।

झांसी में दो अँगरेजी पलटनें और कुछ तोपें थीं। ता. ४ जून सन् १८५७ को सिपाहियों ने खुल्लमखुल्ला बगावत शुरू की, और बहुत से अँगरेजों को कतल किया। ता. ७ को उन्होंने किले पर हल्ला कर के उसे ले लिया और भीतर के लोगों को कतल किया। तदनन्तर उन्होंने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का महल घेर लिया। जब उसने एक लाख रुपये दिये तब बलवाई महल छोड़कर दिल्ली की तरफ चले गये। दिल्ली जाने के पहले उन्होंने झांसी के यूरोपियन लोगों को मार डाला। झांसी से निकल कर वे बागी नानासाहब में जा मिले। प्रान्त में अराजकता छाई हुई थी। करीब ९-१० महीने अँगरेज लोग झांसी का बन्दोबस्त नहीं कर सके। २० मार्च सन् १८५८ को सर ह्यू रोज अपनी फौज लेकर झांसी आया। २३ मार्च को लड़ाई शुरू हुई। छै सात दिन तक केवल गोला गोली ही हो रही थी। आठवें दिन तात्या टोपे नाम का बलवाई सरदार रानी की मदद के लिए आया। परन्तु रोज ने उसे पराजित किया। वह भाग गया। बाद को रोज ने शहर पर हल्ला किया। रानी पराजित होकर भग गई। बाद को तात्या टोपे, रानी, बांदे का नवाब और नाना साहब का भतीजा रावसाहब आदि बलवाइयों के अगुआ ग्वालियर पर चढ़ गये। जयाजीराव सेंधिया को हरा कर उन्होंने शहर जीत लिया। जयाजीराव आगरे भग गया; (ता० १ जून सन् १८५८)। १६ जून को रोज ने ग्वालियर पर हम्ला किया। उस समय रानी लक्ष्मीबाई के गोली लगी और कुछ काल बाद उसका देहान्त हुआ। एप्रिल १८५९ में तात्यां

टोपे अँगरेजों की पकड में आया। इस प्रकार उस प्रान्त के बलवे का अन्त हुआ। पंजाब प्रान्त का बन्दोबस्त सर जान लारेन्स ने बडी शान्ति से सिक्ख लोगों की सहायता से किया। उन्हीं की मदद से दिल्ली छूट सकी। इधर बम्बई और मदरास की फौजों ने भी अँगरेजों के साथ ईमानदारी का बर्ताव किया। निजाम तथा दूसरे अनेक देशी राजाओं ने अँगरेज सरकार को, इस बलवे के शान्त करने में, अच्छी सहायता की। जनरल हेवलाक, सर कालिन कँबेल और सर ह्यु रोज नामक अँगरेज सेनापति बलवा शान्त करने में प्रमुख थे। सन् १८५८ के अन्त में चारों ओर शान्ति होगई।

५. हिन्दुस्थान के राज्य-प्रबन्ध का कायदा, (सन् १८५८):— हिन्दुस्थान में जो भयंकर घटनाएं हुई उनसे विलायत के लोगों का पूरा ध्यान इस तरफ हो गया। बलवा शान्त करने के लिए फौज तो रवाना की ही गई थी; पर इसके सिवा लोगों के मन शान्त करने के लिए और भी कई उपायों की योजना की गई। हिन्दुस्थान के राज्यशासन के विषय में पार्लिमेन्ट में बहुत वादविवाद हुए। उनमें दो मुख्य बातों का निश्चय हुआ। "हिन्दुस्थान के राज्य-प्रबन्ध का कायदा" इस नाम का ५४ दफाओं का एक कायदा पार्लिमेन्ट ने बनाया। इस कायदे से (१) हिन्दुस्थान का राजकारबार विक्टोरिया महारानी के हाथ में आया; (२) ईस्ट इंडिया कम्पनी टूट गई; (३) बोर्ड ऑफ् कंट्रोल नामक सभा टूट कर सेक्रेटरी ऑफ् स्टेट फॉर इंडिया और १५ लोगों की एक कौंसिल स्थापित हुई। सेक्रेटरी ऑफ् स्टेट के लिए विलायत के प्रधान-मण्डल में जगह है। (४) कम्पनी के गवर्नर जनरल को ही वाइसराय, अर्थात् राजा के प्रतिनिधि की पदवी दी गई। इनके सिवा नौकरों की पेंशनें, राज्य की वसूली आदि प्रबन्ध विषयक अनेक बातों की दफाएं हैं। इस कायदे के अनुसार विक्टोरिया महारानी हिन्दुस्थानकी साम्राज्ञी हुई।

६. महारानी विक्टोरिया का घोषणापत्र, (नवम्बर १८५८):— हिन्दुस्थान के राजाओं तथा अन्य लोगों के लिए महारानी ने जो घोषणापत्र प्रसिद्ध किया वह पार्लिमेंट के वादविवाद की दूसरी बात है। यह घोषणापत्र अगली राज्यपद्धति का मुख्य आधार है, और उसमें प्रजा के हक साफ तौर से बतलाये गये हैं। महारानी विक्टोरिया ने भारतीय प्रजा के हकों की मानो यह एक प्रकार की सनद ही मुकर्रर कर दी है। इस घोषणापत्र में निम्नलिखित

बातों का समावेश हुआ है:-(१) हिन्दुस्थान के राजाओं से कम्पनी ने जो इकरार और सुलहनामे किये हैं, उनका अँगरेजी सरकार की ओर से अक्षरशः पालन किया जायगा। (२) सब को दत्तक लेने का हक दिया जाता है; सरकार उनके राज्य और पेंशनें जप्त करना चाहती। (३) राजेरजवाडों के दरजे और मानमरातबे का अँगरेजी सरकार की ओर से बराबर पालन किया जायगा। (४) धर्म और आचार-विचारों के विषय में सरकार हाथ नहीं डालेगी। (५) हिन्दुस्थान की नौकरियां, जाति और धर्म को मन में न लाकर, सब को समानता से दी जायंगी और (६) जिन बलवाइयों ने प्रत्यक्ष खून न किये होंगे और यदि वे शान्ति से बर्ताव करेंगे तो उनका अपराध माफ कर दिया जायगा। पहली तीन दफाएं राजाओं के विषय में, उनके आगे की दो दफाएं साधारण प्रजा के विषय में और अन्त की दफा बलवे में शामिल हुए लोगों के विषय में हैं। १ नवम्बर सन् १८५८ को इलाहाबाद में बड़ा भारी दरबार कर के लॉर्ड कॅनिंग ने वहां यह घोषणापत्र सब के आगे पढ़ सुनाया। इसके सिवा; सब देशी भाषाओं में इसका तर्जुमा हुआ और प्रत्येक मुकाम में बड़े समारम्भ से वह पढ़ा गया। तब कहीं बलवा शान्त हुआ।

सन् १७७३ में जो रेगुलेटिंग ऐक्ट प्रसिद्ध हुआ था, वही अँगरेजी राज्य-शासन का मूल आधार है। पिट के कायदे ने जो पद्धति डाल दी थी वह सन् १८५८ तक टिकी। सन् १८५८ में राज्य-प्रबन्ध का कायदा पार्लिमेन्ट ने बनाया और उसीके नियम से आजकल काम होरहा है।

खर्च और बढ गया। उसका प्रबन्ध करने के लिए पार्लिमेन्ट ने विल्सन् नामक प्रसिद्ध अर्थशास्त्रवेत्ता को हिन्दुस्थान में भेजा। उसने टिक्स के विषय में नये फेरफार किये। और लोगों की आमदनी पर नवीन कर बैठाया। इस प्रकार से उपर्युक्त घटी उसने पूरी की। व्यापार के सुभीते के लिए उसने सरकारी नोट जारी किये।

इसके बाद केनिंग ने देश में शान्ति स्थापित की, बलवे से निकले हुए अनेक प्रान्तों का फैसिला किया, और जगह जगह दरबार कर के लोगों को आश्वासन देकर उनके मन शान्त किये। इसके अलावा, डलहौसी ने लोकसुख के लिए जो बातें शुरू की थीं उनको आगे बढा कर केनिंग ने जारी रखा। इस प्रकार के काम कर के वह मार्च सन् १८६२ में स्वदेश को लौट गया। यहां की हैरानी से उसकी तबीयत बहुत बिगड गई थी। उसी साल जून महीने में उसका देहान्त हो गया। यही हिन्दुस्थान का पहला वाइसराय है।

पाठ चौदहवां।

ब्रिटिश वंश.

महारानी विक्टोरिया।

सन् १८५८-१९०१।

१. महारानी विक्टोरिया। २. पहले पांच वाइसराय।
३. दूसरा अफगान युद्ध। ४. आगे के चार वाइसराय।

१. महारानी विक्टोरियाः—हिन्दुस्थान के इतिहास में महारानी विक्टोरिया का शासनकाल बहुत स्मरण रखनेयोग्य है। इस शासनकाल में अनेक विषयों में देश की उन्नति हुई; लोग सज्ञान और सुखी हुए। महारानी को हिन्दुस्थान की प्रजा से अत्यन्त प्रेम था। २२ जनवरी १९०१ को महारानी का अन्त हुआ। उस समय लोगों को वैसा ही दुःख हुआ जैसा स्वयं अपनी माता के जाने पर होता है।

सन् १८५८ के घोषणापत्र से भारत का राज्य-प्रबन्ध महारानी के हाथ में आया। सन् १८७६ में पार्लिमेंट ने क़ायदा बनाकर महारानी को अपने नाम

के आगे चाहे जो पदवी लगाने की परवानगी दी। उसके अनुसार एप्रिल सन् १८७६ को विज्ञापनपत्र निकालकर "एंप्रेस ऑफ इंडिया" अर्थात् "भारत की महाराज्ञी" नामक खिताब विक्टोरिया ने धारण किया। और उसका महोत्सव १ जनवरी १८७७ को दिल्ली में हुआ।

महारानी की अमलदारी में दस प्रतिनिधियों ने हिन्दुस्थान का राजकाज किया। महारानी के इच्छानुसार उन सबों ने भारतीय प्रजा का परामर्श लेकर प्रत्येक विषय में उसकी उन्नति के प्रयत्न कायम रखे। प्रतिनिधि (वाइसराय) के राजकाज का विवेचन करने की आवश्यकता नहीं है। उनका सच्चा स्वरूप विद्यार्थी लोग थोड़े में नहीं समझ सकते, और उन पर ऐतिहासिक राय देने के लिए जितना समय व्यतीत होना चाहिए उतना नहीं हुआ। इस कारण सिर्फ इन प्रतिनिधियों के नाम और उनके राज्य-शासन की मुख्य मुख्य बातों ही का उल्लेख यहां किया जाता है।

२. पहिले पाँच वाइसराय:—

(१) लॉर्ड एल्गिन, (सन् १८६२–६३) शीघ्रही यहां आकर मर गया।

(२) लॉर्ड लारेन्स, (सन् १८६४–६९) भूटान से युद्ध हुआ। उत्तर-हिन्दुस्थान में जब अकाल पड़ा तब उसका निवारण करने के लिए प्रथम लार्ड लारेन्स ही ने उपाय निश्चित किये।

(३) लॉर्ड मेयो, (सन् १८६९–७२):—यह बहुत होशियार और परोपकारी था। उसने भिन्न भिन्न विभागों में कई सुधार किये। खेती सुधारने के लिए उसने नया महकमा खोला। और प्रान्तिक सरकार को जमाखर्च की कुछ मदें स्वतंत्र रीति से सौंप देने की पद्धति शुरू की। उसने इस देश में सड़कें, रेलगाड़ी और नहरें बनवाईं; और सार्वजनिक हित के अनेक काम किये। सन् १८७२ में एक कैदी के हाथ से अंडमान टापू में उनका खून होगया।

(४) लार्ड नार्थब्रुक, (सन् १८७२–७६):—इसके समय में बंगाल प्रान्त में अकाल पड़ा, उस समय उसने अच्छा इन्तिज़ाम रखा और लोगों को तकलीफ नहीं होने दी। सन् १८७५ में युवराज एडवर्ड भारत में आये। इस अवसर में देश भर में आनन्दोत्सव किये गये। सन् १८७६ में

अँगरेज सरकार ने मल्हारराव गायकवाड को पदच्युत करके वर्तमान महाराज सयाजीराव को गद्दी पर बैठाया।

(५) लार्ड लिटन, (सन् १८७६–८०):—यह बडा विद्वान् था। सन् १८७७ में दिल्ली में एक बडा भारी दरबार हुआ। दक्षिण-हिन्दुस्थान में भयंकर अकाल पडा। सरकार ने बहुत प्रयत्न किये। तथापि पचास लाख से अधिक मनुष्य काल के गाल में चले गये।

३. दूसरा अफगान युद्ध:—सन् १८४२ में दोस्त मुहम्मद काबूल लौट गया और गद्दी पर बैठाया गया। वह सन् १८६३ में मर गया। उसके बडे लडके अफजलखां को कैद कर के दूसरा एक लडका शेरअली गद्दी पर बैठा। अफजलखां का लडका अब्दुर्रहमान विशेष पराक्रमी था। उसने अपने बाप को कैद से छुडा कर गद्दी पर बैठाया। शेरअली भाग गया। बादको अफजलखां बहुत जल्द मर गया, और शेरअली फिर अफगानिस्तान का राजा बना। लार्ड मेयो के समय में शेरअली अम्बाला में आकर उससे मिला। उस समय बडा दरबार करके उसका स्वागत किया गया। १८७७ के करीब शेरअली ने अँगरेजों की दोस्ती छोड दी, और रूस के वकील को राजधानी में लाकर अँगरेजी वकील को काबुल में आने की मनाई कर दी। इस कारण हिन्दुस्थान पर रूस की चढाई होने की जो कारवाइयां शुरू हुई उन्हें बन्द करने के लिए अँगरेजों को अफगानिस्तान से युद्ध करना पडा। पहले की तरह अफगानिस्तान में फौजे भेज कर अँगरेजों ने सब घाटियों के नाके अपने अधिकार में कर लिये, (सन् १८७९)। शेरअली भाग गया। अँगरेजों ने उसके लडके याकूबखां से सुलह कर ली और सर लुई केवग्नारी नाम का अपना वकील काबुल भेज दिया। पर अफगानों ने उस वकील को मारही डाला। इस लिए फौज भेज कर अँगरेजों ने अफगानों से युद्ध किया। याकूबखां उनके अधीन हो गया। उसे उन्होंने भारत में लाकर रखा। इसके बाद काबुल और कंधार आदि शहर लेकर वहां उन्होंने अपनी फौज रख दी। यह देख कर काबुली लोगों ने बलवा किया। अँगरेजी फौज पर बडा कठिन प्रसंग आ पहुँचा। शूर सेनापति सर फ्रेड्रिक राबर्ट्स् अर्थात् वर्तमान लार्ड राबर्ट्स् बहुत जल्द अफगानिस्तान गया, और अँगरेजी फौज को छुडाया। उसने अनेक बार अफगान फौजका पराजय करके अब्दुर्रहमान को अफगानिस्तान का

अमीर कबूल किया; और अँगरेजी फौज लौट आई, (सन् १८८१)। यह युद्ध गवर्नर जनरल लिटन के समय में शुरू हुआ, और लार्ड रिपन के समय में खतम हुआ।

४. आगे के चार वाइसराय:—(१) लार्ड रिपन, (सन् १८८०–१८८४):—यह सन् १८८० में भारतवर्ष में आया। सन् १८८१ में जब अफगानिस्तान का युद्ध बन्द हुआ, और चारों ओर शान्ति हुई तब लार्ड रिपनको हिन्दुस्थान में अनेक सुधार करने का अच्छा मौका मिला। समाचारपत्रों को सरकारी कामों के विषय में चर्चा करने की मनाई थी। लार्ड रिपन ने यह अड़चन दूर कर दी। वह चाहता था कि, भारत में शिक्षा का प्रचार इतना हो कि, जिससे गरीबों को भी शिक्षा मिले। इसकी जांच के लिए उसने एक कमिशन नियत किया, और उसकी सूचना के अनुसार शिक्षा-विभाग में उपयुक्त फेरफार करके निजी पाठशालाओं को उत्तेजन दिया। हिन्दू न्यायाधीशों में से जो लोग ऊंचे दर्जे के अधिकारी थे, उन्हें यूरोपियन अपराधियों की जांच करने के लिए उसने अधिक अधिकार दिये। उसने स्थानिक स्वराज्य की व्यवस्था निश्चित करके म्युनिसिपैलिटी का कानून बनाया, और सब बड़े बड़े शहरों में म्युनिसिपैलिटियां स्थापित कीं, और उनका प्रबन्ध देशी लोगों के हाथ में दिया। लार्ड रिपन पर भारतीय प्रजा की विशेष भक्ति थी।

अँगरेज सरकार ने मल्हारराव गायकवाड को पदच्युत करके वर्तमान महाराज सयाजीराव को गद्दी पर बैठाया ।

(५) लार्ड लिटन, (सन् १८७६–८०):—यह बडा विद्वान् था। सन् १८७७ में दिल्ली में एक बडा भारी दरबार हुआ । दक्षिण-हिन्दुस्थान में भयंकर अकाल पडा । सरकार ने बहुत यत्न किये । तथापि पचास लाख से अधिक मनुष्य काल के गाल में चले गये ।

३. दूसरा अफगान युद्धः—सन् १८४२ में दोस्त मुहम्मद काबुल लौट गया और गद्दी पर बैठाया गया । वह सन् १८६३ में मर गया । उसके बडे लडके अफजलखां को कैद कर के दूसरा एक लडका शेरअली गद्दी पर बैठा । अफजलखां का लडका अब्दुर्रहमान विशेष पराक्रमी था । उसने अपने बाप को कैद से छुडा कर गद्दी पर बैठाया । शेरअली भाग गया। बादको अफजलखां बहुत जल्द मर गया, और शेरअली फिर अफगानिस्तान का राजा बना । लार्ड मेयो के समय में शेरअली अम्बाला मे आकर उससे मिला । उस समय बडा दरबार करके उसका स्वागत किया गया । १८७७ के करीब शेरअली ने अँगरेजों की दोस्ती छोड दी, और रूस के वकील को राजधानी में लाकर अंगरेजी वकील को काबुल में आने की मनाई कर दी। इस कारण हिन्दुस्थान पर रूस की चढाई होने की जो कारखाइयां शुरू हुई उन्हें बन्द करने के लिए अंगरेजों को अफगानिस्तान से युद्ध करना पडा। पहले की तरह अफगानिस्तान में फौजे भेज कर अँगरेजों ने सब घाटियों के नाके अपने अधिकार में कर लिये, (सन् १८७९)। शेरअली भाग गया। अँगरेजों ने उसके लडके याकूबखां से सुलह कर ली और सर लुई केवगनारी नाम का अपना वकील काबुल भेज दिया । पर अफगानों ने उस वकील को मारही डाला । इस लिए फौज भेज कर अँगरेजों ने अफगानों से युद्ध किया। याकूबखां उनके अधीन हो गया । उसे उन्होंने भारत में लाकर रखा । इसके बाद काबुल और कंधार आदि शहर लेकर वहां उन्होंने अपनी फौज रख दी। यह देख कर काबुली लोगों ने बलवा किया । अँगरेजी फौज पर बडा कठिन प्रसंग आ पहुँचा । शूर सेनापति सर फ्रेड्रिक राबर्ट्स् अर्थात् वर्तमान लार्ड राबर्ट्स् बहुत जल्द अफगानिस्तान गया, और अँगरेजी फौज को छुडाया । उसने अनेक बार अफगान फौजका पराजय करके अब्दुर्रहमान को अफगानिस्तान का

अँगरेज सरकार ने मल्हारराव गायकवाड को पदच्युत करके वर्तमान महाराज सयाजीराव को गद्दी पर बैठाया।

(५) लार्ड लिटन, (सन् १८७६-८०):—यह बडा विद्वान् था। सन् १८७७ में दिल्ली में एक बडा भारी दरबार हुआ। दक्षिण-हिन्दुस्थान में भयंकर अकाल पडा। सरकार ने बहुत प्रयत्न किये। तथापि पचास लाख से अधिक मनुष्य काल के गाल में चले गये।

२. दूसरा अफगान युद्धः—सन् १८४२ में दोस्त मुहम्मद काबूल लौट गया और गद्दी पर बैठाया गया। वह सन् १८६३ में मर गया। उसके बडे लडके अफजलखां को कैद कर के दूसरा एक लडका शेरअली गद्दी पर बैठा। अफजलखां का लडका अब्दुर्रहमान विशेष पराक्रमी था। उसने अपने बाप को कैद से छुडा कर गद्दी पर बैठाया। शेरअली भाग गया। बादको अफजलखां बहुत जल्द मर गया, और शेरअली फिर अफगानिस्तान का राजा बना। लार्ड मेयो के समय में शेरअली अम्बाला में आकर उससे मिला। उस समय बडा दरबार करके उसका स्वागत किया गया। १८७७ के करीब शेरअली ने अँगरेजों की दोस्ती छोड दी, और रूस के वकील को राजधानी में लाकर अँगरेजी वकील को काबुल में आने की मनाई कर दी। इस कारण हिन्दुस्थान पर रूस की चढाई होने की जो कारवाइयां शुरू हुई उन्हें बन्द करने के लिए अँगरेजों को अफगानिस्तान से युद्ध करना पडा। पहले की तरह अफगानिस्तान में फौजे भेज कर अँगरेजों ने सब घाटियों के नाके अपने अधिकार में कर लिये, (सन् १८७९)। शेरअली भाग गया। अँगरेजों ने उसके लडके याकूबखां से सुलह कर ली और सर लुई केवगूनारी नाम का अपना वकील काबुल भेज दिया। पर अफगानों ने उस वकील को मारही डाला। इस लिए फौज भेज कर अँगरेजों ने अफगानों से युद्ध किया। याकूबखां उनके अधीन हो गया। उसे उन्होंने भारत में लाकर रखा। इसके बाद काबुल और कंधार आदि शहर लेकर वहां उन्होंने अपनी फौज रख दी। यह देख कर काबुली लोगों ने बलवा किया। अँगरेजी फौज पर बडा कठिन प्रसंग आ पहुँचा। शूर सेनापति सर फ्रेड्रिक राबर्ट्स् अर्थात् वर्तमान लार्ड राबर्ट्स् बहुत जल्द अफगानिस्तान गया, और अँगरेजी फौज को छुडाया। उसने ...क बार अफगान फौजका पराजय करके अब्दुर्रहमान को अफगानिस्तान का

अमीर कबूल किया; और अँगरेजी फौज लौट आई, (सन् १८८१)। यह युद्ध गवर्नर जनरल लिटन के समय में शुरू हुआ, और लार्ड रिपन के समय में खतम हुआ।

४. आगे के चार वाइसराय:—(१) लार्ड रिपन, (सन् १८८०–१८८४):—यह सन् १८८० में भारतवर्ष में आया। सन् १८८१ में जब अफगानिस्तान का युद्ध बन्द हुआ, और चारों ओर शान्ति हुई तब लार्ड रिपनको हिन्दुस्थान में अनेक सुधार करने का अच्छा मौका मिला। समाचारपत्रों को सरकारी कामों के विषय में चर्चा करने की मनाई थी। लार्ड रिपन ने यह अड-चन दूर कर दी। वह चाहता था कि, भारत में शिक्षा का प्रचार इतना हो कि, जिससे गरीबों को भी शिक्षा मिले। इसकी जांच के लिए उसने एक कमिशन नियत किया, और उसकी सूचना के अनुसार शिक्षा-विभाग में उपयुक्त फेर-फार करके निजी पाठशालाओं को उत्तेजन दिया। हिन्दू न्यायाधीशों में से जो लोग ऊंचे दर्जे के अधिकारी थे, उन्हें यूरोपियन अपराधियों की जांच करने के लिए उसने अधिक अधिकार दिये। उसने स्थानिक स्वराज्य की व्यवस्था निश्चित करके म्युनिसिपेलिटी का कानून बनाया; और सब बडे बडे शहरों में म्युनिसिपेलिटियां स्थापित कीं, और उनका प्रबन्ध देशी लोगों के हाथ में दिया। लार्ड रिपन पर भारतीय प्रजा की विशेष भक्ति थी।

(२) लार्ड डफरिन् (सन्१८८४–८८):—यह बडे विद्वान् राजनीतिज्ञोंमें प्रसिद्ध था। इसके जमानें मे उत्तर-ब्रह्मा के राजा थीबा ने अँगरेजों से द्वेषभाव रखना शुरू किया, इस लिए उसके साथ युद्ध करके अँगरेजों ने ब्रह्मा का मुल्क जीत लिया; थीबा राजा को पदच्युत करके रत्नागिरी में रख दिया। और पहली जनवरी सन् १८८६ को ब्रह्मा का देश अँगरेजी राज्य में मिला लिया गया। सन् १८८६ में ब्रिटिश सरकार ने ग्वालियर का किला सेंधिया को लौटा दिया। सन् १८८७ में महारानी विक्टोरिया की पचासवीं वर्षगांठ का महोत्सव (जुबिली) सारे भारत में हुआ। सन् १८८८ में विलायत लौट जाने पर लार्ड डफरिन की स्त्री लेडी डफरिन के नाम से चन्दा इकट्ठा किया गया, और उसी धन से भारत की स्त्रियों के लिए दवाखाने खोले गये।

(३) लार्ड लेन्सडौन्, (सन् १८८९–९४):—सन् १८८६ से भारतीय लोगों की राष्ट्रीय सभा—नॅशनल काँग्रेस—बम्बई, कलकत्ता, लाहोर, मद्रास,

इलाहाबाद आदि शहरों में होती रहती है । यह सभा इस प्रकार के अधिकार मांगती है कि, गवर्नर्स और गवर्नर जनरल की कौंसिलों में लोगों के द्वारा चुने हुए सभासद रहें । इसी अनुसार १८९२ में प्रत्येक इलाके की कौंसिल में लोकनियुक्त सभासद लेने का प्रबन्ध शुरू हुआ।

(४) लार्ड एलिगन, (सन् १८९४-९९):—यह पहले के लार्ड एल्गिन का लडका है । उसके जमाने में वायव्य की सरहद के टिरा प्रान्त के अफ्रीदियों के साथ अँगरेजों का युद्ध हुआ। इसीके समय में हिन्दुस्थान में भयंकर प्लेग उत्पन्न हुआ, जो आज सारे भारत में फैला हुआ है । ब्रह्मदेश की ओर अँगरेज और फ्रेंचों की सत्ता की मर्यादा निश्चित की गई । सन् १८९५ में चित्राल रियासत की गद्दी के वारिस के विषय में झगडे उपस्थित हुए । वहां का अँगरेज अधिकारी किले में रहाता था । विरुद्ध पक्ष की फोज ने किले को घेर लिया। उसका बन्दोबस्त करने के लिए पंजाब से फोज रवाना हुई। पर उसके पहुंचने से पहले ही घेरनेवालों ने किले को छोड दिया, और उस प्रान्त में अँगरेजी अमलदारी जारी हुई। सन् १८९७ महारानी विक्टोरिया के राजशासन के ६० वर्ष पूर्ण हो गये, इस लिये इस वर्ष सुवर्णजुबिलीमहोत्सव सर्वत्र किया गया।

पाठ पन्द्रहवाँ।

महाराज सप्तम एडवर्ड।

(सन् १९०१-१९१०)

१. सप्तम एडवर्ड, १९०१-१०। २. लॉर्ड कर्जन, १८९८-१९०५। ३. लॉर्ड मिंटो १९०५-१९१०।

१. सप्तम एडवर्ड:—सन् १९०१ में महारानी के देहान्त होने पर उनके बडे बेटे सातवें एडवर्ड ने राज्यपद धारण किया । उसके उपलक्ष में दिल्ली में पहली जनवरी सन् १९०३ को बडा भारी दरबार किया गया। उस अवसर पर महाराज ने भारत की प्रजा और देशी राजाओं के लिए "सहानुभूतिदर्शक संदेश"

भेजा। उसमें उन्होंने लोकहित के विषय में अपनी अत्यन्त सहानुभूति दिखाई है। २ नवम्बर सन् १९०८ को महारानी विक्टोरिया के पहले घोषणापत्र का आधा शतक पूरा हुआ। उसकी पुनरावृत्ति करने के लिए उस दिन महाराज ने फिर भी "सहानुभूति का संदेश" भारतीय प्रजा के पास भेजा। उसका स्मरण अभी ताजा ही है। उसमें महाराज ने भारत के राज्यशासन के विषय में अपने विचार प्रकट किये हैं।

महाराज सप्तम एडवर्ड के समय में निम्न लिखित प्रतिनिधि भारत में राज-काज करते थे।

२. लॉर्ड कर्जन, (सन् १८९८–१९०५):—यह विद्वान लेखक और उत्तम वक्ता था, तथा तेज होशियार और मिहनती था। राजकारबार के हरएक विषय में उसने ध्यान दिया, और जैसी जरूरत उसे मालूम हुई वैसे सब विभागों में फेरफार किये। सन १९०३ के राज्यारोहण सम्बन्धी दरबार के अवसर पर उनने ब्रिटिश सत्ता की और ऐश्वर्य की अप्रतिम प्रदर्शिनी की। देशभर में विद्वान लोगों का एक कमिशन घुमाया, और विश्वविद्यालय के कामों की जांच करा कर उसने शिक्षा का नवीन प्रबन्ध निश्चित किया। बंगाल इलाके का विस्तार बहुत बडा होजाने से जब करकारी काम में अडचन पडने लगी तब उसे दूर करने के लिए उसने उसके दो भाग किये। उसे 'बंगभंग' कहते हैं। उनसे वायव्य सरहद् का प्रदेश अलग करके एक नवीन प्रान्त बना डाला, और तिब्बत में व्यापारी आमदनी बढाने के लिए एक मिशन भेजा। भारत की प्राचीन इमारतों का अच्छी तरह संरक्षण करने के लिए लॉर्ड कर्जन ने एक कायदा बनाया, और इस विषय में नवीन प्रबन्ध जारी किया, इस अत्यंत लाभदायक व्यवस्था के लिये, सब लोक उनका धन्यवाद करेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं। सन १९०५ के नवम्बर में युवराज और युवराज्ञी हिन्दुस्थान में आये। उनका स्वागत करके लॉर्ड कर्जन विलायत चला गया।

३. लॉर्ड मिन्टो, (सन १९०५–१९१०):—आज सौ वर्ष से इस देश पर अँगरेज राज्य करते हैं। इतनी अवधि में उन्होंने जो काम यहां किये, उनके विषय में बहुत मतभेद है। तथापि इस राज्य से यह बडा फायदा इस देश को हो रहा है कि, सरकार भारत में पश्चिमी विद्या का प्रारम्भ करके सब लोगों को ज्ञानामृत पिला रही है, इस बात में संशय नहीं कि, इससे अँगरेजी

सरकार की कीर्ति और धन्यता भूतल पर कायम रहेगी। ज्ञानवृद्धि के कारण लोगों के मन में नवीन आशा उत्पन्न हुई है, और राज्य-शासन का काम विकट हो गया है। इस विकट कर्तव्य का बोझा लार्ड मिंटो के सिर पर आ पड़ा है। वे धीमी चाल से और लोकहित की दृष्टि से राजकाज कर रहे हैं। सुशिक्षित लोगों की इच्छा पूर्ण करने के लिए स्टेट सेक्रेटरी लार्ड मोर्ले और वाइसराय लार्ड मिंटो ने, राज्य-प्रबन्ध में लोकमत का समावेश करने के लिए कायदेकोन्सिलकी नवीन योजना सुरू की है, इस लिए सब लोगों का ध्यान इस बात की ओर लगा है कि, इस प्रयोगका देखें अब क्या फल होता है।

६ मई १९१० को महाराज सप्तम एडवर्ड का अन्तकाल हो गया। उनके बडे बेटे पांचवे जार्ज के नाम से गद्दी पर बैठे हैं। वाइसराय लॉर्ड मिंटो के कारबार की मुद्दत नवम्बर १९१० में खतम हुई। उनकी जगह में सर चार्ल्स ऊर्फ लार्ड हार्डिंग नियत किये गये हैं। लॉर्ड एल्गिन, लार्ड मिंटो और सर चार्ल्स हार्डिंग नाम के जो गवर्नर जनरल पहले हुए उन्हीं के ये सब वंशज हैं, और भारत के विषय में उनकी सहानुभूति पैतृक है।

पाठ सोलहवाँ।

महाराज पंचम जार्ज।

सन् १९१०।

१. महाराज पंचम जार्ज।	२. लार्ड हार्डिंज का कर्तृत्व।
३. युरोपियन राष्ट्रों की स्पर्धा।	४. युरोप में महासंग्राम।
५. इंग्लैंद का युद्ध में संमिलित होनेका कारण।	६. हमारा कर्तव्य।
	७. इतिहास ज्ञान का निष्कर्ष।

१. महाराज पंचम जार्जः—महाराज पंचम जार्ज सन १९१० के मई मास में सिंहासनारूढ हुये। राज्यारोहण महोत्सव इंग्लैंद में सन १९११ के जून मास में हुआ, और भारत वर्ष में सन् १९११ के दिसंबर मास को १२ तारीख़ को देहली नगरी में हुआ; जिसमें आपने स्वयं पधारकर अपने राज्यारोहण की घोषणा भारतजनता को दी थी। इस राजदरबार में भारत के १३५ संस्थानाधिपति सम्मिलित थे। अमेरिका, इंग्लैंद, जापानादि भारतभिन्न देशों से अनेक

अतिथि और दर्शक लोग पधारे थे। इस दिन सब प्रांतों के निवासियों ने एक महोत्सव करके अपनी राजनिष्ठा व्यक्त की थी। इस समय महाराज की ओरसे प्रजाको जो अधिकार दिये गये थे, और जिन जिन राजकीय कार्यों में परिवर्तन किये गये थे उनमे से मुख्य निम्नलिखित हैं:—

(१) लार्ड कर्जनद्वारा किये हुये "वंगभंग" को रद्द करके वंगला भाषा-भाषियों का एक स्वतंत्र प्रान्त बना कर उसपर एक स्वतंत्र गवर्नर नियत किया गया। (२) बिहार, उडीसा, छोटा नागपुर प्रांतों पर शासक सभा (एक्झि-क्यूटिव्ह कौन्सील) के साथ एक लेफ्टिनंट गवर्नर नियत किया गया। (३) आसाम प्रान्त के शासन के लिये भारतीय सरकार के निरीक्षण में पूर्व-वत् एक कमीश्नर नियत किया गया। (४) भारत वर्ष की राजधानी देहली नगर को बनाया गया। (५) शिक्षा प्रचार के लिये ५० लक्ष रुपया अधिक व्यय करना स्वीकृत हुआ, और आगे भी अधिक व्यय किया जाने का पूर्ण विश्वास दिलाया गया। (६) प्राचीन विद्याओं को उत्तेजित करने के लिये "महामहोपाध्याय" और "शम्सुलुल्मा" पदवियों के धारण करने-वाले भारतियोंको वार्षिक पारितोषिक देनेका नियम किया गया। (७) रियासती राजाओं से नजराना लेना वंद किया गया। इसके अतिरिक्त अन्य कई अधिकार दिये गये, और ११,५०० के लगभग केदी मुक्त किये गये। महाराज और महारानी भारतवर्षमें ता. २ दिसम्बर १९११ से ता. १० जनवरी १९१२ तक रहे। भारतीय जनताकी राजानिष्ठा देख कर महाराज और महारानी बहुतहि सन्तुष्ट हुए। अतएव उनके बंवई, देहली, कलकत्ता नगरों में समय समय पर दिये हुये व्याख्यानों में अपनी प्रजा के प्रति सहृदयता, स्नेह और औदार्य का प्रदर्शन भक्तिप्रकार हुआ था। लार्ड हार्डिंग भी महाराज के भांति प्रेमपूर्वक प्रजामत को सन्मान देकर राजकार्य करते थे। इस लिये भारतीय जनता के लिये वह चिरस्मरणीय रहेंगे इस में कुछ भी संदेह नहीं।

२. लार्ड हार्डिंग की कर्तृत्वशक्तिः—लार्ड हार्डिंग जैसे सज्जन शासन के मिलने पर भारतियों को अपना सौभाग्य समझना चाहिए। इन्होंने अपनी सारी आयु परराष्ट्रीय कार्य-व्यवहार में व्यतीत की थी। यह पहले रूस के राजदरवार में इग्लेंड के राजदूत का कार्य करते थे। भूतपूर्व महाराज एडवर्ड सप्तम यूरोप के शांतिस्थापना करनेवालों में अग्रगण्य थे, अतएव उन्हें ऐतिहासिक लोग "शांतिस्थापक" विशेषण देते हैं। जब वे युरोप के बडे बडे राजाओं के पाश शांतिस्थापना के लिये जाते थे; तब लार्ड हार्डिंग उन्ही के दाहिने हाथ हो कर कार्य करते थे। इसी कर्तृत्वशक्ति को देख कर वे यहां भेजे गये थे। वर्तमान महाराज भी अपने पिता की निर्दिष्ट कार्य-दीक्षा को

लक्ष्य कर उन्ही के चरण चिन्हों पर चलने का यत्न कर रहे हैं । तात्पर्य यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों में अत्यंत प्रवीण हार्डिंग महोदय अपनी प्रजा को सन्तुष्ट करते हुए, अपने देश की सुकीर्ति की वृद्धि करने का यत्न करते रहे। सन् १९१२ के दिसम्बर मास में नवीन राजधानी देहली में प्रवेश करते हुए किसी दुष्ट पागल मनुष्यनें बंब का गोला गिराकर उनकी जान लेने की चेष्टा की। अपने प्राणों पर संकट आने पर भी उन्होंनें अपने शांत स्वभाव में किञ्चिन्मात्र भी भेद नहीं डाला । इतना ही नहीं, अपि तु वे भारतियों पर पूर्ववत् विश्वास रख कर प्रारम्भ किये हुये लोकोपकारक कार्य चलाते रहे । ऐसेहि सज्जन, शांत, कार्यधुरंधर पुरुषों की चतुरता के कारण इंग्लैंड का भाग्योदय संपूर्ण पृथ्वीमंडल पर आज स्थिर होगया है ।

३. युरोपियन राष्ट्रों की स्पर्धा:—कई वर्षों सें युरोप के भिन्न भिन्न राष्ट्रों में व्यापार और उपनिवेश के विषय में बहुत स्पर्धा चली आती है । इंग्लैंद देश एक द्वीप है, जिसके चारों ओर समुद्र है । समुद्र के पारसे दैनिक आवश्यकताओंकी पूर्ती का सामन लाने के लिए, उन जलमार्गों की रक्षा के लिये, और समस्त भूमंडलके विस्तृत सामराज्य की रक्षा के लिये इंग्लैंद को व्यापारी और लडाऊ जहाज हर समय तैयार रखने आवश्यक है। इस कारण जर्मनी आदि कई राष्ट्र निष्कारण मनमें जलते रहते हैं । जर्मनी नें स्वराष्ट्रीय लोगों को अनिवार्य सैनिक शिक्षा के लिये बाधित करके बडीभारी सेना तैयार की । इस सैनिक शक्ति के आधार पर, दुर्बल राष्ट्रों को पादाक्रांत कर के अपना अधिकार और धनवृद्धि का प्रयत्न करने की इछा जर्मन राष्ट्र कई वर्षों से कर रहा है। इस कारण युरोप की शांति का भंग होकर युद्धाग्नि का प्रज्वलित होना बहुत ही संभव था । इंग्लैंड कई शताब्दियों से " निर्बल-राष्ट्रों का रक्षक " रहा है, और यूरोपीयन राष्ट्रों में बलकी समानता द्वारा युरोप में शांति की स्थिरता रखने का व्रत इंग्लैंड ने कई वर्षों से स्वीकारा हुआ है। ग्रीस और इटली यद्यपि निर्बल थे तथापि इनकी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए इसने ही सहायता दी थी। चारों ओर से प्रबल राष्ट्रों के आक्रमण होने पर भी तुर्किस्थान जैसा निर्बल राष्ट्र इसके ही सहायता के कारण, स्वतंत्र रहा था। इसी शुभभावना से इंग्लैंड अबभी वर्तमान युद्ध में सम्मिलित हुआ है ।

जर्मनी नें सैन्य और लडाऊ जहाजों का बेडा बहुत बढाकर और इसी सैनिक सामर्थ्य पर अपने राष्ट्र की अधिकार वृद्धि के भाव से प्रेरित हो कर शिक्षा, समाचारपत्रों और अन्य साधनों द्वारा लोगों में विलक्षण उत्साह उत्पन्न किया। ऐसा करना बडा हानिकारक है। यह उपदेश इंग्लंड जर्मनी को पांच, दस सालों से करता रहा; परन्तु वह उपदेश निष्फळ हुआ। इसी हेतु से महाराज

एडवर्ड ने युरोप के राष्ट्रों से मित्रता या सन्धि की जर्मनी के आंखों में, फ्रांस रशिया की इंग्लेंड के साथ मैत्री, बहुत ही चुभने लगी। और उस ने इस संघ के नाश के लिए प्रयत्न प्रारंभ किया। जल और स्थल दोनों प्रकार की सेना तयार करने की स्पर्धा में भिन्न भिन्न राष्ट्रों की बहुत संपत्ति नष्ट होने लगी। इस स्पर्धा का भावी भयानक फल सोचकर प्रत्येक राज नैतिक पुरुष आगामि भय की चिंतासे ग्रस्त होने लगा।

४ युरोपमें महायुद्ध का प्रारम्भः—(ता. १ अगस्त सन १९१४ ई.) ऐसी अवस्थामें ता. २८ जून सन १९१४ के दिन आस्ट्रिया के युवराज आर्च-ड्युक फ्रांसिस फर्डिनंड और उनकी पत्नी का सराजिव्हो नगरी में खून होगया। यह खून सर्विया की प्रेरणासे हुए थे, ऐसा सिद्ध होनेपर आस्ट्रिया के बादशहाने सर्विया के पास अन्तिम शर्तों का प्रस्ताव भेजकर २४ घण्टों के भीतर भीतर उत्तर मांगा। इन में कई एक अपमान जनक शर्तें थीं। सार्विया और रशिया के प्रजाजन एकही जाती के थे, इस लिये सार्विया को रशिया की सहायता थी। तथापि रशिया की सन्मति से सर्वियानें अनेक शर्तें स्वीकृत कर लीं, परंतु राष्ट्रको कलंक लगानेवाली एक दो शर्तें स्वीकृत न कीं थीं। इधर आस्ट्रियाको जर्मनी का सहाय था। अपनी धाक से शांतिमय उपायों द्वाराहि इस विवादका निर्णय करने के लिये जर्मनी को प्रेरित करने की परांकाष्ठा इंग्लैंड ने की; परंतु इसमें जर्मनीका अभिमान हरबातमें झलकने लगा। "यदि रूस सार्विया को सहायता देगा तो मैं रूसपर चढाई करूंगा" ऐसी जर्मनीने धमकी दी। इधर फ्रांस और रशियाकी सुलह के कारण रूसने फ्रान्स की सहायता मांगी, और सुलह के अनु-सार मदत करना फ्रांस को आवश्यक हुआ। "यदि फ्रान्स युद्धमें सम्मिलित हुआ तो मैं बिल्जियम में से एकदम फ्रान्सपर आक्रमण करूं गा" ऐसा जर्म-नीनें घोषित किया। इस से छोटे परंतु वीरशाली बिल्जियम राष्ट्रका नाश निश्चित प्राय ही हो गया। सब राष्ट्रोंद्वारा किया हुआ बिल्जियम की स्वतंत्रता स्थिर रखनेका समझोता सन १८२९ से प्रचलित था। परंतु उसका भंग करके जर्मनीने बिल्जियमपर एकदम चढाई की।

५ इंग्लैण्डका युद्ध में संमिलित होने का प्रयोजन—सब समझौते और राजनीति के सिद्धांतों की ओर कुछ भी ध्यान देकर केवल सैनिक बल के उन्माद से जर्मनीनें बिल्जियमपर चढाई की। उस समय उसने इंग्लेण्ड से सहायता मांगी। इस समय सहायता न देना इंग्लैंड के नाम को कलंकित करता, और यदि बिल्जियम पादाक्रांत होगया, तो आगे जर्मनी इंग्लैंड पर आक्रमण कर देगा, यह जान कर दुर्बल राष्ट्रों की रक्षा के लिये और साम्राज्य के गौरव की रक्षा के लिये इंग्लैंड को अत्यंत

नाखुषी से इस महासंग्राम में सम्मिलित होना पडा । इस युद्ध का प्रारंभ ता. १ अगस्त सन १९१४ से हुआ ।

६. हमारा कर्तव्यः—भारत देश पर इंग्लैंड के अनेक उपकार हैं । इंग्लैंडका हिंदुस्थान के साथ संबंध जोडने में परमेश्वर का उद्देश भारत का उपकारहि प्रतीत होता है । हमारा भविष्यकाल इंग्लैंड पर ही अवलंबित है । इंग्लैंड के सहाय के विना हिंदुस्थान का कार्य एक क्षण भर भी चल नहीं सकता । यही जान कर और भली प्रकार समझ पर सब हिंदी लोग, संस्थानाधिपति, शूरवीर, और प्रजाजन इस संकट के प्रसंग में साम्राज्यरक्षा के लिये इंग्लैंड की सहायता करने के लिये सिद्ध होगये । आज भारतीय शूरवीर युरोप के रणक्षेत्र में युरोपियनों के बराबर पराक्रम करके अनंत कीर्ति संपादन कर रहे हैं, और अपनी अव्याहत राजनिष्ठा व्यक्त कर रहे हैं । ऐसा करना भारतीयों के लिये बडा भूषण है, और इसके लिये इंग्रज सरकार भी भारतियों का बडा धन्यवाद गा रही है । ब्रिटिश साम्राज्य का अभेद्य ऐक्य इस युद्ध के कारण जगत् में उत्कृष्ट रीती से प्रकट होगया है, और इसी कारण इंग्लैंड इस युद्ध में यशस्वी होगा इस में कुछ भी संदेह नहीं है ।

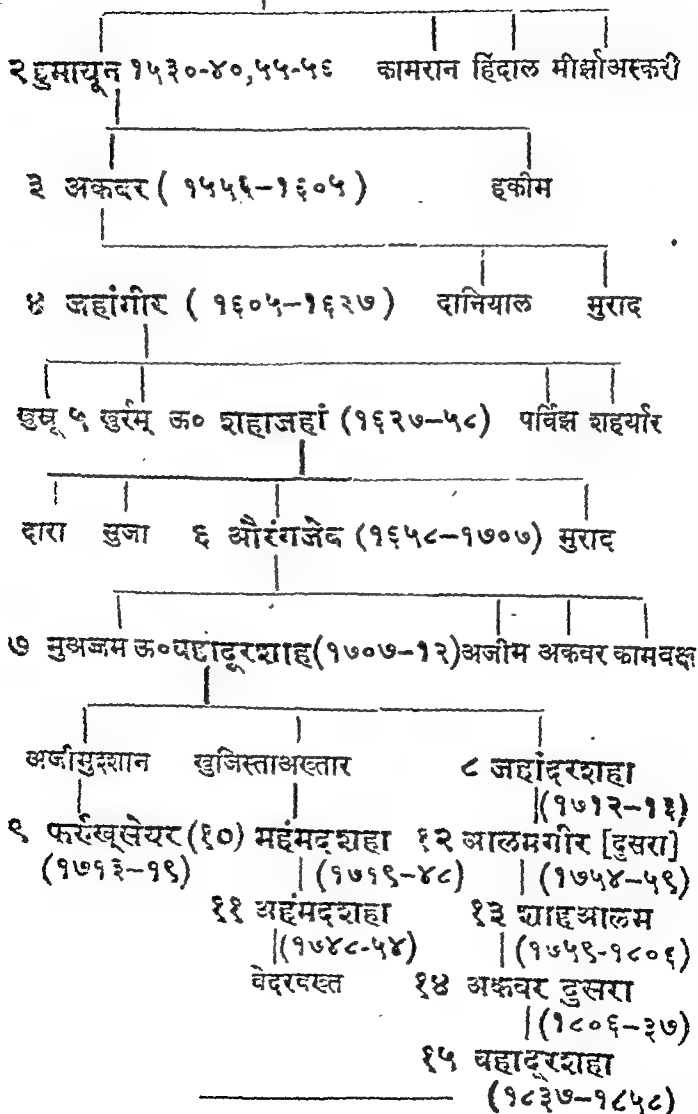
७. इतिहास ज्ञान का निष्कर्षः—बालको ! तुह्मारा इतिहास यहां समाप्त हुआ । तुह्में इस बात का चिंतन करना चाहिए कि, नवीन महाराज पाँचवे जार्ज चिरायु हों, और उन का शासन लोगों के लिए सुखकर हो । उन के विषय में तुम अपने मन में राजनिष्ठा कायम रखो । अँगरेजी अमलदारी में ज्ञानज्योति का विलक्षण प्रकाश देश में फैल रहा है, और पांच हजार मील दूरवाले भाग्यशाली अँगरेजी राष्ट्र का भारत से जो सम्बन्ध हुआ है, इसमें सृष्टिकर्ता का कोई न कोई भीतरी उदात्त उद्देश अवश्य है । इस लिए तुम लोग इस बात पर विश्वास रखो कि, ऐसा अच्छा मौका बडे भाग्य से ही मिलता है । तुम बडे होने पर राजकर्ताओं को संतोष पूर्वक मदद करो, और उनसे मिलकर अपना और अपने प्यारे देश का अभ्युदय कर लो । इतना बोध, पिछला सब इतिहास पढ कर, तुम यदि अपने ध्यान में रखोगे तो तुह्मारा सब का कल्याण होगा ।

समाप्त.

परिशिष्ट—अ.

वंशावली।

मुगल बादशाह।



सतारा के छत्रपति।

मालोजी और दीपाबाई (सन १५५०-१६१९)

शहाजी और जिजाबाई (सन १५९४-१६६४)

१ छत्रपति शिवाजी (ज० स० १६२७, रा० १६७४-८०).
(सईबाई) (सोयराबाई)

संभाजी. व्यंकोजी (तंजोर का वंश.

२ संभाजी (स.१६८०-८९) ३ राजाराम (स.१६८९-१७००)
येसूबाई. ताराबाई. राजसबाई.

५ शाहू (स.१७०८-४९)

कोल्हापूर का वंश

६ रामराजा दत्तक (स.१७४९-७७). ४ शिवाजी (दूसरा) १७००-१७१२ १ संभाजी १७१२-६०

७ दूसरा शाहू स. (१७७७-१८०८) रामराजा (शाहूको दत्तक)

२ शिवाजी द. (१७६०-१८१२)

८ प्रतापसिंह. (१८०८-३९) ९ शहाजी (१८३९-४८)

३ संभाजी आबासा. (१८१२-२१) ४ शहाजी बुवासा. (१८२२-३८)

५ शिवाजी ल. काशीबाई. (१८३८-६६)

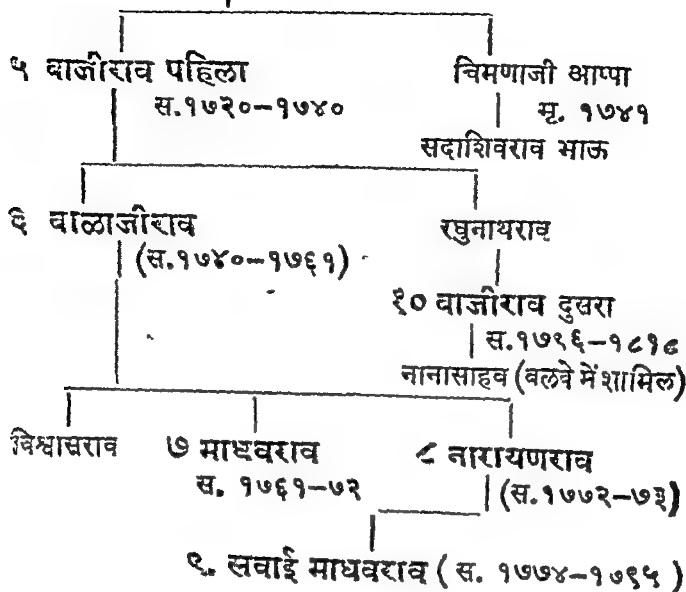
६ राजाराम द. (१८६६-७०)

७ शिवाजी द. (१८७०-८३)

वर्तमान शाहू छत्रपति द. (१८८३-चालू).

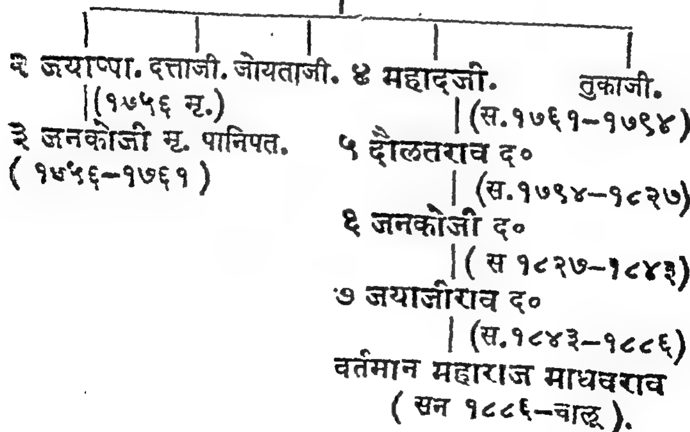
सतारा के छत्रपति के पेशवा।

४ बाळाजी विश्वनाथ भट्ट (सन १७१३–१७२०)



ग्वालियर के सेंधिया।

१ राणोजी मृ० १७५०.



बडोदा के गायकवाड ।

१ दमाजी (मृ. १७२०)

२ पिलाजी (स. १७२०–३२)

३ दमाजी (स. १७३२–१७६८)

५ गोविंदराव (१७९२–१८००) ४ सयाजीराव (१७६८–१७९२) फत्तेसिंगराव मानाजी

(गोविंदराव के पुत्र:) ६ आनंदराव स. १८००–१९) फत्तेसिंग ७ सयाजीराव (स. १८१९–१८४७)

(सयाजीराव के पुत्र:) ८ गणपतराव स. १८४७–५६) ९ खंडेराव (स. १८५६–७१) १० मल्हारराव (स. १८७१–७५)

वर्तमान महाराज सयाजीराव द. (स. १८७५–चालू)

इंदौर के होळकर ।

१ मल्हारराव होळकर (गौतमाबाई) मृ. १७६५

२ खंडेराव मृ. १७५४ – अहल्याबाई (स.१७६७–१७९५)

३ तुकोजी (स. १७९५–१७९७)

काशीराव मल्हारराव ४ यशवंतराव(१७९७–१८११) विठोजीराव

५ मल्हारराव (१८११–३३); ६ हरिराव (१८३३–४३);
७ तुकोजीराव(१८४३-८६);८ शिवाजीराव(१८८६-१९०३);
९ तुकोजीराव (१९०३-चालू). हे सर्व क्रमानें एकाखालीं एक.

परिशिष्ट — आ.

२. हिंदुस्थानचे गव्हर्नर्स् जनरल.

१	वॉरन हेस्टिंग्स्	(स. १७७४–८५)
२	लॉर्ड कॉर्न्वॉलिस	(स. १७८५–९३)
३	सर जॉन शोअर	(स. १७९३–९८)
४	लॉर्ड वेल्स्ली	(स. १७९८–१८०५)
५	कॉर्न्वॉलिस (पुनः)	(स. १८०५)
६	सर जॉर्ज बार्लो	(स. १८०५–०७)
७	लॉर्ड मिंटो	(स. १८०७–१३)
८	लॉर्ड हेस्टिंग्स्	(स. १८१३–२३)
९	लॉर्ड ॲम्हर्स्ट	(स. १८२३–२८)
१०	लॉर्ड वुल्यम् बेंटिंक	(स. १८२८–३५)
११	सर चार्ल्स् मेट्काफ	(स. १८३५–३६)
१२	लॉर्ड ऑक्लंड	(स. १८३६–४२)
१३	लॉर्ड एलन्बरो	(स. १८४२–४४)
१४	लॉर्ड हार्डिंज	(स. १८४४–४८)
१५	लॉर्ड डल्हौसी	(स. १८४८–५६)
१६	लॉर्ड कॅनिंग	(स. १८५६–६२)
१७	लॉर्ड एल्गिन	(स. १८६२–६३)
१८	लॉर्ड लॉरेन्स	(स. १८६४–६९)
१९	लॉर्ड मेयो	(स. १८६९–७२)
२०	लॉर्ड नार्थब्रुक	(स. १८७२–७६)
२१	लॉर्ड लिटन	(स. १८७६–८०)
२२	लॉर्ड रिपन	(स. १८८०–८४)
२३	लॉर्ड डफरिन्	(स. १८८४–८८)
२४	लॉर्ड लॅन्स्डाउन	(स. १८८८–९४)
२५	लॉर्ड एल्गिन	(स. १८९४–९८)
२६	लॉर्ड कर्झन	(स. १८९८–१९०५)
२७	लॉर्ड मिंटो	(स. १९०५–१९१०)
२८	लॉर्ड हार्डिंज	(स. १९१०–१९१५)
२९	लॉर्ड चेम्सफर्ड	(स. १९१६ पासून)

परिशिष्ट—इ.

लढाइयां।

१ बीजापुर से मराठों का पहिला युद्ध ... (स. १६५९-१६६२)
२ औरंगजेब का राजपूतों से युद्ध ... ... (स. १६६९-१६८१)
३ मुगलों का मराठों से पहिला युद्ध... ... (स. १६६२-१६७२)
४ बीजापुर से मराठों का दूसरा युद्ध ... (स. १६७२-१६७३)
५ औरंगजेब का मराठों से दूसरा युद्ध ... (स. १६७७-१७०७)
६ शाहू का स्वकीयों से युद्ध ... ... (स. १७०८-१७१२)
७ कर्नाटक में अ. फ्रेंचों से पहिला युद्ध ... (स. १७४४-१७४८)
१ मद्रास फ्रेंचों के आधीन १७४५; २ एक्सलाचँपेल की सुलह १७४८.
८ कर्नाटक में दूसरा युद्ध ... ... (स. १७४९-१७५४)
१ अंबूर की लढाई १७४९; २ अर्काट पर चढाई १७५१.
३ श्रीरंगम की लढाई १७५२; ४ वाहूर की लढाई १७५२.
९ कर्नाटक में तीसरा अ. फ्रेंचों से दूसरा युद्ध... (स. १७५६-१७६३)
१ वांदिवाश की लढाई १७६० २ पांडिचेरीपर चढाई और जय १७६१
१० मीरकासिम से युद्ध ... ... (स. १७६३-१७६४)
१ घेरिया की लढाई १७६३; २ बक्सर की लढाई १७६४.
११ मैसूर से पहिला युद्ध ... ... (स. १७६७-१७६९)
१२ रोहिलों से अंग्रेजों का युद्ध ... ... (स. १७७४)
१३ अंग्रेजों का मराठों से पहिला युद्ध ... (स. १७७५-१७८२)
१ सूरत की सुलह १७७५; २ आरास की लढाइ १७७५.
३ पुरंदर की सुलह १७७६; ४ कारला की लढाई १७७९.
५ वडगांव की सुलह १७७९; ६ सालाबाई की सुलह १७८२.
१४ मैसूर से दूसरा युद्ध ... ... (स. १७८०-१७८४)
१ पोर्टोनोवो की लढाई २ शिवालिंगगड की लढाई १७८१.
३ मंगलूर पर चढाई १७८४; ४ मंगलूर की सुलह १७८४.
१५ मैसूर से तीसरा युद्ध ... ... (स. १७९०-१७९२)
१ अरिकेर की लढाई १७९१; २ श्रीरंगपट्टन की सुलह १७९२.

१ रामनगर १८४८; २ चिलियनवाला और ३ गुजरात १८४९.

२८ ब्रह्मी लोगों से दूसरा युद्ध ... ... (स. १८५२)

१ रंगून की लढाई; २ बेसिन की लढाई. ३ दक्षिण ब्रह्मदेश लिया.

२९ सिपाहियों का बलवा... ... ... (स. १८५७-१८५८)

३० अफगान लोगों से दूसरा युद्ध ... ... (स. १८७९-१८८१)

परिशिष्ट-ई.

स्मरणीय घटनाओं के साल।

शिशुनाग...	इ. स. पू.	६००
बिंबिसार राज्यारोहण	,,	५२८
महावीर जैनधर्मसंस्थापनका मृत्यू	,,	५२७
गौतम बुद्ध	,,	५६७-४८७
सिकंदर की सवारी...	,,	३२६—२५
चंद्रगुप्त मौर्य, राज्यारोहण	,,	३२२
अशोक	,,	२७३-२३२
शुंगवंश	,,	१८४—७२
विक्रमादित्य	,,	५६
कनिष्क	इसाई सन्	७८
चंद्रगुप्त	,,	३२०
समुद्रगुप्त	रा.	१२५
चंद्रगुप्त विक्रमादित्य	रा.	३७५
चीनी प्रवासी फा-हियान		३९९-४१३
कुमारगुप्त	रा.	४१३
स्कंदगुप्त विक्रमादित्य	रा.	४५५
आर्यभट्ट...	इ. स.	४७६
हर्षवर्धन शिलादित्य		६०६—६४८
चीनी प्रवासी हुएन्त्संग		६२९—६४५
शंकराचार्य		७१०—७४१

धार का भोजराजा परमार	१०१०–१०५३
महंमद पगंबर–जन्म ... ... इ. स.	५७०
महंमद कासिम की सोमनाथ पर सवारी	७११
महमूद की सोमनाथ पर सवारी	१०२४
तलवारी की लढाई...	११९१
स्थानेश्वर की लढाई	११९३
बहामनी राज्य की स्थापना	१३४७
तैमूरलंग की हिंदुस्थानं पर सवारी	१३९८
वास्को ड गामा का आगमन	१४९८
पानीपत की पहिली लढाई	१५२६
सीकरी की लढाई	१५२८
चक्सार की लढाई	१५३९
कनौज की लढाई	१५४०
सरहिंद की लढाई	१५५५
पानीपत की दुसरी लढाई	१५५६
तालिकोट की लढाई	१५६५
ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना	१६००
सर टामस रो की विकालत	१६१५
अंबोयना की कतल	१६२३
अहमदनगर का नाश	१६३७
मद्रास की स्थापना	१६३९
अफजुलखान का वध	१६५९
शिवाजी का सूरत पर हमला	१६६४
शिवाजी का दिल्ली को जाना	१६६६
बंबई–टापू कंपनी को मिलना	१६६८
शिवाजी का राज्याभिषेक	१६७४
औरंगजेब की दक्षिण देश पर सवारी	१६८३
बीजापूर का नाश	१६८६
गोलकोंडा का नाश	१६८

संभाजी का वध	१६८९
कलकत्ते की स्थापना	१६९८
राजाराम की मृत्यु	१७००
बालापूर की लढाई–गायकवाड का उदय	१७२०
निजामुउलमुल्क की हैदराबाद में राज्यस्थापना	१७२३
पालखेड की लढाई	१७२८
डभोई की लढाई	१७३१
भोपाल की लढाई	१७३८
नादिरशाह की सवारी	१७३८
वसई पर कब्जा	१७३९
अहमदशाह अब्दाली की सवारी, पहिली	१७४८
” ” ” दूसरी	१७५१
अर्काट का घेरा	१७५१
भालकी की लढाई	१७५२
कलकत्ते की काल–कोठरी	१७५७
प्लासी की लडाई	१७५७
अहमदशाह अब्दाली की सवारी, तीसरी	१७५९–६१
कुंजपूर की लढाई	१७५९
उद्गीर की लढाई	१७६०
पानीपत की तीसरी लडाई	१७६१
राक्षसभुवन की लढाई	१७६३
पटना की कतल	१७६३
नारायणराव पेशवा का वध	१७७३
दि रेग्यलेटिंग ऐक्ट	१७७३
फॉक्स और पिट के बिल (कानून)	१७८३–८४
त्रिवर्गों का मेल	१७८९
खर्डा की लढाई	१७९५
वेलोर का दंगा	१८०६
रणजीतसिंह से सुलह	१८०९

पेशवाई का अन्त	१८१८
त्रियगाँ की सुलह	१८३७
सिपाहियों का बलवा	१८५७
महारानी का घोषणापत्र	१८५८
महारानी विक्टोरिया की मृत्यु	१९०१
एडवर्ड बादशाह की मृत्यु	१९१०

परिशिष्ट—उ.

राजवंशों की मालिका।

१ गजनवी वंश (९६७–११८६)
२ गोरीवंश (११८६–१२०६)
३ गुलामवंश (१२०६–१२९०)
४ खिलजीवंश (१२९०–१३२०)
५ तुगलखवंश (१३२०–१४१४)
६ सैयदवंश (१४१४–१४५०)
७ लोदीवंश (१४५०–१५२६)
८ मुगलवंश (१५२६–१८०३)
९ बहामनी राज्य (स. १३४७–१५२६)
१० अहमदनगर की नीजामशाही (स. १४८९–१६३७)
११ बीजापुर की आदिलशाही (स. १४८९–१६८६)
१२ गोलकोंडा की कुतुबशाही (१५१२–१६८७)
१३ सितारा के छत्रपति (स. १६७४–१८४८)
१४ सितारा के छत्रपति के पेशवा (स. १७१४–१८१८)
१५ हैदराबाद के निजाम (स. १७२३—चालू)
१६ ग्वालियर के सेंधिया (स. १७५०—चालू)
१७ इंदोर के होलकर (स. १७५०—चालू)
१८ बड़ोदा के गायकवाड (स. १७२०—चालू)

१९ ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर्स् जनरल (स. १७७४–१८५८)
२० ब्रिटिश-वंश (स. १८५८—चालू)

२१ निजाम का वंश.

निजामुलमुल्क मृत्यु स. १७४८;
मुजफ्फरजंग मृत्यु स. १७५१;
निजामअली मृत्यु स. १८०३;
नसीरुद्दौला मृत्यु स. १८५७;
उस्मान अलीखान रा. स. १८६६;
नासिरजंग मृत्यु स. १७५०;
सलाबतजंग मृत्यु स. १७६१;
सिकंदरका मृत्यु स. १८२९;
अफ्जुद्दौला मृत्यु स. १८६९;
मीरमहबूब अलीखां मृत्यु स. १९११

२२ काश्मीर का वंश.

काश्मीर के महाराज.

गुलाबसिंह (१८४७–१८५७)
रणवीरसिंह (१८५७–१८८५)
प्रतापसिंह (१८८५–)

२३ मैसूर का वंश.

मैसूर के महाराज.

कृष्णराज वोडियार (१७९९–१८६८)
चामराजेन्द्र वोडियार (१८६८–१८९४)
कृष्णराज दूसरे (१८९५)

परिशिष्ट–ऊ.

राजकिय घटनाएं।

परिशिष्ट–ए.

प्रसिद्ध पुरुष।

परिशिष्ट–ऐ.

अन्य विषय।